श्रीधादर्श

३५

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, लखनऊ
जुलाई १९९८

संस्थापक एवं आद्य सम्पादक : (स्व.) डा० ज्योति प्रसाद जैन
प्रबन्ध/प्रधान सम्पादक एवं प्रकाशक : श्री अजित प्रसाद जैन
महामन्त्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ० प्र०
पारस सदन, आर्यनगर, लखनऊ–२२६ ००४
सम्पादक मंडल : डा० शशि कान्त, श्री रमा कान्त जैन

शोधादर्श-३५

जुलाई १९९८

★ विषय-क्रम ★

१.	गुरुगुण-कीर्तन : भट्ट अकलंक देव	—श्री रमा कान्त जैन	१०३
२.	सम्पादकीय : प्रधानमंत्री जी द्वारा समवसरण रथ का प्रवर्तन	—श्री अजित प्रसाद जैन	१०८
३.	सारस्वत सम्मान : क्यों और कैसे	—डा० ज्योति प्रसाद जैन	११४
४.	रिपोर्ट : सारस्वत सम्मान समारोह	—श्री नलिन कान्त जैन	११५
५.	संस्मरण–श्रद्धांजलि	—श्री अजित प्रसाद जैन	१२४
६.	राष्ट्र का वर्तमान परिदृश्य चिन्ताजनक	—श्री ज्ञान चन्द जैन	१२६
७.	सुभाषित		१३१
८.	समाज भयमुक्त क्यों नहीं	—श्री जौहरी मल जैन	१३२
९.	अध्यक्षीय सम्बोधन	—डा० अमर पाल सिंह	१३७
१०.	रिपोर्ट : डा० ज्योति प्रसाद जैन की पुण्यतिथि पर काव्य संध्या	—श्री अंशु जैन 'अमर'	१३८
११.	साहित्य की पठनीयता	—श्री गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी	१४१
१२.	महावीर कीर्तन	—डा० ज्योति प्रसाद जैन	१४३
१३.	वाणी वन्दना	—श्री रमा कान्त जैन	१४४
१४.	शाश्वत राग	—डा० शशि कान्त	१४४
१५.	रिपोर्ट : श्रुत-पंचमी और पुस्तकालय-स्थापना दिवस	—कु० हेमा सक्सेना	१४५
१६.	संस्मरण : ब्र० पंडिता विदुषी-रत्न श्रद्धेया चन्दाबाई	—श्रीमती सितारा देवी जैन	१४६
१७.	जैन संस्कृति : भारतीय डाक टिकटों पर	—श्री गुलाब चन्द्र जैन	१५२
१८.	पर्यावरण और जीवदया भारत में पशु-वध : सरकारी संरक्षण में	–श्री कैलाश भूषण जिन्दल	१५६

१९. प्रतिक्रिया : पिच्छि की मर्यादा का अवमूल्यन न हो
—श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन १५९
—श्री अजित प्रसाद जैन १६०
२०. जिज्ञासा —श्री शांतिलाल के० शहा १६२
२१. साहित्य सत्कार
जैन डायरी : अ० भा० जैन तीर्थ दर्शन, प्रतिष्ठा रत्नाकर,
जैन धर्म में देव दर्शन और चन्द्रवाड के चन्द्र प्रभु,
अध्यात्म योगी राम —श्री अजित प्रसाद जैन १६३
आचार्य कवि विद्यासागर का काव्य वैभव, सोनागिर वैभव,
प्राकृत भाषा—स्तबक प्रथम भाग, समवशरण पूजन विधान,
महाकवि आचार्य विद्यासागर की साहित्य साधना एवं शोध
सन्दर्शिका, महाकवि आ० ज्ञानसागर के हिन्दी साहित्य की मौलिक
विशेषतायें, म० आ० ज्ञानसागर के संस्कृत साहित्य में प्रकृति चित्रण,
म० आ० ज्ञानसागर अध्यात्म संदोहन, जिन बिम्ब पंचकल्याणक
प्रतिष्ठा एवं गजरथ महोत्सव स्मारिका, आस्था का दीप, लखनऊ
के दिवंगत जाने-अनजाने कवि —श्री रमा कान्त जैन १६९
जैन धर्म प्रवेशिका, सर्वोदयी जैन तन्त्र,
महावीर-विचार 'शोध और बोध', श्री महावीर जी का संक्षिप्त
इतिहास एवं कार्य-विवरण —डा० शशि कान्त १७५
२२. तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ० प्र०
प्रगति प्रतिवेदन वर्ष १९९७-९८ —श्री अजित प्रसाद जैन १८१
२३. चित्रावली—सम्मानित सारस्वत १८५
२४. परिचय : सम्मानित सारस्वत —डा० शशि कान्त
श्री अजित प्रसाद जैन, डा० अमर पाल सिंह १८९
श्री अमृत लाल नागर १९०
श्री कैलाश भूषण जिन्दल, श्री खुशाल चन्द्र गोरावाला १९१
श्री गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी, श्री जगजोत सिंह जैन १९२
श्री जौहरी मल जैन, डा० दरबारी लाल कोठिया १९३
डा० नन्द किशोर देवराज, श्री नर्मदेश्वर चतुर्वेदी १९४
श्री परिपूर्णानन्द वर्मा १९५
श्री प्रेम बिहारी, इतिहास-मनीषी डा० बहादुर चन्द्र छाबड़ा १९६
श्री महेश्वर पाण्डेय, श्री लक्ष्मी चन्द्र जैन १९७
सौ० लीलावती जैन, श्रीमती वासंती शहा १९८
श्री वीर नन्दन जिन्दल १९९
श्री शरत कुमार कौशिक. श्री शांतिलाल के० शहा २००

श्री श्रवण कुमार श्रीवास्तव, श्री श्री नारायण चतुर्वेदी २०१
श्री सत्यन्धर कुमार सेठी २०२
श्री सी० एम० अडवानी, श्री सी० के० नागराजा राव २०३
डा० सैयद इतिज़ा हुसैन, डा० हर्बर्ट वी० गुन्थर २०४
श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा, श्री ज्ञान चन्द्र द्विवेदी २०५
श्री ज्ञान चन्द जैन २०६
२५. समाचार विमर्श —श्री अजित प्रसाद जैन
दिगम्बर जैन समाज के शीर्ष नेताओं की बैठक २०८
शास्त्रि परिषद का वार्षिक अधिवेशन २१०
तीर्थ संरक्षिणी महासभा का गठन २१६
गोलाकोट मूर्ति तस्करी कांड २१६
२६. अभिनन्दन २२४
२७. समाचार विविधा २२५
२८. शोक संवेदन २३३
२६. आभार एवं सूचना २३४
३०. पाठकों की दृष्टि में २३५
पं० अमृत लाल जैन शास्त्री, श्री मोती लाल जैन 'विजय' एवं श्रीमती विमला जैन, डा० विनोद कुमार तिवारी, श्री राजेन्द्र नगावत, श्री गुलाब चन्द्र जैन, श्री सुखमाल चन्द जैन, ब्र० सन्दीप जैन 'सरल', डा० जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल, डा० (श्रीमती) मुन्नी पुष्पा सिंघई, श्री कुन्दन लाल जैन, श्रीमती राजदुलारी जैन, डा० विश्वनाथ याज्ञिक, डा० परमानन्द जड़िया, श्री हुकम चन्द जैन, डा० संतोष कुमार बाजपेई, डा० ए० एल० श्रीवास्तव, श्री शांतिलाल के० शहा, श्री मदन मोहन वर्मा, प्रो० रमेश चन्द्र शर्मा, श्री निर्मल सेनानी, श्री पद्म कुमार जैन, श्री तिलोक मुनि जी, श्री किरण कुमार जैन, प्रा० डा० सौ० हेमलता जोहरापुरकर, श्री सुन्दर सिंह जैन, श्री प्रकाश पालावत, जस्टिस श्री एम० एल० जैन
३१. पंडिता चन्दाबाई जी के पत्र की अनुकृति २४३
३२. इस अंक के लेखक २४४

मूल्य १५ रु०
वार्षिक शुल्क ४० रु० (मनीआर्डर द्वारा प्रेष्य)

आवश्यक

कृपया वर्ष १९९८ का वार्षिक शुल्क ४० रु० (चालीस रुपये) मनीआर्डर द्वारा 'महामंत्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति उ. प्र., ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-२२६००४' को यथाशीघ्र भेजने का अनुग्रह करें।

—प्रबन्ध सम्पादक

आवश्यक सूचना

शोधादर्श चातुर्मासिक पत्रिका है और सामान्यतया इसके अंक मार्च, जुलाई व नवम्बर में प्रकाशित होते हैं।

शोधादर्श में प्रकाशनार्थ शोधपरक एवं अप्रकाशित लेख आमन्त्रित हैं। लेख कागज के एक ओर सुवाच्य अक्षरों में लिखित अथवा टंकित होना चाहिए और उसमें यथावश्यक सन्दर्भ/स्रोत सूचित किये जाने चाहिएं। यथासम्भव लेख ३–४ टंकित पृष्ठ से अधिक न हो। **लेख की एक प्रति अपने पास अवश्य रख लें।**

शोधादर्श में **समीक्षार्थ** पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं की **दो प्रतियां** भेजी जायें।

शोधादर्श में प्रकाशित लेखों को उद्धरित किये जाने में आपत्ति नहीं है, परन्तु **शोधादर्श** का श्रेय स्वीकार किया जाना और पूर्ण सन्दर्भ दिया जाना अपेक्षित है।

प्रकाशनार्थ लेख और समीक्षार्थ पुस्तक / पत्रिका सम्पादक को 'ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-२२६००४' के पते पर भेजे जायें।

लेखक के विचारों से सम्पादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। लेखों में दिये गये तथ्यों और सन्दर्भों की प्रामाणिकता के संबंध में लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

सभी विवाद लखनऊ में स्थित सक्षम न्यायालयों/न्यायाधिकरणों के क्षेत्राधिकार के अधीन होंगे।

—प्रबन्ध सम्पादक

निवेदन

सुधि पाठक कृपया अपनी सम्मति और सुझावों से अवगत करावें ताकि पत्रिका के स्तर को बनाये रखने और उन्नत करने में हमें प्रोत्साहन तथा उद्बोधन प्राप्त होता रहे। कृपया पत्रिका पहुंचने की सूचना भी देवें।

— सम्पादक मण्डल

मुद्रक : रत्न-ज्योति प्रेस, चारबाग, लखनऊ-४ (उ० प्र०)

णाणं णरस्स सारं - सच्चं लोयम्मि सारभूयं

शोधादर्श-३५

वीर निर्वाण संवत् २५२४ जुलाई १९९८ ई०

गुरुगुण-कीर्तन

भट्ट अकलङ्क देव

प्रमाणमकलङ्कस्य पूज्यपादस्य लक्षणम् ।
धनञ्जय कविः काव्ये रत्नत्रयमपश्चिमम् ।।

—धनञ्जय : **नाममाला** (८वी शती ई०)

भावार्थ—अकलङ्क का प्रमाण, पूज्यपाद का व्याकरण और काव्य में धनञ्जय कवि, ये तीन अपश्चिम रत्न हैं ।

भट्टाकलङ्कश्रीपालपात्रकेसरिणां गुणाः ।
विदुषां हृदयारूढा हारायन्तेऽतिनिर्मलाः ।।

—आचार्य जिनसेन : **आदिपुराण** (९वीं शती ई०)

भावार्थ—भट्ट अकलङ्क, श्रीपाल और पात्रकेसरि के अति निर्मल गुण विद्वज्जन के हृदय पर हार (मणिमाला) की तरह सुशोभित होते हैं ।

यन्नाम ग्रहणान्नष्टाः सदर्पावादि कुञ्जराः ।
जीयाद्देवोऽकलंकोऽसौ परवादीभ केसरी ।।

—मल्लिषेण सूरि : **महापुराण** (१०४७ ई०)

भावार्थ—जिनका नाम लेते ही दर्प के साथ वाद-विवाद करने वाले कुञ्जर (हाथी) नष्ट हो जाते हैं, उन दूसरे मतों के वादविवाद (शास्त्रार्थ) करने वाले हाथियों के लिये केसरी (सिंह) तुल्य अकलंक देव की जय हो ।

अकलङ्कगुरुर्जीयादकलङ्कपदेश्वरः ।
बौद्धानांबुद्धिवैधव्यदीक्षागुरुरुदाहृतः ।।

—ब्रह्म अजित : **हनुमच्चरित** (१४४५ ई०)

भावार्थ—कलंक रहित वाणी के स्वामी उन अकलङ्क गुरु की जय हो जिनका उदाहरण बौद्धों (बौद्ध विद्वानों) की बुद्धि को वैधव्य दीक्षा देने वाले गुरु के रूप में दिया जाता है।

जीयात् समन्तभद्रस्य देवागमन संज्ञिनः।
स्तोत्रस्य भाष्यं कृतवानकलङ्को महर्द्धिकः॥

—वर्धमान मुनीन्द्र : **दशभक्त्यादि महाशास्त्र** (१५४२ ई०)

भावार्थ—समन्तभद्र के **देवागम** नामक स्तोत्र का भाष्य जिन्होंने किया उन महर्द्धिक अकलङ्क की जय हो।

यद्यपि जैन परम्परा में अकलंक नाम के लगभग दो दर्जन आचार्य, विद्वान, मुनि हुए हैं जिनका परिचय-विवरण डा० ज्योति प्रसाद जैन ने अपने "**जैन-ज्योति : ऐतिहासिक व्यक्तिकोश - प्रथम खण्ड**" में पृष्ठ ३–६ पर दिया है, उपर्युक्त श्लोकों में जिन अकलङ्क, भट्ट अकलङ्क, अकलंक देव या महर्द्धिक अकलङ्क का सादर स्मरण किया गया है अथवा गुणगान किया गया है वे उक्त विवरण में क्रमांक १ पर उल्लिखित अकलङ्कदेव या भट्टाकलङ्कदेव हैं जिनका समय ७वीं शती ईस्वी माना गया है। शेष अकलंक ११वीं शती ईस्वी के उपरान्त के विद्वान बताये जाते हैं।

विवेच्य अकलङ्कदेव को आचार्य उमास्वामि (प्रथम शती ई०) **के तत्त्वार्थसूत्र** पर **तत्त्वार्थराजवार्तिक टीका**, आचार्य समन्तभद्र (दूसरी शती ई०) की **आप्तमीमांसा** अपरनाम **देवागम स्त्रोत** पर **अष्टशती टीका** तथा स्वतन्त्र ग्रन्थों के रूप में **स्वोपज्ञवृत्तिसहित लघीयस्त्रय, न्यायविनिश्चय सवृत्ति, सिद्धिविनिश्चय सवृत्ति** तथा **प्रमाणसंग्रह सवृत्ति** की रचना करने का श्रेय है।

इनकी कृतियों से स्पष्ट है कि उन्हें बौद्ध दर्शन व अन्य भारतीय दर्शनों का प्रगाढ़ ज्ञान था और पूर्ववर्ती जैनाचार्यों के साहित्य से वह भलीभांति परिचित थे। **पातञ्जलि महाभाष्य** (ल. १५० ई. पू.) की अकलंक ने आलोचना की है। शब्दाद्वैतवादी या स्फोटवादी भर्तृहरि (५९०-६५० ई.) के **वाक्यपदीय** ग्रन्थ से अकलंक ने उद्धरण भी दिये और उनके मत का खण्डन भी किया। बौद्धाचार्य वसुबन्धु

(चौथी शती ई.) के **अभिधर्मकोश** से अकलंक ने प्रमाण उद्धृत किये हैं। बौद्ध दार्शनिक दिङ्नाग (३४५-४२५ ई.) के मत का उन्होंने उल्लेख किया है और उनके **प्रमाणसमुच्चय** ग्रन्थ से कारिका भी उद्धृत की हैं। बौद्ध विद्वान धर्मकीर्ति (६३५-६५० ई.) के ग्रन्थों का अकलंक ने अच्छा मन्थन किया प्रतीत होता है; अपनी कृतियों में कहीं-कहीं उनकी शैली भी अपनायी है और उनका खण्डन भी किया है। जैनाचार्य श्रीदत्त (ल. चौथी शती ई.) के **जल्पनिर्णय** का अकलंक के **सिद्धिविनिश्चय** के **जल्पसिद्धि अधिकार** पर प्रत्यक्ष प्रभाव रहा बताया जाता है और कहा जाता है कि उन्होंने उमास्वामि के **तत्त्वार्थाधिगम सूत्र** पर अपनी **तत्त्वार्थराजवार्तिक** में देवनन्दी पूज्यपाद (४७५-५२५ ई.) की **सर्वार्थसिद्धि टीका** को समाहित किया है। बौद्ध दार्शनिक दिङ्नाग के **त्रिलक्षण-सिद्धान्त** के खण्डन में पात्रकेसरि स्वामी द्वारा लिखे गये **त्रिलक्षण-कदर्थन** ग्रन्थ से उद्धरण भी उन्होंने दिये हैं। कहा जाता है कि समसामयिक मीमांसक विद्वान कुमारिल भट्ट (६००-६६० ई.) ने अपने **श्लोकवार्तिक** में अकलंक की **अष्टशती** पर कटाक्ष किये थे और उनका प्रत्युत्तर अकलंक ने कुमारिल भट्ट को अपने **न्यायविनिश्चय** में दिया था।

अनेक परवर्ती आचार्यों, विद्वानों और साहित्यकारों ने अपनी कृतियों में इन अकलंक देव का सादर स्मरण या उल्लेख किया है अथवा उनकी कृतियों से उद्धरण आदि दिये हैं : उपलब्ध साहित्यिक उल्लेखों से विदित होता है कि यह भट्ट अकलंक देव दिगम्बर और श्वेताम्बर उभय आम्नायों के विद्वानों के समान रूप से श्रद्धाभाजन रहे और इनकी कृतियां विद्वानों के लिए प्रेरणा-स्रोत रहीं। फल-स्वरूप उन पर टीकाएं, वृत्तियां एवं भाष्य रचे जाते रहे और उनकी कृतियों से उद्धरण दिये जाते रहे। सातवीं शती में ही इनकी कृति **सिद्धिविनिश्चय** को 'प्रभावक शास्त्र' घोषित कर दिया गया था और आठवीं शती में इनका प्रमाण 'अपश्चिम रत्न' माना जाने लगा था; श्वेताम्बर आचार्य इनके द्वारा प्रतिपादित 'न्याय शास्त्र' को 'अकलङ्क न्याय' के नाम से अभिहित करने लगे थे।

परवर्ती साहित्यिक उल्लेखों के अतिरिक्त दक्षिण भारत में, विशेषकर कर्णाटक प्रदेश में, प्राप्त १०वीं शती ईस्वी से १६वीं शती ईस्वी तक के कम से कम २८ शिलालेखों में विवेच्य अकलंक देव का स्पष्ट नामोल्लेख के साथ स्मरण किया गया है और उनका गुणगान भी हुआ है।

संस्कृत में **अकलंकस्तोत्र** नाम से १६ पद्यों की एक लघु रचना भी प्राप्त हुई हैं। इसे भी कुछ विद्वान अकलंक की कृति मानते हैं। इसके १३वें पद्य में यह उल्लेख है कि उन्होंने राजा हिमशीतल की सभा में बौद्ध विद्वानों का भाण्डा फोड़ कर उन्हें शास्त्रार्थ में पराजित किया था। उक्त श्लोक श्रवणबेलगोला में शक संवत् १०५० (११२८ ई०) के एक स्तम्भ लेख तथा बोगादि में प्राप्त शक १०६७ (११४५ ई०) के शिलालेख में भी पाया गया है। शक १०५० के उक्त स्तम्भ लेख में, जो द्रमिलसंघ-नन्दिगण-अरुङ्गलान्वय के मल्लिषेण मलधारि की स्मारक प्रशस्ति है, बौद्ध विद्वानों को शास्त्रार्थ में परास्त करने की घटना को राजा साहसतुंग को सुनाने का उल्लेख भी है। **अकलंकस्तोत्र** में उक्त वाद-विजय का वर्ष निम्नवत अंकित है—

"विक्रमांक शकाब्दीय, शतसप्त प्रमाजुषि।
कालेऽकलङ्क यतिनोंबौद्धवादो महानभूत् ॥"

इस श्लोक में प्रयुक्त 'विक्रमांक शकाब्दीय' शब्दों के कारण कतिपय विद्वानों ने इसे शक संवत् ७०० अर्थात् ७७८ ई० और कुछ अन्य ने विक्रम संवत् ७०० अर्थात् ६४३ ई० माना है और इस प्रकार विवेच्य अकलङ्कदेव के समय के सम्बन्ध में मुख्यतया दो मत हो गये जिनमें १३५ वर्ष का अन्तर है। कुमारिल भट्ट (६००-६६० ई०) द्वारा इनकी **अष्टशती** पर किये गये कटाक्ष तथा ६७६ ई० में **निशीथचूर्णि** में जिनदासगणि महत्तर द्वारा इनकी कृति **सिद्धिविनिश्चय** को 'प्रभावक शास्त्र' घोषित किये जाने के तथ्य को लक्षित करते हुए ऐतिहासिक वाद-विवाद विक्रम संवत् ७०० अर्थात् ६४३ ई० में हुआ था, मानना समीचीन होगा।

डा० ज्योति प्रसाद जैन ने अकलंक के आश्रयदाता राजा साहसतुंग के पश्चिमी चालुक्य सम्राट विक्रमादित्य प्रथम (६४२-६६८ ई०), जो पुलकेशिन् द्वितीय (६०६-६४२ ई०) का पुत्र एवं उत्तराधिकारी था, से अभिन्न होने की सम्भावना व्यक्त की है। उनके अनुसार अकलंक अनुश्रुति के राजा हिमशीतल चीनी यात्री ह्वेनसांग के भारत भ्रमण (६४३ ई०) के समय में विद्यमान कलिंग नरेश 'त्रिकलिंगाधिपति' प्रतीत होते हैं जिनकी राजसभा में रत्नपुर में महायानी बौद्ध विद्वानों से उक्त ऐतिहासिक वाद-विवाद ६४३ ई० में हुआ था। अकलंक के गुरु रविगुप्त को उन्होंने ऐहोल शिलालेख (६३४ ई०) के रचयिता रविकीर्ति से चीन्हा है और कन्हेरी के बौद्ध मठ में अकलंक द्वारा बौद्ध दर्शन का अध्ययन करने का उल्लेख किया है। (दृष्टव्य, The Jaina Sources of the History of Ancient India)।

परवर्ती साहित्यकारों द्वारा जिन्हें 'पूज्यपाद भट्टारक', 'देव', 'भट्टाकलङ्क', 'तार्किकलोकमस्तकमणि', सकलतार्किक चक्र-चूड़ामणि', 'वादिसिंह तर्क भूवल्लभ देव', 'इतर मतावलम्बी गजेन्द्रों का दर्प नष्ट करने वाला सिंह', 'परवादीभ केसरी', महा-प्रज्ञ', 'महर्द्धिक' आदि विविध सम्बोधनों, विशेषणों और विरुदों से अभिहित किया गया, तथा न्याय-शास्त्र और व्याकरण में पण्डित माने जाने वाले इन अकलंकदेव के ब्राह्मण कुलोत्पन्न होने की कथाएं भी प्रचलित हुई, किन्तु स्वयं अकलंक ने **तत्वार्थराजवार्तिक** की प्रशस्ति में अपने को लघुहव्व नृपति का तनय सूचित किया है; यह लघुहव्व नृपति कौन थे, कहाँ के थे और किस कुल के थे, ये प्रश्न अभी अनुत्तरित हैं। इतना निश्चित है कि विवेच्य अकलंकदेव दक्षिण भारत के रहने वाले थे। परम्परा-अनुश्रुति उन्हें देवगण का आचार्य सूचित करती है और कर्णाटकीय अनुश्रुति उन्हें देशीगण पुस्तक-गच्छ का।

इनके **प्रमाणसंग्रह** का मंगल श्लोक—

(शेष पृष्ठ ११३ पर)

सम्पादकीय

प्रधानमंत्री जी द्वारा समवशरण रथ का प्रवर्तन

सम्यग्ज्ञान, अप्रैल-जून १९९८, के पृ० २८-२९ पर प्रकाशित समाचार :

"दिनांक ९ अप्रैल। विश्ववंद्य भगवान महावीर स्वामी की जन्म-जयन्ती की पावन बेला में जैन समाज की वरिष्ठ साध्वी, परम पूज्य, गणिनी प्रमुख, श्री ज्ञानमती माताजी से शुभाशीर्वाद प्राप्त कर राजधानी दिल्ली के तालकटोरा स्टेडियम से भारत के लोकप्रिय प्रधानमन्त्री माननीय अटल बिहारी बाजपेयी ने 'भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार' रथ का भारत भ्रमण हेतु प्रवर्तन किया।

इस शुभावसर पर समवसरण रथ की सम्प्रेरिका श्री ज्ञानमती माताजी ने उपस्थित जनसमूह एवं प्रधानमन्त्री को सम्बोधित करते हुए कहा कि पुराणो में वर्णन में आता है कि जिस देश का आश्रय लेकर साधु सन्त तपस्या करते हैं, उस देश के राजा को उनकी तपस्या का छठा भाग स्वयंमेव प्राप्त हो जाता है, इस शृंखला में हमारे बाजपेयी जी हम लोगों की त्याग-तपस्या का पुण्य बिना परिश्रम किये ही प्राप्त कर रहे हैं। आज भगवान महावीर स्वामी के जन्म-जयन्ती समारोह के अवसर पर आदि ब्रह्मा भगवान ऋषभदेव के समवसरण का जो प्रवर्तन कर रहे हैं वह भी देश की राजनीति के लिए एवं समस्त जनता के लिए मंगलमय क्षेमकारी होगा।.....सभा में प्रधानमन्त्री श्री बाजपेयी जी ने.....जनता को सम्बोधित करते हुए कहा कि.....जो रथ देश भर में भ्रमण करने जा रहा है, मैं उसका हृदय से स्वागत करता हूँ और सभी प्रदेशों में विश्व बन्धुत्व का पाठ पढ़ाने वाले इस रथ को सभी प्रदेशों में राजकीय सम्मान प्राप्त होगा यह मैं आश्वासन प्रदान करता हूँ। .....इस कलियुग में हम लोगों को सन्तों के तप के छठे भाग फल से भी ज्यादा मिलने की आवश्यकता है। क्योंकि कलियुग में समस्यायें ज्यादा हैं।.....

समवसरण श्रीविहार की राष्ट्रीय समिति ने प्रधानमंत्री जी के करकमलों में भगवान ऋषभदेव के स्वर्णमयी चरण कमलों की एक सुन्दर प्रतिकृति समर्पित की.....प्रधानमन्त्री जी ने रजत श्रीफल एवं रत्नों से युक्त पूजन द्रव्य से समवसरण का पूजन किया, उसके पश्चात असली हीरे, जवाहरातों के द्वारा पुष्पवृष्टि की। उन पवित्र रत्नों में से कुछ माननीय श्री अटल बिहारी बाजपेयी जी को भी भेंट किये गये, जिसे उन्होंने समाज के वरिष्ठ महानुभावों को पुनः वितरित कर दिए।.....

समिति के अध्यक्ष ब्र० श्री रवीन्द्र कुमार जी जैन ने अपने वक्तव्य में प्रधानमन्त्री जी से जैन समाज एवं जनहित को दृष्टि में रखते हुए कुछ माँगें प्रस्तुत की जिनमें प्रमुखता से चैत्र कृष्ण नवमी, ऋषभ जयन्ती की तिथि को 'अहिंसा दिवस' के रूप में सार्वजनिक अवकाश घोषित करने तथा देश के किसी नेशनल हाईवे (राष्ट्रीय राजमार्ग) का नामकरण 'ऋषभदेव' के नाम पर करने की बात कही।''

पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माता जी की प्रेरणा से एवं मार्ग-दर्शन में प्रवर्तित भगवान ऋषभदेव समवसरण श्री विहार रथ का हम भी अभिनन्दन करते हैं तथा कामना करते हैं कि इस रथ का प्रवर्तन धर्म व संस्कृति के आदि प्रस्तोता प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव तथा उनके सुपुत्र प्रथम चक्रवर्ती सम्राट महाराजा भरत (जिनके नाम से ही इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा) की प्रामाणिक ऐतिहासिकता से एवं उनके महान् सांस्कृतिक तथा धार्मिक योगदान से देश की बहुसंख्यक जनता को व्यापक रूप से परिचित कराने में सहायक सिद्ध होगा।

इस रथ प्रवर्तन के आयोजकों को हमारा यह भी सुझाव है कि यदि इसका लाभ शाकाहार के व्यापक प्रचार तथा मांस निर्यात के विरोध में प्रबल जन समर्थन जुटाने में लिया जाय तो इसकी सार्थकता कहीं अधिक बढ़ जाएगी। यदि उन्हें यह स्वीकार्य हो, तो इसका क्रियान्वयन निम्न प्रकार किया जा सकता है—

(१) प्रत्येक नगर/उपनगर में जहां रथ का प्रवर्तन हो वहां एक विशाल सार्वजनिक सभा का आयोजन प्रमुखता से किया जाय जिसमें स्थानीय विद्वानों का भी भरपूर सहयोग लिया जाय। उपस्थित जन समुदाय से (विशेषकर अन्य धर्मावलम्बी महानुभावों से) शाकाहार अपनाने के लिए तथा चर्म वस्तुओं का उपयोग न करने के लिए प्रतिज्ञा-पत्र भरवाएं जाएं।

(२) सभा में मांस निर्यात के तथा नई पशुवध शालाएं खोले जाने के विरोध में प्रस्ताव पास कराया जाय। प्रस्ताव की प्रतियां (अन्यों के अतिरिक्त) जिलाधिकारी व केन्द्र सरकार को भेजी जाएं।

(३) सभा में भगवान ऋषभदेव तथा प्रथम चक्रवर्ती सम्राट महाराज भरत के धार्मिक-सांस्कृतिक योगदान पर एकाधिक विद्वानों द्वारा विशद प्रकाश (पौराणिक शैली से हट कर) डाला जाय।

(४) सभा स्थल पर एक शाकाहार प्रदर्शनी का भी आयोजन किया जाय तथा प्रदर्शनी देखने आए दर्शकों में अण्डे व मांसाहार से हानि दर्शाने वाले पत्रक निःशुल्क वितरित किए जाएं। प्रदर्शनी के साथ भगवान ऋषभदेव एवं शाकाहार सम्बन्धी साहित्य के अल्प मूल्य पर बिक्री की व्यवस्था भी रहनी चाहिए।

उपरोक्त कार्यक्रम के सफल निष्पादन के लिए यह भी आवश्यक है कि इस रथ के साथ जो विद्वान नियुक्त किए जाएं वे कुशल वक्ता हों तथा विषय को वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करने की क्षमता रखते हों।

अतीत में पूज्य माता जी की सत्प्रेरणा एवं कुशल मार्ग-दर्शन में सम्पन्न हुए इसी प्रकार के आयोजनों में आयोजक गण विभिन्न बोलियों के माध्यम से विपुल धन संग्रह करने में समर्थ हुए हैं। **सम्यग्ज्ञान** पत्रिका के परिशीलन से ज्ञात होता है कि 'भगवान ऋषभदेव समवशरण श्री विहार रथ' के प्रत्येक नगर/उपनगर/कालोनी में प्रवर्तन के लिए कम से कम छह बोलियां (यथा, सौधर्म इन्द्र, कुबेर इन्द्र, भरत चक्रवर्ती, राजा श्रेयांस, सर्वाण्ह देव तथा

आरती) निर्धारित की गई हैं। हमारा पूज्य माता जी एवं इस रथ प्रवर्तन के आयोजकों से विनम्र निवेदन है कि इन बोलियों का मुख्य उद्देश्य अधिकाधिक धन खींचना मात्र न रख कर इन्हें (या कम से कम एक-भव-अवतारी सौधर्म इन्द्र, भरत चक्रवर्ती तथा राजा श्रेयांस की बोलियों को) ऐसे सुश्रावकों तक ही सीमित रखें जो शाकाहार का कडाई से पालन करते हों, चर्म-वस्तुओं के उपयोग का त्याग किए हों, रात्रि भोजन का त्याग भी किए हों तथा जिन्हें नित्य देव दर्शन का नियम हो। बोलियों से संग्रहीत द्रव्य का उपयोग रथ प्रवर्तन के व्यय के अतिरिक्त सार्वजनिक सभाओं के आयोजन-संचालन पर करना ही उचित होगा।

यद्यपि अभी तक ऐसे धार्मिक महा-आयोजनों के भारी आय-व्यय के लेखा-जोखा को समाज के सम्मुख प्रस्तुत करने की अपनी समाज में कोई प्रथा नहीं रही है पर यदि ऐसी प्रथा का शुभारम्भ भगवान ऋषभदेव समवशरण श्री विहार रथ प्रवर्तन से कर दिया जाय तो वह इस महा-आयोजन की एक अविस्मरणीय उपलब्धि होगी।

रथ प्रवर्तन समिति के अध्यक्ष जी ने इस सुअवसर पर प्रधान मन्त्री जी के समक्ष जैन समाज की ओर से दो मागें भी प्रमुखता से रखीं—(१) ऋषभ जयन्ती की तिथि को अहिंसा दिवस के रूप में सार्वजनिक अवकाश घोषित किया जाना, तथा (२) किसी राष्ट्रीय राजमार्ग का नाम भगवान ऋषभदेव के नाम पर रखा जाना। भगवान ऋषभदेव ने मानवीय श्रम पर आधारित संस्कृति का सूत्र-पात किया था जिसने भोगभूमि को कर्मभूमि में परिवर्तित किया। उनके जन्म दिवस को 'श्रम दिवस' के रूप में मनाये जाने की मांग करना कदाचित् अधिक उचित होता।

क्या ही अच्छा होता यदि इस अवसर का लाभ इन छोटी-मोटी मांगों के स्थान पर (या इनके अतिरिक्त) जैन समाज को धार्मिक अल्प संख्यक समुदाय की मान्यता दिये जाने, मांस निर्यात को बढ़ावा न दिये जाने, नई पशुवध शालाओं की स्थापना पर रोक

लगाये जाने, टेलीविज़न पर अण्डे व मांसाहार के प्रचार की रोक-थाम विषयक मांगें प्रस्तुत की जातीं। इन मांगों पर कम से कम समस्त दिगम्बर जैन समाज तो एकमत है ही। यह भी कैसी विडम्बना है कि जिस समारोह में दिगम्बर जैन समाज के प्राय: सभी शीर्ष नेता मौजूद रहे हों उसमें इन ज्वलन्त विषयों पर दो शब्द भी किसी समाज नेता के द्वारा न बोले गये हों।

पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माता जी का पुराण-शास्त्रों का अध्ययन गहन है तथा हम जैसे अल्पज्ञ उनके कथन में संशय करने की धृष्टता नहीं कर सकते। तथापि उनका यह कथन कि "पुराणों में यह वर्णन आता है कि जिस देश का आश्रय लेकर साधु-सन्त तपस्या करते हैं, उस देश के राजा को उनकी तपस्या का छठा भाग स्वयमेव प्राप्त हो जाता है, इस शृंखला में हमारे बाजपेयी जी हम लोगों के त्याग-तपस्या का पुण्य बिना परिश्रम ही प्राप्त कर रहे हैं," यदि जैन पुराण शास्त्रों के संदर्भ से किया गया है तो जैन दर्शन-सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में कुछ विचित्र ही लगता है क्योंकि जैन कर्म सिद्धान्त के अनुसार तो सभी जीव अपने ही उपार्जित कर्म-फल को पाते हैं, उसके सिवा कोई कभी भी किसी को कुछ नहीं देता ('निजार्जितं कर्म विहाय न कोऽपि कस्यपि ददाति किंचनम्'—आचार्य अमितगति) तथा साधु-सन्त भी जो त्याग-तपस्या करते हैं, वह अपने संयम की पुष्टि एवं कर्मों की निर्जरा के लिए ही करते हैं। हां, वैदिक परम्परा के पुराण-शास्त्रों, स्मृति-संहिता ग्रन्थों में इस प्रकार के कथन सामान्य रूप से मिलते हैं। वहां राजा को प्रजा के श्रम-फल के एक भाग पर स्वयमेव अधिकार प्राप्त हो जाता है जिसे वह कृषक से भू लगान के रूप में तथा व्यापारी और कारीगर से विभिन्न करों के रूप में वसूलता है। उसी शृंखला में राजा को ऋषि-मुनियों की तपस्या के पुण्य फल के एक भाग का भी अधिकारी स्वयमेव ही माना गया है। हो सकता है कि किसी ब्राह्मण कुलोत्पन्न मध्य युगीन आचार्य/भट्टारक स्वामी ने जैन परम्परा के स्वरचित पुराण-कथा साहित्य में अपने जातिगत संस्कारों वश इस

प्रकार का कथन डाल दिया हो पर इससे वह जैन धर्म के सिद्धान्तों के अनुकूल तो हो नहीं जाता।

इस सन्दर्भ में यह भी ध्यान देने योग्य है कि इस देश से राजतन्त्र को बिदा लिये पचास वर्ष हो गये हैं और अब न यहां कोई राजा है और न कोई उसकी प्रजा। फिर भी राजा के समकक्ष यदि किसी राजनयिक को माना जा सकता है तो वह केवल राष्ट्रपति ही हो सकते हैं जिन्हें कदाचित् इंग्लैंड के राजा/रानी से भी कुछ अधिक ही अधिकार प्राप्त हैं, न कि देश के प्रधान मन्त्री को।

प्रधान मन्त्री जी से रजत श्रीफल एवं रत्नों से युक्त पूजन द्रव्य से वीतराग भगवान के समवशरण की पूजा कराना तथा तदनन्तर असली हीरे-जवाहरात के द्वारा पुष्प वृष्टि कराना माता जी के भक्तों द्वारा अपने वैभव का प्रदर्शन मात्र ही कहा जायेगा। ऐसे प्रदर्शनों का जिनेन्द्र भक्ति में कोई महत्व नहीं है।

—अजित प्रसाद जैन

(पृष्ठ १०७ का शेष)

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

इतना लोकप्रिय हुआ कि उसे कर्णाटक प्रदेश में प्राप्त ८वीं शती ईस्वी से १२वीं शती ईस्वी तक के अधिकांश जैन अभिलेखों और शिलालेखों में मंगलाचरण स्वरूप अपनाया गया। यही नहीं, दक्षिण भारत में मध्यकाल में रचे गये अनेक ग्रन्थों में भी यह मंगलाचरण के रूप में प्रयुक्त हुआ और कितने ही जैनेतर अभिलेखों में भी इसे मात्र इस संशोधन के साथ कि 'जिनशासनम्' के स्थान पर 'शिवशासनम्' प्रतिस्थापित कर दिया गया, अपनाया गया।

अपने समय से लेकर आज तक अविरल विद्वज्जन को अपने पांडित्य से मुग्ध करने वाले तथा 'परम गम्भीर स्याद्वाद जिसकी निर्विवाद पहचान है ऐसे जिनशासन' की चिरकाल तक प्रभावना करने वाले सातवीं शती ईस्वी में हुए इन महान आचार्य भट्ट अकलंक देव को हमारा शत-शत नमन है।

—रमा कान्त जैन

सारस्वत सम्मान : क्यों और कैसे

—डा० ज्योति प्रसाद जैन

(१० मई, १९८७, को विद्वत्-सम्मान संगोष्ठी में सम्बोधन)

ॐकारं विन्दु संयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ।
कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमो नमः ।।

इस समारोह के आयोजकों ने **गुणिषु प्रमोदं** की भावना से प्रेरित होकर, अपने-अपने क्षेत्र में जिन विद्वानों ने, जिन सज्जनों ने, साहित्यिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक या समाज सेवा अथवा जन सेवा के क्षेत्र में स्वान्तः सुखाय कीर्तिमान स्थापित किये हैं—विशिष्ट उपलब्धियां प्राप्त की हैं, उनका सम्मान करके अपने गुणानुवाद का परिचय दिया है। हम गुणानुवादी होंगे तो गुणों की वृद्धि होगी, गुणों को प्रोत्साहन मिलेगा।

इस समारोह का उद्देश्य अपनी कृतज्ञता का ज्ञापन करना है कि हम पर इन सभी महानुभावों का जो सभी बुद्धिजीवी हैं और प्रबुद्ध हैं, यह ऋण है कि ये अपने विद्या व्यसन में स्वान्तः सुखाय लगे हुए हैं और कार्य करते चले आ रहे हैं। ज्ञान का अपार समुद्र है—सागर है। लेकिन उसमें भी वृद्धि इस सागर के सेवक ये साहित्य सेवी लोग करते हैं, कर रहे हैं। कुछ जन सेवक है, कुछ अध्यापक—प्राध्यापक—शिक्षक हैं, कुछ समाज सेवा कर रहे हैं। सब अपना कार्य स्वान्तः सुखाय कर रहे हैं। इन सबकी समाज को आवश्यकता है। ये सभी अभिनन्दनीय हैं—सभी श्लाघनीय कार्य कर रहे हैं समाज के और जन हित के लिए स्व-पर कल्याण की भावना से।

हमने शुरू में जो भगवान का — अपने इष्ट देव का, स्मरण किया वहां भी कामदा मोक्षदा, अभ्युदय और निःश्रेयस दोनों की प्राप्ति के लिए प्रार्थना की गई है। मनुष्य के जीवन में यही दो चीजें हैं—अभ्युदय हो और निःश्रेयस की प्राप्ति हो, और इसके साधन में जितने भी लोग लगे हुए हैं, इसमें अपना योगदान दे रहे हैं, वे सब अभिनन्दनीय हैं—पूज्य हैं, हम सब उनका आदर करते हैं, सम्मान करते हैं। यह अवसर भी आ गया यह मेरा बड़ा सौभाग्य है जो मैं शब्दों में बयान नहीं कर सकता।

रिपोर्ट :

सारस्वत सम्मान समारोह

अनन्त-ज्योति विद्यापीठ और **ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट** के संयुक्त तत्त्वावधान में ज्योति निकुञ्ज, चारबाग, लखनऊ, में **इतिहास-मनीषी डा० ज्योति प्रसाद जैन की दसवीं पुण्य तिथि** पर ११ जून, १९९८, को ३१ विद्वान-मनीषियों का सार्वजनिक सम्मान व अभिनन्दन किया गया और काव्य संध्या आयोजित की गई।

अनन्त-ज्योति विद्यापीठ

जो बौद्धिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक और शैक्षणिक कार्यक्रम मित्र मण्डली द्वारा छिटपुट रूप से प्राय: विगत दो दशकों से किये जाते रहे थे, उन्हें श्रद्धेय इतिहास-मनीषी डा० ज्योति प्रसाद जैन जी के संरक्षण में और उनकी सहधर्मिणी श्रीमती अनन्त माला जी की प्रेरणा से ६ अक्टूबर, १९७१, को एक व्यवस्थित संस्थागत रूप प्रदान करने के उद्देश्य से **अनन्त-ज्योति विद्यापीठ**, रजिस्टर्ड सोसाइटी, की स्थापना की गई। विविध संगोष्ठियों और साहित्यिक कार्यक्रमों का आयोजन अब संस्थागत रूप से होने लगा। शैक्षणिक कार्यक्रम के अन्तर्गत **कान्त बाल केन्द्र** का संचालन किया गया जो अब KBK Primrose Academy के रूप में एक विशुद्ध English medium विद्यालय के रूप में व्यवस्थित है—[redacted]।

बौद्धिक कार्यक्रमों के अन्तर्गत विद्वानों के सम्मान-अभिनन्दन का कार्यक्रम १२ फरवरी, १९७९, को प्रारम्भ किया गया जिसमें श्रद्धेय डा० ज्योति प्रसाद जैन और डा० राम कुमार दीक्षित को इतिहास-मनीषी के अलंकरण से सम्मानित किया गया। १२ फरवरी, १९८२, को प्रो० चरण दास चटर्जी, डा० बहादुर चन्द छाबड़ा और प्रो० कृष्ण दत्त बाजपेयी को सम्मानित किया गया। १० मई,

१९८७, को डा० बैजनाथ पुरी, डा० नीलकण्ठ पुरुषोत्तम जोशी, डा० श्याम लाल पाण्डेय, डा० ए० एल० बाशम, डा० जनार्दन दत्त शुक्ल, पं० राम रतन, श्री एम० घोष, श्री आनन्द स्वरूप मिश्र, श्री राम गोपाल, श्री रामेश्वर प्रसाद दुबे, श्री वीरनन्दन जिन्दल, डा० भगीरथ मिश्र, श्री महेश्वर पाण्डेय, डा० हर्बर्ट गुन्थर, डा० नन्द किशोर देवराज, श्री लक्ष्मीकान्त श्रीवास्तव, श्री अजित प्रसाद जैन, श्री ज्ञानचन्द जैन, श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा, डा० अमर पाल सिंह, डा० गिरजा शंकर मिश्र, डा० हर्ष नारायन, डा० सरयू प्रसाद अग्रवाल, श्री राम निहोर चतुर्वेदी, जस्टिस कैलाश नाथ गोयल, डा० नासिर अली खान, डा० सुधांशु कुमार जैन, श्री विश्वम्भर नाथ, श्री नरेश चन्द्र जैन, श्री काशीनाथ गोपाल गोरे, डा० रमेश चन्द्र शर्मा, डा० प्रभा गुप्ता, डा० उषा माथुर, डा० विनय कुमार जैन, डा० इन्दु राय रस्तोगी, श्रीमती सुधा जिन्दल, डा० सुधा जैन और डा० बीना जैन को सम्मानित किया गया।

ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट

अपनी ६६वीं वर्षगांठ पर ६ फरवरी, १९७८, को, डाक्टर साहब ने **ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट** की स्थापना कर दी थी जिसमें साहित्यिक सेवाओं के निमित्त जो रायल्टी आदि उन्हें प्राप्त हुई थीं वह सब राशि उन्होंने ट्रस्ट को दे दी थी ताकि उनके परिवार में सारस्वत परम्परा का निरन्तर पोषण होता रहे। यह उनके आशीर्वाद का ही सुफल है कि उनकी एक पौत्री (अलका) ने संस्कृत-प्राकृत विषय में पी-एच०डी० की उपाधि प्राप्त की है और एक पौत्र (राजीव) ने रेलवे इंजीनियरिंग सर्विस के अपने सरकारी दायित्व के अतिरिक्त इलैक्ट्रानिक्स में मौलिक आविष्कार किया है, तथा उनकी अन्य सभी सन्तति में साहित्यिक अभिरुचि है।

डा० ज्योति प्रसाद जैन

श्रद्धेय डा० साहब दस वर्ष पूर्व ११ जून, १९८८, को इस लोक से प्रयाण कर गये थे। इस बीच डाक्टर साहब की पुस्तक Jainism, the Oldest Living Religion का द्वितीय संस्करण

P. V. Research Institute, वाराणसी, से प्रकाशित हुआ है और उसका श्री हेमन्त जे० शहा द्वारा गुजराती में अनुवाद **जैनधर्म सहुथी बधु-प्राचीन अने जीवंत धर्म**, नाम से अहमदाबाद से प्रकाशित हुआ है। उनके **जैन ज्योति : ऐतिहासिक व्यक्ति कोश** का प्रथम खण्ड (अ से अं) प्रकाशित हो गया है। उनकी पुस्तक Bhagawan Mahavira—Life, Times and Teachings का M. Pierre Amiel ने फ्रेन्च भाषा में अनुवाद किया है। जर्मन विद्वान Herr Kurt Titze ने उनके Jain Art and Architecture पर आलेख को अपनी पुस्तक Jainism—A Pictorial Guide to the Religion of Non-violence में स्थान दिया है। उनके महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ The Jaina Sources of the History of Ancient India का दूसरा संस्करण और **भारतीय इतिहास : एक दृष्टि** का तीसरा संस्करण भी शीघ्र ही प्रकाशित हो रहे हैं। उनके द्वारा प्रारंभ की गई चातुर्मासिक शोध पत्रिका **शोधादर्श** नियमित रूप से प्रकाशित हो रही है, और प्रायः उनके अप्रकाशित एवं अन्यथा सामयिक रूप से महत्त्वपूर्ण लेखों का समावेश उसमें अनिवार्यतः रहता है।

विनयांजलि

विगत ११ वर्षों में विद्वत् सम्मान का आयोजन नहीं किया जा सका। इस बीच श्रद्धेय डा० साहब के अतिरिक्त, डा० बैजनाथ पुरी, प्रो० कृष्ण दत्त वाजपेयी, श्री एम० घोष, पं० आनन्द स्वरूप मिश्र, श्री राम गोपाल, श्री रामेश्वर प्रसाद दुबे, श्री राम निहोर चतुर्वेदी, डा० भगीरथ मिश्र, डा० गिरजा शंकर मिश्र और डा० हर्ष नारायन अब पार्थिव लोक में नहीं रहे, परन्तु उनके जीवन की सादगी, व्यक्तित्व की श्रेष्ठता और विद्वत्ता की गहनता आने वाली पीढ़ियों को निरन्तर प्रेरणा देती रहेंगी और उनका जो साहित्य हमें प्राप्त है वह ज्ञान के भण्डार में एक स्थायी महत्त्व की अभिवृद्धि करता रहेगा। इन सभी श्रद्धेय मनीषियों के प्रति सारस्वत सभा ने अपनी विनम्र विनयांजलि अर्पित की।

परा-मृत्यु (Posthumous) सम्मान

कुछ विशिष्ट सारस्वत पुत्र रहे हैं जिनका सम्मान अनन्त-ज्योति विद्यापीठ को करना अभिप्रेत था परन्तु उसका सुयोग उनके जीवन काल में नहीं मिल सका। उन विद्वान-मनीषियों का स्मरण इस अवसर पर किया गया और उन्हें परा-मृत्यु सम्मान (Posthumous honour) से अलंकृत किया गया। ये मनीषी हैं लखनऊ के **पं० अमृत लाल नागर** और **पं० श्री नारायण चतुर्वेदी**, कानपुर के **डा० परिपूर्णानन्द वर्मा** और **श्री श्रवण कुमार श्रीवास्तव**, इलाहाबाद के **श्री ज्ञानचन्द्र द्विवेदी** और **पं० नर्मदेश्वर चतुर्वेदी**, उज्जैन के वाणी-भूषण **पं० सत्यन्धर कुमार सेठी** और बैंगलौर के **श्री सी० के० नागराजा राव**। इन मनीषियों ने जिस निष्काम भाव से अपने-अपने क्षेत्र में काम किया और कीर्तिमान स्थापित किये, वह सदा स्मरणीय रहेगा। इन सभी श्रद्धेय मनीषियों का परा-मृत्यु सम्मान कर सारस्वत सभा ने उनके प्रति अपनी विनम्र विनयांजलि अर्पित की।

सम्मानित अष्टासीति वय ज्येष्ठ विद्वान मनीषी

यह हमारा परम सौभाग्य है कि आज हमारे बीच अष्टसीति (८०) वर्ष वय-ज्येष्ठ (those who have crossed into eighties) विद्वान-मनीषी हैं जिनका सम्मान कर हम अपने सारस्वत दायित्व का निर्वाह कर सकते हैं। वृद्धावस्था, क्षीण स्वास्थ्य, मौसम की विषमता आदि के कारण कुछ विद्वान आने में असमर्थ रहे हैं तथापि उनके सम्मान में उनका अभिवन्दन इस समारोह में किया गया। वे है : बैंगलौर के ९०-वर्षीय **इतिहास-मनीषी डा० बहादुर चन्द छाबड़ा**, नई दिल्ली के ८८-वर्षीय **श्री लक्ष्मी चन्द्र जैन**, बीना के ८६-वर्षीय **डा० दरबारी लाल कोठिया**, वाराणसी के ८३-वर्षीय **प्रो० खुशाल चन्द गोरावाला**, सांगली के ८१-वर्षीय **श्री शांतिलाल के० शहा**, सास्काटून (कनाडा) के ८१-वर्षीय **डा० हर्बर्ट गुन्थर**, तथा लखनऊ के ८२-वर्षीय **श्री महेश्वर पाण्डेय**, ८१ वर्षीय **श्री कैलाश भूषण जिन्दल** और ८१-वर्षीय **डा० नन्द किशोर देवराज**।

जिन मनीषियों का सानिध्य प्राप्त करने का सौभाग्य हमें प्राप्त हुआ, उनमें ८०-वर्षीय **श्री अजित प्रसाद जैन** अपनी सेवा में सर्वोच्च पद प्राप्त कर १९७६ में सेवा-निवृत्त हुये और तब से बराबर सामाजिक व साहित्यिक कार्यक्रमों में व्यस्त रहे हैं; तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति के संस्थापक महामन्त्री के रूप में उसके शोध पुस्तकालय की स्थापना और विकास, तथा शोध पत्रिका **शोधादर्श** का सम्पादन और उसमें अग्रलेख, समाचार विमर्श, विचार बिन्दु, चिन्तन कण व समीक्षा के माध्यम से उन्होंने निर्भीक पत्रकारिता में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया। ८०-वर्षीय **श्री ज्ञान चन्द जैन** इस वृद्ध-वय में भी पठन व लेखन कार्य में लगे रहते हैं; अमृत लाल नागर सम्बन्धी संस्मरण और 'प्रेमचन्द पूर्व के हिन्दी उपन्यास' शीघ्र ही प्रकाश्य हैं; आजकल अपने जीवन के संस्मरण लिख रहे हैं जो इस शती का एक ऐतिहासिक दस्तावेज होगा। ८३-वर्षीय **श्री बीर नन्दन जिन्दल** आज भी अपने विचारपूर्ण लेखन से जन मत को आन्दोलित करते रहते हैं। ८३-वर्षीय **श्री जगजोत सिंह जैन** प्रारम्भ से ही एक मनन-चिन्तनशील व्यक्ति रहे हैं; सेवानिवृत्ति के बाद से इनका समय आध्यात्मिक अध्ययन-चिन्तन में प्रायः लगा और डा० साहब की साप्ताहिक गोष्ठी के वह एक स्थायी सदस्य रहे थे। ८०-वर्षीय **श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा** आज भी एक मननशील मनस्विता के धनी हैं और वर्तमान राजनैतिक परिदृश्य से चिन्तित हैं। ८०-वर्षीय **श्री जौहरीमल जैन** ने दिल्ली विश्वविद्यालय से इतिहास विषय में एम० ए० में प्रथम स्थान प्राप्त किया था और भारतीय पुलिस सेवा (I.P.S.) के प्रथम बैच में वह चयनित हुए थे तथा पुलिस सेवा के तत्कालीन सर्वोच्च पद—पुलिस महानिरीक्षक (Inspector General of Police) के पद से १९७७ में सेवानिवृत्त हुए थे—किसी जैन को स्वतन्त्र भारत में पुलिस सेवा में सर्वोच्च पद प्राप्त करने का गौरव उन्हें प्राप्त है।

इन सभी वय-ज्येष्ठ विद्वान मनीषियों का तिलक, पुष्पहार, श्रीफल और अंगवस्त्र द्वारा अनन्त-ज्योति विद्यापीठ एवं ज्योति

प्रसाद जैन ट्रस्ट की ओर से परम्परानुरूप सम्मान किया गया और सारस्वत सभा द्वारा करतल ध्वनि से अभिनन्दन किया गया तथा उनके स्वस्थ दीर्घ आयुष्य की कामना की गई।

विचारोत्तेजक निर्भीक लेखन के लिए समादृत मनीषी

डा० शशि कान्त ने बताया कि आज स्वतन्त्र लेखन को ग्रहण लग गया है। कोई पत्र-पत्रिका ही नहीं रह गयीं जिनमें आप अपने विचारों का निर्भीक निष्पक्ष रूप से प्रकाशन कर सकें। यह क्रम विगत ५० वर्षों में दो युगों में दिखायी पडता है—१९४७ से १९७५ तक इस प्रकार की पत्र-पत्रिकायें निकलीं और स्वतन्त्र लेखन को प्रश्रय मिला, तथा १९७५ से आज तक अब धीरे-धीरे ऐसी पत्रिकायें बन्द हो गईं और जो कुछ भी समाचार पत्रों में भी आने लगा वह प्राय: पार्टी-अपेक्षा अथवा सेठ-अपेक्षा से प्रभावित होने लगा। चूंकि वह स्वयं १९५२ से ही इस विधा से सक्रिय रूप से जुड़े रहे, उन्हें इस परिदृश्य का प्रत्यक्ष अनुभव है। तथापि कुछ मनीषी इस परिदृश्य से हतोत्साहित नहीं हुए और उन्होंने विचारोत्तेजक निर्भीक लेखन को छोड़ा नहीं। इसमें एक उदाहरण तो हमारा **शोधादर्श** ही है। जलगांव से प्रकाशित **धर्म मंगल** की सम्पादिका **सौ० लीलावती जैन** और पुणे से प्रकाशित **ज्ञान शलाका** की सम्पादिका **श्रीमती बासंती शहा** अपने निर्भीक प्रकाशन के लिए विख्यात हैं; उनको प्राय: धमकियां भी मिलती हैं उन निहित स्वार्थी तत्त्वों की ओर से जिनके कृत्यों को वे उजागर करती हैं। इन सम्पादिकाओं को इस अवसर पर सारस्वत सभा द्वारा समादृत किया गया। इसी प्रकार हठधर्मिता के गढ़ अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में इस्लामी शिया धर्मशास्त्र (Shia Theology) के प्रोफेसर होते हुए खुले मस्तिष्क से सोचने और खरा-खरा लिखने के लिऐ **डा० सैयद इतिज़ा हुसेन** को भी सारस्वत सभा द्वारा समादृत किया गया। सचिवालय सेवा से १९८३ में सेवानिवृत्त होने के बाद **श्री सी० एम० अडवानी** ने 'पाठकों के पत्र' के कालम में अपने निष्पक्ष विचार प्रकाशित करना शुरू किया—प्राय: १५०० पत्र वह

प्रकाशित कर चुके हैं। उनको भी सारस्वत सभा द्वारा समादृत किया गया।

यह सौभाग्य की बात है कि ऐसे ही निर्भीक विचारोत्तेजक लेखन के धनी दो मनीषियों का सानिध्य हमें प्राप्त हुआ है। श्री प्रेम बिहारी १९८८-८९ में उत्तर प्रदेश शासन में उप सचिव के पद से सेवानिवृत्त हुए और वह आर्थिक एवं राजनीतिक परिदृश्य पर निष्पक्ष निर्भीक कमेन्ट्स राष्ट्रीय समाचार पत्रों में प्रकाशित करते रहते हैं। श्री शरत कुमार कौशिक अक्टूबर १९९७ में उत्तर प्रदेश शासन में विशेष सचिव के पद से सेवानिवृत्त हुए, और विगत ३० वर्षों से वह बराबर कुछ-न-कुछ लिख रहे हैं जो सरिता, कादम्बनी और The Pioneer आदि में प्रकाशित होता रहा है। श्री प्रेम बिहारी और श्री कौशिक को उनके विचारोत्तेजक निर्भीक लेखन के लिये अनन्त-ज्योति विद्यापीठ एवं ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट की ओर से तिलक, पुष्पहार, श्रीफल और अंगवस्त्र द्वारा समादृत किया गया और सारस्वत सभा द्वारा करतल ध्वनि से उनका अभिनन्दन किया गया।

अध्यक्ष

अनन्त-ज्योति विद्यापीठ के संस्थापक सदस्य, अष्टासीति वय-ज्येष्ठ विद्वान, लेखक और पत्रकार, भारत सरकार के सूचना एवं प्रसारण विभाग के अवकाश-प्राप्त निदेशक, डा० अमर पाल सिंह ने सारस्वत समारोह की अध्यक्षता की, और कवियों में वय-ज्येष्ठ ७५-वर्षीय श्री गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी इस समारोह के मुख्य अतिथि तथा काव्य संध्या के प्रमुख रहे। डा० सिंह और श्री चतुर्वेदी को अनन्त-ज्योति विद्यापीठ एवं ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट की ओर से तिलक, पुष्पहार, श्रीफल व अंगवस्त्र द्वारा सम्मानित किया गया और सारस्वत सभा ने उनका करतल ध्वनि से अभिनन्दन किया।

कार्यक्रम

कार्यक्रम का प्रारम्भ विद्या-साहित्य-कला-विज्ञान की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती की प्रतिमा पर और उन विद्वान मनीषी

डा० ज्योति प्रसाद जी जैन के चित्र पर जिनकी पावन स्मृति में आज का आयोजन करने का सुयोग हमें प्राप्त हुआ, माल्यार्पण और दीप प्रज्वलन से हुआ । मांगलिक स्वर वेला में डा० (श्रीमती) अलका अग्रवाल एवं श्रीमती मंजरी जैन ने संस्कृत में सस्वर सरस्वती वन्दना की । श्रीमती इन्दु जैन व श्रीमती निधि जैन ने श्री रमा कान्त जैन द्वारा रचित **वाणी वन्दना** का सस्वर पाठ किया । डाक्टर साहब की दार्शनिक रचना **वीतराग-स्वरूपं** (देखें **शोधादर्श**-२३, पृ० ७६) का सस्वर गायन श्रीमती मंजरी जैन, श्रीमती मोहिनी, श्रीमती इन्दु और डा० अलका ने किया और डाक्टर साहब ही की रचना **जय महावीर नमो** का पाठ अशीत, मनाली, मेहा और एंजिल ने किया । श्री भगवान भरोसे जैन ने डाक्टर साहब के प्रिय पद **सपने में राजपद पाया** का गायन किया ।

विद्वान मनीषियों का अभिनन्दन-अभिवन्दन हम क्यों करते हैं, इसकी समाज को क्या आवश्यकता है, इसका स्वरूप क्या होना चाहिए—इन्हीं सब विन्दुओं पर १० मई, १९८७, को सम्पन्न विद्वत्सम्मान संगोष्ठी में श्रद्धेय डाक्टर साहब ने जो उद्‌गार प्रकट किये थे, उन्हीं की आवाज़ में उसका प्रसारण किया गया ।

सारस्वत सभा को डा० अमर पाल सिंह, श्री अजित प्रसाद जैन, श्री ज्ञान चन्द जैन, श्री जौहरीमल जैन और पं० गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी ने सम्बोधित किया । उन्होंने डा० ज्योति प्रसाद जैन के प्रति विनयांजलि अर्पित करते हुए बताया कि डाक्टर साहब ने इतिहास के सभी उपलब्ध स्रोतों का सम्यक् एवं तुलनात्मक मूल्यांकन कर इतिहास लेखन की प्रक्रिया को किस प्रकार प्रभावित किया था । उन्होंने आज के परिदृश्य पर गहरी व्यथा व्यक्त की और सभी क्षेत्रों यथा—राजनैतिक, प्रशासनिक व साहित्यिक और सामाजिक क्षेत्रों में विगत ३० वर्षों में होते जा रहे ह्रास का समाकलन किया, तथा स्वतन्त्रता को बचाये रखने के प्रति चिन्ता का प्रकाशन किया ।

डा० शशि कान्त ने सारस्वत सम्मान कार्यक्रम का संचालन किया और श्री रमा कान्त जैन ने काव्य-संध्या का संचालन तथा आभार व्यक्त किया ।

वाराणसी से **इतिहास-मनीषी डा० नीलकण्ठ पुरुषोत्तम जोशी** ने उद्‌गार व्यक्त किये हैं कि "विद्वानों का स्मरण, सत्कार एवं संग्रह करने की अनन्त-ज्योति विद्यापीठ द्वारा अपनायी गयी यह परम्परा वस्तुत: भगवती विद्या देवी का सशास्त्र पूजन ही है, और इस पुनीत कार्य के लिये आप सभी बधाई के पात्र हैं । **शोधादर्श** भी इसी सारस्वत समारोह की एक मुख्य कड़ी है । भगवान करे कि आप द्वारा सम्पन्न होने वाला यह सारस्वत सत्र अव्याहत चलता रहे ।" भिलाई से **डा० ए० एल० श्रीवास्तव** ने 'आयोजन के प्रयोजन की जानकारी से प्रसन्नता' व्यक्त की है और ऐसे अकादमिक आयोजन के लिये हार्दिक बधाई संप्रेषित की है । लखनऊ से **डा० विश्वनाथ याज्ञिक** ने यह उद्‌गार व्यक्त किये हैं कि "इतिहास-मर्मज्ञ और जैन दर्शन के उद्‌भट विद्वान डा० ज्योति प्रसाद जी जैन असंदिग्धत: अपने नामानुरूप ज्ञान के **ज्योतिर्धर** मनीषी थे और प्रज्ञा का प्रसाद वितरण कर उन्होंने विलक्षण लोकोपकार किया है, उनकी दसवीं पुण्यतिथि पर उन श्रद्धेय सारस्वत की अशेष स्मृति की वंदना में **एक स्वर मेरा भी मिला लें** ।" लखनऊ से ही **डा० परमानन्द जड़िया** ने कामना व्यक्त की है :

'ज्योति' से ज्योतियां नव जलाते रहें, प्रेम-आलोक पथ पर बिछाते रहें।
कोई 'शशि कान्त' कोई 'रमा कान्त' हो, वृत्ति मन की चकोरी बनाते रहें।

डा० जोशी, डा० श्रीवास्तव, डा० याज्ञिक और डा० जड़िया की शुभकामनाओं और उद्‌गारों के लिए हम आभारी हैं । लखनऊ के राष्ट्रीय समाचार पत्रों The Pioneer और **दैनिक जागरण** ने कार्यक्रम का समुचित कवरेज किया, उसके लिये हम उनके भी आभारी हैं ।

—नलिन कान्त जैन
सचिव, अनन्त-ज्योति विद्यापीठ
एवं न्यासी, ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट

संस्मरण — श्रद्धांजलि

—श्री अजित प्रसाद जैन

आज मेरे अग्रज श्रद्धेय डा० ज्योति प्रसाद जैन जी की दसवीं पुण्यतिथि है। इस अवसर पर यह सारस्वत सम्मान समारोह भी आयोजित किया गया है। डा० साहब बहुश्रुत विद्वान थे। मेरा उनका ७० वर्ष का साथ रहा जिसमें अधिकतर समय हम लोगों का एक ही जगह पर साथ-साथ बीता और बचपन से बुढ़ापे तक मैं उनके बहुत निकट सम्पर्क में रहा। मेरे ऊपर उनका अगाध स्नेह भी रहा। हम दोनों भाइयों में कभी झगड़ा नहीं हुआ और कभी कोई ऐसी बात नहीं हुई कि इतने बड़े जीवन में आपस में कोई कटुता आई हो।

वह गृहस्थ विद्वान थे। उन्होंने संस्कृत और धर्म-शास्त्र किसी स्कूल-कालेज में नहीं पढ़े थे, किन्तु अपने निरन्तर स्वाध्याय के बल पर उन्होंने संस्कृत का ज्ञान प्राप्त किया, और धर्म-शास्त्रों का, विशेषकर जैन धर्म के सिद्धान्त शास्त्रों का, तलस्पर्शी ज्ञान अर्जित किया जो बहुत ही कम देखने में आता है। वह सचमुच विद्या-वारिधि थे; कोई प्रश्न आप उनसे करिये तो उसका समाधान वह फौरन उपस्थित कर देते थे। इतिहास के वह शुरू से ही विद्यार्थी रहे। हिन्दी साहित्य और अंग्रेजी साहित्य में भी उनकी रुचि थी। इतिहास पढ़ते-पढ़ते जब उन्होंने देखा कि भारतीय इतिहास के लेखकों ने जैन स्रोतों की बिल्कुल उपेक्षा करके उन पर कभी कोई ध्यान ही नहीं दिया कि उनका भी कोई महत्व है, इससे उनको बड़ी पीड़ा होती थी। सर्वप्रथम जब उन्होंने पी-एच०डी० की डिग्री के लिए प्राचीन भारतीय इतिहास में जैन स्रोतों (Jaina Sources of the History of Ancient India) का क्या महत्व है, यह विषय चुना तो वह बहुत विस्मयकारी था। उन्होंने इस विषय पर सारा का सारा कार्य स्वयं ही किया था। थीसिस जब परीक्षकों के पास गया तो उन्होंने एक स्वर से कहा कि यह बहुत ही उच्चकोटि का शोध प्रबन्ध है, ऐसे शोध प्रबन्ध आम तौर से देखने में नहीं आते।

श्रद्धेय भाई साहब ने तीन-चार बड़े महत्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे। **भारतीय इतिहास : एक दृष्टि** में उन्होंने विशेष रूप से जैन स्रोतों के आधार से इतिहास की कई गुत्थियों को सुलझाने का प्रयास किया। अपने तरीके का यह एक अनूठा ग्रन्थ है। इसको पढ़ने से मालूम होता है कि जैन धर्म का क्या महत्व रहा—इस देश की संस्कृति में जैन धर्म ने क्या सांस्कृतिक या धार्मिक योगदान किये हैं। इसके अलावा उनके ग्रन्थों में **प्रमुख जैन ऐतिहासिक पुरुष और महिलायें** बहुत महत्व का ग्रन्थ है जिसमें उन्होंने इतिहास के अतीत के पन्नों से निकाल कर कितने ही ऐतिहासिक पात्रों को उजागर किया है जिनमें महिलायें भी रहीं और प्रबुद्ध चिन्तक व राजनयिक भी रहे—यह केवल व्यापारियों का ही धर्म नहीं रहा।

उन्होंने अपनी लेखनी अंग्रेजी में भी चलाई और तमाम ग्रन्थ लिखे जिनसे जैन धर्म का सामान्य परिचय मिलता है, जैसे कि **Essence of Jainism, Bhagawan Mahavira : Life, Times and Teachings, Religion and Culture of the Jains.** बहुत से ट्रैक्ट्स भी लिखे। उनकी शुरू से ही यह इच्छा रही कि जैन धर्म का महत्व लोगबाग समझें और इसका परिचय प्राप्त कर वे यह जानें कि यह कितना वैज्ञानिक धर्म है। प्राय: लोग जानकारी न होने के कारण इसकी उपेक्षा करते रहे थे, और तो और, जैनों को भी इसके बारे में मालूम नहीं था। बहुत बचपन की बात कह रहा हूँ जब हम मेरठ में हाई स्कूल—इन्टर में पढ़ते थे तो उन्होंने 'जैन कुमार सभा' की स्थापना की थी जिसका काम यही था कि बालकों में धर्म की चर्चा हो। युवावस्था में आये तब भी वह इसके लिए प्रयत्न करते रहे कि युवकों की गोष्ठियां हों और उनमें धर्म की चर्चा हो। आप लोगों को यह जानकर ताज्जुब होगा कि आगरा में, सन् १९३२-३३ की बात होगी, हम लोगों ने पहली बार महावीर जयन्ति मनाई, उसके पहले वहां महावीर जयन्ति नहीं मनाई जाती थी। रथयात्रा भी निकाली तो उसका अजैनों की तरफ

(शेष पृष्ठ १२६ पर)

राष्ट्र का वर्तमान परिदृश्य चिन्ताजनक

—श्री ज्ञान चन्द जैन

यह ज्योति निकुंज मेरे लिए पुण्यस्थली ही नहीं, एक प्रकार से स्मृति-स्थली बन गई है। जब भी मौज होती थी तब मैं यहां पर डाक्टर साहब के पास चला आता था और उनसे कुछ-न-कुछ ज्ञान-वर्द्धन होता था। जब मैं लखनऊ **नवजीवन** के सम्पादकीय में कार्य करने आया तब कैसरबाग सर्कस पर डाक्टर साहब एक मेडिकल स्टोर चलाते थे। उनका यहां का कक्ष और वह मेडिकल स्टोर, दोनों मेरी आँखों के सामने आ जाते हैं। वहाँ भी वह स्वाध्याय, लेखन और पाठन में रत रहते थे। उन्होंने जो कार्य किया है वह एक व्यक्ति का कार्य नहीं था वरन् वह एक संस्था का कार्य था। मैं यह समझता हूँ कि यदि मनुष्य नियमित रूप से अपना ज्ञानार्जन, स्वाध्याय और लेखन करता रहे तो अन्ततः यह एक पहाड़ बन जाता है। डाक्टर साहब का लेखन इसी प्रकार का था। उनकी पुस्तक The Jaina Sources of the History of Ancient India की प्रशंसा करते हुए मेरे परम मित्र पण्डित अमृत लाल नागर अघाते नही थे। उसका उन्होंने कई बार पारायण किया और 'सरस्वती आन्दोलन' से वह विशेष प्रभावित हुये कि किस प्रकार ग्रन्थों का लेखन प्रारम्भ हुआ। उससे पहले लेखन पद्धति नहीं थी और इस कारण कितना ही ज्ञान लुप्त हो गया। आतताइयों द्वारा कितने ही पुस्तकालय जला भी दिये गये। लेकिन

(पृष्ठ १२५ का शेष)

से, विशेष कर अग्रवालों की तरफ से, बड़ा विरोध हुआ, परन्तु बाद में रथयात्रा आमतौर से निकलने लगी।

भाई साहब को सबसे बड़ी श्रद्धांजलि इस सारस्वत सम्मान समारोह का आयोजन है। वह स्वयं वृद्धों का और विद्वानों का आदर करते रहे थे और उसी परम्परा का निर्वाह उनके सुपुत्रों ने यह आयोजन करके किया है। ★

जितनी ज्ञान सम्पदा अभी बची है उसको भी संरक्षित रखने की ओर हमारे देश के नेताओं ने कभी ध्यान नहीं दिया है।

मैंने देखा है सोवियत संघ का निर्माण कि किस प्रकार सारे पिछड़े-कुचले हुए देशों में एक नया सपना समाज को जगाता है और फिर उस सोवियत संघ का अवसान भी देखा। मेरा दिल थर्रा उठता है यह सोच कर कि कहीं हमारा देश भी तो उसी मार्ग पर नहीं चला जाएगा। हमें आज़ादी के पचास साल भी देखने चाहियें और आज़ादी से पहले के पचास साल भी अपने सामने रखने चाहियें। मेरे पिताजी ने १९०० ई० में मिडिल पास किया था और १९०२ ई० में हाई स्कूल पास किया था। मेरे सामने जो चित्र है वह १९०० ई० से प्रारम्भ होता है। मेरा जन्म जिस वर्ष (१९१८ ई०) हुआ उसी वर्ष गांधी जी का भारतीय राजनीति में प्रवेश हुआ था। कभी-कभी मैं सोचता हूँ कि हमारा देश १९४७ ई० से पहले बना और १९४७ ई० के बाद वह बनते हुये रुक गया, ज्यादा से ज्यादा उसको १९७० तक या १९७५ तक, यानि कि इन्दिरा जी के काल तक खींचा जा सकता है, लेकिन उसके बाद देश को तोडने का वही कार्य हमारे राजनीतिक नेता कर रहे हैं जो मध्य युग में राजपूत राजा किया करते थे। वे अपनी नाक से आगे नहीं देखते और उनके सामने देश का सवाल नहीं है। राजनीति अब व्यवसाय बन गई है। गांधी जी देश में कैसे जागृति लाये, इससे आज के नव-युवकों को प्रेरणा लेनी चाहिए। हमारे देशवासियों को मिट्टी का लौंदा समझा जाता था। इन मिट्टी के लौंदों को गांधी जी ने जीवन्त बनाया। गांधी जी यदि नहीं होते तो सत्य और अहिंसा को हम समझ नहीं पाते क्योंकि महावीर को तो हमने भगवान बना दिया और यह भुला दिया कि वह हमारे देश के महापुरुष थे। लेकिन गांधी जी भी अब सभी के लिए, चाहे वह विचारक हो अथवा राजनेता, out of fashion हो गये हैं। उनकी महत्ता को उनके परम शिष्य पं० जवाहर लाल नेहरू ने ही समाप्त कर दिया था।

हमारी अर्थ व्यवस्था के लिए कोई स्वतन्त्र चिन्तन नहीं है। हमारे सामने ब्रिटेन के शासन का मॉडल है या आजकल अमेरिका (यू.एस.ए.) का मॉडल है, तथा समाज में आज बहुत कुछ फिल्मी मॉडल है, अर्थात्, जो हम बालीवुड फिल्मों में देखते हैं वह समाज में हो रहा है। हम अपनी जगह से हटते जा रहे हैं और ऐसा लगता है कि भारतीय संस्कृति भी इसी शती के साथ समाप्त हो जाएगी।

तथापि हमारे बीच ऐसे भी विद्वान हैं जिन्होंने ऐसा कार्य किया है कि हम अपनी सांस्कृतिक धरोहर के प्रति सचेत हो सकें। ऐसे एक मूर्धन्य विद्वान हैं डा० राम विलास शर्मा जो आगरा विश्व-विद्यालय में अंग्रेजी के विभागाध्यक्ष रहे तथापि हिन्दी को समर्पित विद्वान हैं। उन्होंने अपना लेखन कार्य हिन्दी में किया है और यदि उनका यह कार्य अंग्रेजी में होता तो उसका प्रसार कहीं अधिक होता। महावीर के लिये एक शब्द कहा जाता है कि वह **चक्षुदाता** थे, अर्थात्, उन्होंने हमें ज्ञान की आँखें दीं। डाक्टर शर्मा का साहित्य भी वास्तव में हमारी समाज के लिये और हमारी इस पीढ़ी के लिये चक्षुदाता है। **ऋग्वेद** का जो अध्ययन उन्होंने किया है, लोकमान्य तिलक के बाद उसके जोड़ का कोई दूसरा देशी-विदेशी अध्ययन प्रकाश में नहीं आया है। वह पुरातत्त्ववेत्ता नहीं हैं, लेकिन उन्होंने हमारे ५००० वर्ष के इतिहास का पुनरवलोकन किया है और अंग्रेजों की कूटनीतिपूर्वक चलाई गई इस मिथक का भाण्डाफोड़ किया है कि हम भी आक्रमणकारी हैं जिन्होंने द्रविड़ों को दक्षिण की ओर भगा दिया था।

गांधी जी दक्षिण अफ्रीका में **गांधी जी** बने जहाँ उन्होंने देखा कि हम भारतीय पंचम वर्ण के हैं। आज तो हम सब ही अंग्रेजों और अमेरिकनों के सामने वास्तव में पंचम वर्ण के हो गये हैं।

जैसा कि मैंने ऊपर कहा, एक राष्ट्रीयता की भावना के अन्तर्गत सन् १९४७ तक हमारा राष्ट्र बन रहा था, परन्तु उसके बाद उस राष्ट्रीयता की भावना का प्रवाह रुक गया और जातिवाद ने राष्ट्र को जातियों में तोड़ना शुरू कर दिया। हमने अपने पैरों

में स्वयं ही बहुत बड़ी जंजीर आरक्षण की डाल ली। देश में रष्ट्रीयता की भावना को बढ़ाने वाला कोई कार्य दिखायी नहीं पड़ रहा।

मैं १९३८ से अखबार में काम कर रहा हूँ। मेरे सामने १९३८ से १९८० तक का जो चित्र है उससे यह प्रतीत होता है कि हम उत्सर्पिणी काल (Age of Ascending Progression) के बजाय अवसर्पिणी काल (Age of Descending Regression) में पहुँच गये हैं। ऐसा नहीं है कि आज हमारे देश में विद्वान नहीं हैं। आज जितने विद्वान हैं उतने पहले कहाँ थे ? हमारे देश के नव-युवकों को आगे बढ़ने के जितने अवसर आज हैं उतने पहले कहाँ थे ? परन्तु उपभोक्तावाद या Consumerism की संस्कृति ने हमारी मानसिकता को आवृत्त कर लिया है। ऐसा लगता है कि सभ्यता शायद चक्र में चलती है और वह कितनी ही बार उदित हुई और कितनी ही बार अस्त हुई। मैं समझता हूँ कि इन्दिरा गांधी के काल में ही हमारी अवनति अर्थात् अवसर्पिणी काल आरम्भ हो गया था जो दिन-पर-दिन बढ़ता जा रहा है। हमारे राजनेता हमें नहीं बचायेंगे। जैसा कि बुद्ध ने कहा था—**अप्प दीपो भव**, अर्थात् अपने लिये स्वयं दीपक बनो, हममें से प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं अपनी रक्षा की सामर्थ्य प्राप्त करनी होगी। बुद्ध और महावीर हमारे देश के दो ऐसे महापुरुष हुये हैं जिन्होंने अशोक जैसे शक्तिशाली सम्राट को जन्म दिया और भारतीय सभ्यता का दक्षिण एशिया व पश्चिम एशिया में प्रसार सम्भव किया।

मैं नहीं जानता कि परलोक में क्या होता है, परन्तु कर्म का फल हमें इसी जीवन में मिल जाता है। हम अपने कर्मों के फल से ही आज की स्थिति में पहुँच गये हैं और कभी-कभी मैं बहुत डरता हूँ कि कहीं हमारे देश की हालत भी सोवियत संघ की जैसी न हो जाए। वहाँ का पतन देख कर मेरा हृदय काँप उठता है। हमारे लिए आवश्यक है कि अपने देश को, राष्ट्र को, बलशाली बनायें। हम इतना तो कर ही सकते हैं कि नालायक राजनीतिज्ञों को कभी

अपना वोट न दें। जैसा लोकतन्त्र है वह सिर्फ एक माया है—सगा भाई है तस्करों का व अपहरणकर्ताओं का और उन्हीं का रक्षक है। वह सामान्य नागरिकों का रक्षक नहीं है और न ही सामान्य नागरिकों से उसका कुछ लेना-देना है। हमारे जो देशवासी अनपढ़ हैं और आधा पेट खाना भी नहीं पाते उनके लिए स्वाधीनता की अर्द्ध शताब्दी का क्या अर्थ है ?

हमें समाज को एक बनाना चाहिए। उसे खानों में नहीं बांटना चाहिए। आज न कोई जैन है और न कोई हिन्दू है, न कोई अग्रवाल है और न कोई ब्राह्मण है, वरन् जनता के आज सिर्फ दो वर्ग हैं—अमीर है और गरीब है। धर्म के खानों में बांटने वाली अपनी सामन्तवादी सोच को अब हमें आधुनिक बनाना होगा। धर्म न तो Religion है, न मज़हब है, वरन् जैसा कि डाक्टर साहब ने कहा था, यह वह सोच है जो हमें ऊँचे ले जाये, अभ्युदय की ओर और निःश्रेयस की ओर। सभी साहित्य का अध्ययन होना चाहिये और यह अध्ययन अपनी भाषा में होना चाहिए। द्वितीय विश्व युद्ध में जब नाज़ी जर्मनी का दबाव सोवियत संघ में बढ़ रहा था तो सभी उद्योगों और सांस्कृतिक सम्पदा को सोवियत सरकार द्वारा साइबेरिया में स्थानान्तरित किया गया था और यह उल्लेखनीय है कि **महाभारत** के अनुवाद के विभाग को भी सुरक्षा की दृष्टि से साइबेरिया ले जाया गया था। इसके विपरीत हमारी सरकार अपनी ही संस्कृति की अवहेलना कर रही है। १९४७ के बाद प्रायः Archaelogical Survey Reports भी छपना बन्द हो गई हैं। सबसे अधिक दयनीय दशा उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार और राजस्थान, जो कि सामान्यतया हिन्दी प्रदेश के रूप में जाने जाते हैं, में है और सांस्कृतिक दृष्टि से यह क्षेत्र देश में सबसे अधिक पिछड़ा हुआ है।

डाक्टर साहब का कहना था कि हमें अपने पुरखों को भी याद करना चाहिए; इतिहास कोई मृत वस्तु नहीं है। मैंने अपने जीवन के अनुभव में पाया कि जो पुत्र अपने माता-पिता की सेवा करता है

वह दुख नहीं पाता है। मैं कई परिवारों को जानता हूँ। श्री नारायण चतुर्वेदी जी, जो सैकड़ा पार करते-करते रह गये, एक महापुरुष थे; उनके दोनों पुत्रों ने जो सेवा की वह मेरी आँखों के सामने है। डाक्टर साहब के ही दोनों पुत्रों को देखता हूँ कि हरेक पिता को ऐसे पुत्र हों। जो ज्योति उन्होंने जलाई उसे उनकी सन्तान जलाये रक्खे। **शोधादर्श** तो निकाले हीं। शशि कान्त जी ने बहुत ही अद्भुत पुस्तक लिखी है जिसमें कौशाम्बी को केन्द्र मानते हुए मध्य देश का प्राग्ऐतिहासिक काल से मध्य युग तक का इतिहास दिया गया है। यह शोध ग्रन्थ Political and Cultural History of Mid-North India भी डाक्टर साहब के थीसिस Studies in the Jaina Sources of the History of Ancient India के समान ही वन्दनीय पुस्तक है। इसके footnotes में इतनी सामग्री है कि इन पर कितने ही शोध प्रबन्ध लिखे जा सकते हैं। मैं दोनों पुत्रों को यही आशीर्वाद देना चाहूँगा कि उनका सारस्वत अभियान बराबर चलता रहे।

——

सुभाषित :

पात्रे त्यागी गुणे रागी भोगी परिजनैः सह।
शास्त्रे बोद्धा रणे योद्धा पुरुषः पंचलक्षणः॥

—स्वामी समन्तभद्र

अर्थात्—जो पात्र के प्रति त्यागी, गुण के प्रति रागी, परिजनों के साथ भोगी, शास्त्र के जानने वाला और रण के उपस्थित होने पर युद्ध करने वाला है वही पुरुष है—मर्द है—और इस तरह पुरुष के पाँच लक्षण बतलाये गये हैं।

× × ×

गाफ़िल तुझे घड़ियाल यह देता है मुनादी।
ख़ालिक ने घड़ी उम्र से एक और घटा दी॥

—अज्ञात

× × ×

समाज भयमुक्त क्यों नहीं

—श्री जौहरीमल जैन

मेरे से पहले ज्ञानचन्द जी ने ५००० साल से इतिहास को समेटते हुए बहुत ही महत्वपूर्ण बातें कही हैं। मैं आज के परिप्रेक्ष्य में ही बात करना चाहूंगा जिसमें मैं पला, बड़ा हुआ और कार्यरत रहा। यह है लोगों के लिये सुरक्षा (Security) या अभय का माहौल।

बहुत सारा प्रोपेगैण्डा किया जा रहा है कि हम एक भयमुक्त समाज बना रहे हैं, लेकिन हो रहा है इससे उल्टा। वास्तव में हम बहुत दिनों से एक ऐसी समाज बना रहे हैं जो सिर्फ भय ही बना रही है। इसके कई कारण हैं। पहला कारण तो यही है कि अपने यहाँ नारा तो बहुत दिया जाता है कि Rule of Law—कानून का राज्य—है, लेकिन अपने यहाँ Rule of Lawlessness—कानून विहीनता का राज्य—है। अंग्रेजी जमाने में कानून की जो व्यवस्था स्थापित की गई थी और जो बहुत से कोड बनाये गये थे वे रोमन लॉ पर आधारित थे। रोम साम्राज्य बहुत बड़ा साम्राज्य था और वह सभी ज्ञात साम्राज्यों में सबसे अधिक समय तक, ७०० साल तक, चला था जबकि ब्रिटिश साम्राज्य १५०–२०० साल ही चला और ऑटोमन तुर्क साम्राज्य भी ३०० साल से अधिक नहीं चला। जो कानून व्यवस्था अंग्रेजों ने यहाँ लागू की वह उनकी अपनी नहीं थी वरन् रोम साम्राज्य में विकसित कानून व्यवस्था थी जिसे Rule of Law के नाम से जाना जाता है। इंग्लैण्ड में यह व्यवस्था अभी कायम है, परन्तु हमारे देश में लोग कहते कुछ और हैं, करते कुछ और हैं जिसके कारण यह व्यवस्था धीरे-धीरे समाप्त हो गई। इस बात से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि इस वक्त हमारा समाज भय से ग्रस्त है।

आर्थिक व्यवस्था चाहे जैसी भी हो, आदमी गरीबी में भी रह सकता है और बीच के दर्जे की अवस्था में भी रह सकता है, लेकिन कानून की व्यवस्था गड़बड़ाने पर समाज सुरक्षित नहीं रह

सकता। जितने कानून हम बनाते हैं उनका असर उल्टा ही होता है। हमने Dowry Act—दहेज निरोधक कानून—पास किया तो दहेज की मांग और बढ़ गई। पहले शराफत इतनी थी कि कोई दहेज मांगने की कोशिश ही नहीं करता था। मेरी दो बेटियों की शादी हुई, परन्तु किसी ने एक पैसा नहीं मांगा जबकि लड़के काफी अच्छे परिवार के थे; न वैसा ही कोई खर्च हुआ जो आजकल शादी में देखने में आता है।

समाज में भय क्यों बढ़ता जा रहा है इसके कारण पर विचार किया जाना आवश्यक है। ज्यादातर लोग यह समझते हैं कि पुलिस इसकी जिम्मेदार है। पुलिस भी जिम्मेदार है इसमें कोई शक नहीं है, परन्तु कैसे ? अगर कान्सटेबिल की भर्ती में ४०,००० रुपये खर्च होते हैं और वह रुपया घर और जेवर बेच कर इकट्ठा किया गया हो तो कान्सटेबिल ईमानदार कैसे रह सकता है ? उसकी कोशिश यही रहेगी कि वह रिश्वत के रूप में समाज से जितना भी घसीट सके, घसीटे।

कानून में भी जो बदलाव किये गये हैं वे अपराधी के पक्ष में ही जाते हैं और जिसके प्रति अपराध किया गया है उसके खिलाफ जाते हैं। मुकदमें से पहले साक्ष्य की तफसील और गवाहों के नाम व पते अपराध करने वाले को दे दिये जाने की जो व्यवस्था अब की गयी है। उससे अभियोजन अपने पत्ते पहले ही फैला देता है और उसे नहीं मालूम कि अपराधी क्या कहने जा रहा है। हर अपराधी दरोगा से यही कहता है कि वह बिल्कुल निर्दोष है और अपना बयान अदालत में देगा। उसके बाद उसकी एलिबि (Alibi) बनती है कि वह वहाँ था ही नहीं। पेशेवर हत्यारे होते हैं और उनसे कत्ल कराया जाता है तो ऐसे में असली अपराधी हत्या के समय होता भी नहीं है। तफतीश के दौरान सब बातें पूरी तरह से आ जानी चाहियें जो होता नहीं है। F. I. R. यानी कि प्रथम सूचना जब रुपया लेकर लिखी जाती है तो वही सही नहीं होती। गवाहों को भी धमका कर, डरा कर, तोड़ा जाता है।

दो बड़े आपराधिक (Criminal) जिलों का पुलिस अधीक्षक (S.P.) मैं रहा था, एटा का और अलीगढ़ का। एटा में रोज एक हत्या तो होती ही थी, एक डकैती भी पड़ती थी। अलीगढ़ अपेक्षाकृत ज्यादा सभ्य था क्योंकि वहाँ यूनीवर्सिटी थी जिसके वाइस-चान्सलर डा० जाकिर हुसैन थे और वहाँ ऐसे प्रतिष्ठित नागरिक भी थे जैसे कि नवाब छतारी जो यू० पी० के गवर्नर भी रह चुके थे, परन्तु वहाँ के राजनेताओं में उस वक्त भी अपराधियों को संरक्षण देने की भावना काफी थी। हमने इसको अपने समय में पनपने नहीं दिया। जब यह मालूम हो जाता था कि अपराधी के विरुद्ध कोई गवाही नहीं देगा तो यह भी इन्तजाम किया कि उससे हमारी मुठभेड़ हो। मुठभेड़ों में एटा के कई आपराधिक गिरोहों का सफाया हो गया। ऐसे अपराधियों का नाम दरोगा FIR में लिखते ही नहीं थे, और न उनको पकड़ने की हिम्मत दरोगा में होती थी, और ना ही किसी गवाह की गवाही देने की हिम्मत होती थी। ऐसा ही हाल अलीगढ़ में भी था। जब ये अपराधी खत्म हो गये तो जनता में पुलिस के पक्ष में वातावरण बना और जनता ने ही पुलिस के समर्थन में जलूस निकाले जबकि आमतौर से जनता में पुलिस के प्रति आतंक या दुर्भावना का वातावरण रहता है। अपने अनुभव से मैंने यह देखा कि यदि कोई सही काम होता है तो आम लोगों की सोच में किस तरह बदलाव आता है। जो अपराधी आज पनप रहे हैं उसका कारण यह है कि पुलिस न तो उन्हें पकड़ पा रही है और न मार पा रही है और यदि पुलिस उन्हें पकड़ भी लेगी तो वे कभी Convict (दोषसिद्ध) तो होंगे ही नहीं।

न्याय पुलिस से शुरू होता है और अदालत में खत्म होता है। पहले यह व्यवस्था थी कि चार्ज शीट (अभियोग पत्र) दो-तीन महीने में लग जाती थी और हत्या के मामले ४ महीने में न्यायालय में तय हो जाते थे, यानी कि ७ महीने में मुकदमा (trial) पूरा हो जाता था। मेरे समय में करीब ४५ प्रतिशत कातिलों को फांसी की सजा हो जाती थी, किन्तु अब Conviction की दर ३ प्रतिशत

ही रह गई है। अब यह स्थिति है कि अपराधी समझता है कि किसी को कत्ल कर दो, बरी तो हो ही जायेंगे, मुकदमे में १० साल लग जायें तो लग जायें लेकिन भयमुक्त समाज नहीं बनने देंगे।

वकील चाहते हैं कि वे केस जीतें और पुलिस केस हारे। Law Commission, जिसमें वकीलों का वर्चस्व था, ने यह सिफारिश की कि किसी अपराधी को फांसी की सजा नहीं दी जाएगी और यदि यह सजा दी गई तो जज को रिकार्ड करना पड़ेगा कि फांसी की सजा क्यों दी जा रही है। पहले कानून यह था कि हत्या के अभियुक्त को फांसी की सजा अवश्य दी जायेगी और यदि नहीं दी जाती तो जज को इसके कारण लिखने पड़ेंगे। इसका लाभ हत्यारे को ही मिला।

अब पुलिस विभाग में स्थानान्तरण भी बहुत जल्दी-जल्दी होते हैं। थानेदार को पता नहीं होता कि थाने में क्या हो रहा है और न एस० पी० को पता होता है कि जिले में क्या हो रहा है। मजिस्ट्रेट साहब की अदालत में मुकदमे में तारीख पर तारीख पड़ती रहती है और सम्मन वापस आते ही रहते हैं। हत्या जैसे संगीन अपराध के मुकदमे का परिणाम १० साल के बाद आता है और डकैती के मुकदमों का तो और भी देर से। इस बीच दरोगा बदल चुके होते हैं और तफतीश ही पूरी नहीं हो पाती।

न्यायालय की एक यह व्यवस्था हुई है कि बदमाशों को हथकड़ी नहीं पहनाई जाएगी। यह बात तो उचित है कि राजनेताओं को, प्रतिष्ठित व्यक्तियों को, जो किसी आन्दोलन में गिरफ्तार होते हैं, हथकडी न लगाई जाय क्योंकि वे तो खुद ही जेल जाना चाहते हैं, किन्तु इसका कोई औचित्य नहीं है कि एक डाकू या हत्यारे को हथकड़ी न लगाई जाय। एक बदमाश को पकड़ने के लिए दस सिपाही चाहियें तो इतनी फोर्स कहाँ से आयेगी? और आजकल तो अधिकांश पुलिस बल आपराधिक राजनेता की सुरक्षा में लगा हुआ है। जो जितना बड़ा आपराधिक राजनेता है उसके

पास उतने ही अधिक सिपाही उसकी सुरक्षा के लिये हैं क्योंकि उसे अपने प्रतिद्वन्द्वी दूसरे आपराधिक राजनेता से खतरा है। पुलिस के पास शरीफ आदमियों को और आम आदमियों को सुरक्षा प्रदान करने के लिये समय ही नहीं है। ऐसी स्थिति में समाज भयमुक्त कैसे हो सकता है ?

भयमुक्त समाज के लिये जनता को आन्दोलन करना पड़ेगा। कानून में ऐसे बदलाव लाये जाने चाहियें कि वह न्यायसंगत हो और जल्दी मुकदमे का फैसला हो सके। सर्वोच्च न्यायालय ने यह व्यवस्था दी है कि अधिकतम २ साल में मुकदमे का निर्णय हो जाना चाहिये, परन्तु न्यायालयों पर इसका कोई असर नहीं पड़ा है। कार्यपालिका और न्यायपालिका के अलग कर दिये जाने से भी व्यवस्था में ढील आई है। पहले कलक्टर को यह अधिकार था कि वह न्याय व्यवस्था को चुस्त-दुरुस्त कर सकता था। एटा में जब मैं एस. पी. था, तो कलक्टर के आदेश से यह व्यवस्था की गई थी कि जितने गवाह पेश किये जायें उन सबकी उसी दिन मजिस्ट्रेट द्वारा गवाही दर्ज की जाय और जिरह की जाय। एटा में उन दिनों बिजली नहीं थी और लालटेन जलाकर देर रात तक मजिस्ट्रेट लोग काम निपटाते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि ३ महीने में ही कोई undertrial नहीं बचा। अब स्थिति यह है कि जिले की जेल undertrials (विवेचनाधीन अभियुक्तों) से ही भरी रहती है। बहुत से undertrial पुलिस की हिरासत से भाग भी जाते हैं। और समाचार पत्रों में जो समाचार छपते हैं उनसे यह भी मालूम होता है कि प्रभाव सम्पन्न और शातिर अपराधियों को जेल में सब सुख-सुविधा उपलब्ध हो जाती है, यहाँ तक कि अपने प्रतिद्वन्द्वियों की हत्या कराने या फिरौती वसूल करने तक की व्यवस्था वहाँ से वह कर लेते हैं। समाज को भयमुक्त करने के लिये इन परिस्थितियों का सुधार होना जरूरी है।

——

अध्यक्षीय सम्बोधन

—डा० अमर पाल सिंह

डा० ज्योति प्रसाद जैन जी से मेरा सम्पर्क तब हुआ जब वह मेरठ से यहाँ लखनऊ आये। पढ़ने-लिखने के सम्बन्ध में अन्त तक उनका मेरा साथ चलता रहा। डाक्टर साहब समर्पित शोधकर्ता, समर्पित इतिहासकार और समर्पित समाजसेवी थे।

आज देश की दशा का जो चित्र है उसको देखकर मेरी समझ में भी यही आता है कि जो मार्ग डाक्टर साहब ने बताया था—धर्म का मार्ग, शोध का मार्ग, चिन्तन का मार्ग—उसी मार्ग को हम अपनायें तभी इससे त्राण मिल सकता है, वरना आगे चल कर, जैसा कि श्री ज्ञान चन्द जी ने कहा, बड़ी मुश्किल दिखायी दे रही है—बड़ा अन्धेरा दिखाई दे रहा है।

डाक्टर साहब की पुण्य स्मृति में यह सारस्वत समारोह का आयोजन बहुत ही उपयुक्त है। बीच में कुछ व्यवधान हो गया था, परन्तु इसकी परम्परा को पुनः चालू रखा गया है, इसके लिये इसके आयोजक और सभी सहयोगी बधाई के पात्र हैं। सभी प्रबुद्ध लोगों के प्रति जिन्होंने इस आयोजन में सम्मिलित होकर इसे सफल और सार्थक बनाया, हम उनके आभारी भी हैं और कृतज्ञ भी हैं।

हमारे राष्ट्र का और समाज का वर्तमान परिदृश्य प्रबुद्ध जनों को ठीक ही चिन्ताग्रस्त किये हुए है। आपाधापी, केवल स्वार्थ और मात्र अपने छोटे से लाभ के लिए कुछ भी विवेकशून्यता से कर डालने का जो संक्रामक रोग राजनेताओं में, सरकारी सेवकों में और शिक्षक वर्ग में फैल गया है, उसके निदान के लिये मैं तो यही चाहूंगा कि हम सब लोग अपने प्राचीन मार्ग को कदापि नहीं छोड़ें, अपने सांस्कृतिक मूल्यों को किसी भी प्रकार विस्मृत न होने दें। यद्यपि समय इसके विपरीत लगता है, फिर भी आशा की किरण को हम अपनी आँखों से ओझल नहीं होने दें। ★

रिपोर्ट

इतिहास-मनीषी डा० ज्योति प्रसाद जैन की पुण्यतिथि पर काव्य - संध्या

डा० ज्योति प्रसाद जैन की दसवीं पुण्यतिथि पर सारस्वत सम्मान के क्रम में सम्पन्न काव्य-गोष्ठी की अध्यक्षता नगर के वयोवृद्ध छन्दकार 'ब्रजभाषा विभूति' श्री गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी ने की और उसका संचालन श्री रमा कान्त जैन ने किया ।

सर्वप्रथम— दास हैं जिनवर के, फैलाते चन्द्र सा प्रकाश ।
'ज्योति' के हैं अनन्य भक्त, उठाते उन्हें कैलाश ।।

पंक्तियों द्वारा **श्री प्रकाश चन्द्र जैन 'दास'** का आह्वान किया गया । उन्होंने—

नाम भी सुन्दर, काम भी सुन्दर, तुमने सुन्दर राह दिखायी ।
ज्योति ! तुमने जीवन मग में, परम ज्ञान की ज्योति जलायी ।।

—पंक्तियों से प्रारम्भ रचना द्वारा स्व० डाक्टर साहब को अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित किये और जिनवर के प्रति विनती पढ़ी जिसकी प्रारम्भिक पंक्तियां थीं—

मुझे शरण में ले लो जिनवर, मुझे कर्मों से नाथ छुड़ा दो ।
मेरे चेतन पै करुणा कर दो, इसे मुक्ति के योग्य बना दो ।।

दिनेश भी है, चन्द्र भी है अवस्था में कम भी हैं ।
व्यंग करते हैं पैने-पैने, अफसरी का नहीं करते दम्भ हैं ।।

पंक्तियों द्वारा **श्री दिनेश चन्द्र अवस्थी** का आह्वान किया गया और उन्होंने झगड़ा रस की व्यंग क्षणिकाओं तथा 'ससुर बिचारा' कुण्डलिया से श्रोताओं को आनन्दित किया ।

ताप हरने को गगन में मेघ हैं छा रहे ।
घनानन्द बरसे यहाँ हम सब यही है मना रहे ।।

पंक्तियों द्वारा आहूत **श्री घनानन्द पाण्डे 'मेघ'** ने अपना मधुर गीत—

कोई न कोई गीत लिखूंगा,
दुश्मन को भी मीत लिखूंगा ।

गीतों में ममता का स्वर है,
कविता चिर पर कवि नश्वर है ।

गाकर श्रोताजन को मुग्ध किया ।

मन विभोर कर दिया जिन्होंने 'गुरुदक्षिणा' से अपनी ।
निवेदन है उन रामदेव लाल से सुनायें रचना अपनी ।।

—इन पंक्तियों से आहूत **श्री रामदेव लाल 'विभोर'** ने अपने काव्य-पाठ में रस-छन्दों का 'कवि दरबार' साकार किया ।

दो वेदों के ज्ञाता, पद्म के आकर हैं ।
काव्य-रचना में निपुण वे प्रभाकर हैं ।।

पंक्तियों द्वारा **डा० पद्माकर द्विवेदी** का आह्वान किया गया और उन्होंने अपनी व्यंग क्षणिकाओं—'समाजवाद में पहले हम,
समाज बाद में अभीष्ट है ।'

आदि से श्रोताओं को वर्तमान परिदृश्य की ओर उन्मुख किया ।

कृष्णा हूँ मैं, श्री हूँ मैं, कविता की सहेली हूँ मैं ।
घोलती हूँ रस गीतों में ऐसे, कृष्ण की प्रिय बाँसुरी हूँ मैं ।।

पंक्तियों द्वारा आहूत **श्रीमती कृष्णा अवस्थी** ने राष्ट्रीय एकता की भावना को मुखर करने वाला अपना गीत—

भिन्न हों विचार, किन्तु हर हृदय समान हो,
सूखने न पाये यह विश्व प्रेम वल्लरी,
ऐक्यभाव भूमि पर यह सदा रहे हरी ।

प्रस्तुत किया ।

अंशुमाली हैं, इन्द्र की तरह वीर हैं ।
लोगों को खिलाते काव्य की खीर हैं ।।

पंक्तियों द्वारा **श्री वीरेन्द्र 'अंशुमाली'** का आह्वान हुआ और उन्होंने अपने कुछ भावपूर्ण मुक्तक प्रस्तुत किये, यथा—

अमृत लाने वालों को भी विष के घूंट दिये जाते हैं,
और इन्किलाब के रखवाले शूली पर टांग दिये जाते हैं ।
जो प्रतिमा का रूप दिया करते हैं हर लावारिस पत्थर को,
ताजमहल गढ़ने वालों के हाथ तराश दिये जाते हैं ।।

विष्णु होकर भी शर्मा रहे हैं।
शान्ति के समय भी गरमा रहे हैं।।

पंक्तियों द्वारा आहूत **श्री विष्णु दत्त शर्मा** ने अपनी रचना—

मैं खड़ा कगार पर था तुझे पुकारता
और तू गुहार का जवाब भी न दे सका।
देह देह है नहीं, गेह तन बिगड़ गया
कि लूटमार हो रही और मन हुआ उतावला।।

का ओज पूर्ण वाणी में पाठ किया।

मास्टर अशीत, कु० मेहा और कु० मनाली ने स्व० **जगदीश प्रसाद सक्सेना 'पंकज'** (लखनऊ) की रचना 'तुम अगर इन्सान हो तो आदमी से प्यार कर लो' का सस्वर पाठ किया और **श्री शिरीष कान्त** ने शेरो-शायरी का आस्वादन कराया।

कमलेश हैं, करते हैं शिव का भजन।
वैज्ञानिक हैं, करते हैं काव्य का सृजन।।

पंक्तियों द्वारा गीतकार **श्री शिव भजन 'कमलेश'** का आह्वान किया गया और उन्होंने अपने आध्यात्मिक गीत—

कथनी व करनी में हुई न मिताई,
इसीलिए खुशियां भी हो गईं पराई,
ऐसा हठी मन मानता ही नहीं कहना,
है पसन्द अपनी तरंग में ही बहना।

से श्रोताओं को रस विभोर किया।

श्री रमा कान्त जैन ने डाक्टर साहब के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की और अपनी व्यंग-विधा के कुछ नमूने प्रस्तुत किये, यथा—

विद्वत्जन की संगति विसंगति कहलाती है,
क्योंकि उनमें अहं और ईर्ष्या की गन्ध आती है।
अ से ज्ञ तक वर्णमाला जानने वाला अज्ञ होता है,
विहीन है ज्ञान से जो वह विज्ञ होता है।

डा० रामाश्रय 'सविता' ने अपने इष्ट देव राम के प्रति अपना गीत,

राम, राम कहने में होते हैं राम।
मरा, मरा कहने में होते हैं राम।।

समर्पित किया।

(शेष पृष्ठ १४२ पर)

साहित्य की पठनीयता

—श्री गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी

जब भी मैं यहाँ आता हूँ पुरानी स्मृतियों में डूब जाता हूँ। कण-कण में ज्योति प्रसाद जी की ज्योति विकीर्ण हो रही है और मुझे यह देखकर हर्ष होता है कि उनके परिवार में न केवल उनकी पुण्य स्मृति को संरक्षित रखने का भाव है, वरन् सभी में साहित्यिक भावना है और बच्चों में भी वे संस्कार हैं जो पल्लवित-पुष्पित होकर इस ज्ञान ज्योति के केन्द्र को ज्योति प्रदान करते रहेंगे।

इस आयोजन के माध्यम से हमने देश की वर्तमान स्थिति का भी विहंगमावलोकन किया और इस पर कुछ चिन्तन करने के लिये समय दिया। लखनऊ विश्वविद्यालय में हाल ही में साहित्य की पठनीयता के विषय में चर्चा हो रही थी जिसमें मैं भी उपस्थित था। चिन्ता का विषय यह था कि साहित्य के प्रति जो उदासीनता बढ़ती जा रही है, हिन्दी में पठनीय पुस्तकों का जो अभाव है और धीरे-धीरे जिस प्रकार सुसाहित्य तिरोहित होता जा रहा है, उसका क्या कोई निदान सम्भव है। एक विकल्प यह भी उभरा कि सुसाहित्य को संगीत का प्रश्रय प्रदान किया जाय। यदि काव्य संगीतबद्ध होगा तो लोगों में उसे सुनने की रुचि उत्पन्न होगी। पुरानी कविताओं में प्राय: वे राग भी लिखे रहते थे जिनमें वे पद गेय हैं। उसके कारण वे पद अधिक लोकप्रिय हुए। इसी आयोजन में एक इसी प्रकार का पद श्री भगवान भरोसे जैन ने बहुत ही मधुर स्वर में प्रस्तुत किया था। इस प्रकार गेय तत्त्व प्रदान किये जाने पर सुसाहित्य के प्रति लोगों में पुन: कुछ अभिरुचि जागृत हो सकती है।

अभिरुचि के परिष्कार की भी बड़ी आवश्यकता है। दूरदर्शन और अन्य स्थानों पर जो कार्यक्रम आज देखे जाते हैं उनका कुप्रभाव छोटे-छोटे उभरते मस्तिष्कों पर पड़ रहा है। उनको सुसंस्कारित करने का एक तरीका यह है कि ऐसी प्रार्थनायें या कवितायें, जैसी कि अभी कवि मनीषियों ने यहाँ प्रस्तुत कीं, उन्हें हृदयंगम कराई जायें। परिवारों में भी ऐसा वातावरण सृजित किया जाय जिससे

बच्चों में शुद्ध विचार और भाव उत्पन्न हो सकें। ऐसा होने पर सुसाहित्य के प्रति हमारी युवा पीढ़ी में स्वत: ही अभिरुचि जागृत होगी।

सिनेमा के माध्यम से बहुत से गीत प्रचार में आये हैं जो भाषा और भाव दोनों ही दृष्टियों से सुसाहित्य की कोटि में आते हैं। इन्होंने हिन्दी की रचनाओं को लोकप्रिय बनाया है। परन्तु हमारे कवि सम्मेलनों में और काव्य गोष्ठियों में प्राय: गेय तत्त्व का अभाव रहता है क्योंकि परम्परा यह है कि कवि अपनी रचना का स्वयं ही पाठ करता है। उर्दू के मुशायरों में इस विधा में परिवर्तन किया गया है और वहाँ गज़ल और नज्म ऐसी गायिकाओं द्वारा गाकर पढ़ी जाती हैं कि श्रोतागण उसकी लय माधुरी से भी प्रभावित होते हैं। हिन्दी के काव्य आयोजनों में भी इस विधा को अपनाया जाना अपेक्षित हैं।

मैं बटेश्वर के पास के ग्रामीण अंचल का मूल निवासी हूँ। मेरे गाँव के आसपास जैन मन्दिरों के अवशेष हैं जिनसे विदित होता है कि ब्रजमण्डल में जैन धर्म काफी लोकप्रिय रहा। ★

(पृष्ठ १४० का शेष)

डा० शशि कान्त की रचना 'स्मृति को झंकृत कर दे,
ऐसा राग सुनाता जा'
का सस्वर गायन श्रीमती मंजरी जैन ने प्रस्तुत किया।

अन्त में, गोष्ठी के सुमेरु श्री गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी का आह्वान निम्न पंक्तियों द्वारा किया गया—

चार वेदो के ज्ञाता और हैं ब्रज के तिलक ललाम।
शब्दन सौं केलि करैं और छन्द रचैं अभिराम॥

अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में श्री चतुर्वेदी ने काव्य-रचना की वर्तमान स्थिति पर चिन्ता व्यक्त करते हुये भावप्रवण छन्दबद्ध रचना की पुन: प्रतिस्थापना की ओर ध्यान आकर्षित किया। उनके द्वारा ब्रजभाषा में रचित छन्दों के मधुर गायन से गोष्ठी का समापन हुआ।

—अंशु जैन 'अमर'

महावीर कीर्तन

—डा० ज्योति प्रसाद जैन

जय त्रिशला-नन्दन महावीर नमो ।
भव-भय-भंजन वीर नमो ।।

सिद्धारथ राज दुलारे, तिहुँ जग के उजियारे ।
जन-जन के प्यारे, जय महावीर नमो ।
पाप-निकंदन वीर नमो ।।

लोकालोक प्रकाशी, भविजन कमल विकासी ।
गुण अनन्त की राशी, जय महावीर नमो ।
हरि-कृत-वन्दन वीर नमो ।।

मोक्ष - मग - नेता, करम कलंक विजेता ।
शुद्धातम चेता, जय महावीर नमो ।
रहित-सपंदन वीर नमो ।।

करुणासागर परउपकारी, सत्य अहिंसा अवतारी ।
सुधर्म - ध्वज - धारी, जय महावीर नमो ।
भक्त-उर-चन्दन वीर नमो ।।

सन्मति के दाता, वर्द्धमान सुख - साता ।
अखिल जग - त्राता, जय महावीर नमो ।
'ज्योति'-मन-रंजन वीर नमो ।।

× × ×

वाणी वन्दना

—श्री रमा कान्त जैन

पल्लवित पुष्पित हो धरा, प्रकृति का शृंगार कर दे।
नीलिमा नभ में विराजे, फिर हरित संसार कर दे।।

भावना भू है उर्वर, सद्भावना संचार कर दे।
तमिस्र दुष्कृत्य का मिटा, सुकृत्य का आलोक भर दे।।

विनती इतनी अम्ब मेरी, इतना तू उपकार कर दे।
जगत ज्योतिर्मय कर सकूँ, लेखनी में धार धर दे।।

★

शाश्वत राग

—डा० शशि कान्त

स्मृति को झंकृत कर दे, ऐसा राग सुनाता जा।।

अक्षि-पटल में सोयी, छवि को दुलराता जा।
सम्मोहन की झीनी चादर, हौले से ढुलकाता जा।।१।।

स्मृति को झंकृत कर दे, ऐसा राग सुनाता जा।।

मन्द गन्ध की भीनी सुवास, दिसि-दिसि फहराता जा।
राही के पथ की कुंठा, ढलकाता—बिखराता जा।।२।।

स्मृति को झंकृत कर दे, ऐसा राग सुनाता जा।।

चन्द्र-वदन है सुधा-सदन, अमृत-कण टपकाता जा।
अवसाद ठहर नहीं पाये, मन्द-मन्द मुस्काता जा।।३।।

स्मृति को झंकृत कर दे, ऐसा राग सुनाता जा।। ★

रिपोर्ट :

श्रुत-पंचमी और पुस्तकालय-स्थापना दिवस

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, के तत्त्वावधान में ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी, ३० मई, १९९८, को समिति के शोध पुस्तकालय में श्रुत-पंचमी और पुस्तकालय-स्थापना दिवस के उपलक्ष में संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें पंडिता चन्दाबाई जी की जन्म-शती के सन्दर्भ से उन्हें विनयाञ्जलि भी अर्पित की गई।

संगोष्ठी का आरम्भ आद्य पुस्तकारूढ़ **षट्खण्डागम** की वन्दना, तथा **महावीराष्टक** और **जिनवाणी वन्दना** के सामूहिक पाठ से हुआ। संगोष्ठी की अध्यक्षता करते हुए **श्री अजित प्रसाद जैन** ने बताया कि "श्रुत पंचमी पर्व शास्त्र भंडारों, ग्रन्थालयों व पुस्तकालयों की स्थापना का पर्व है जिससे गृहस्थों को भी शास्त्रों का स्वाध्याय व पठन-पाठन करना सुलभ हुआ। हमने भी २२ वर्ष पूर्व इसी दिन अपनी समिति के तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र शोध पुस्तकालय की स्थापना की थी। अतः यह हमारे पुस्तकालय की स्थापना का भी दिवस है। हमारे इस पुस्तकालय में जैन धर्म की सभी आम्नायों —दिगम्बर, श्वेताम्बर, स्थानकवासी, तेरापंथी, तारणपंथी—का साहित्य तो समान रूप से रखा जाता ही है, शोध छात्रों द्वारा तुलनात्मक अध्ययन के लिये अन्य भारतीय दर्शनों व धर्मों का महत्व-पूर्ण साहित्य भी संग्रहीत करने का प्रयास किया जाता है तथा सामान्य पाठकों की रुचि का ध्यान रखते हुये लौकिक साहित्य भी प्रचुर मात्रा में रखा गया है। हमारे पुस्तकालय से सम्प्रति लखनऊ, कानपुर एवं अवध विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध अनेक शोधार्थी छात्र व अन्य पाठक लाभ उठा चुके हैं तथा उठा रहे हैं।"

उन्होंने यह भी बताया कि "धर्मनिष्ठ श्रावक-श्राविकाओं द्वारा शास्त्र दान द्वारा पुण्य अर्जन करने की उदात्त भावना ने मुद्रण युग के पूर्व काल में श्रावक लिपिकारों के एक वर्ग को ही जन्म दे दिया था

जो स्नानादि के बाद शुद्ध वस्त्र पहन कर शुद्ध रूप से तैयार की गई स्याही से हाथ से बने शुद्ध कागज पर बड़े भक्ति भाव से सुन्दर लिपि में शास्त्रों की प्रतिलिपियां तैयार किया करते थे। इन में से ही कालान्तर में एक से बढ़ कर एक शास्त्र-मर्मज्ञ गृहस्थ विद्वानों का प्रादुर्भाव हुआ।"

पर्व के ऐतिहासिक महत्त्व को उद्घाटित करते हुए उन्होंने कहा कि "**षट्खण्डागम** को सम्पूर्णता के साथ पुस्तक रूप में लिपिबद्ध किये जाने वाले प्रथम महान् ग्रन्थ का गौरव प्राप्त है। एक सहस्र वर्ष पूर्व आचार्य इन्द्र नन्दि द्वारा सन् ७५ ई० की इस घटना का श्रुतावतार के रूप में रोचक वर्णन कदाचित् समस्त विश्व के इतिहास में, किसी भी ग्रन्थ के सम्पूर्णता के साथ पुस्तक रूप में लिपिबद्ध किये जाने का सर्वाधिक प्राचीन प्रामाणिक ऐतिहासिक उल्लेख है।

शक-कुषाण सं० ५४ (सन् १३२ ई०) में प्रतिष्ठित की गई पुस्तक-धारिणी वाग्देवी सरस्वती की एक प्रतिमा मथुरा के कंकाली टीले के उत्खनन से प्राप्त हुई थी जो वर्तमान में लखनऊ के राज्य संग्रहालय में संग्रहित एवं प्रदर्शित है। (दृष्टव्य **शोधादर्श**-२६, पृ० १६७-६९)। यह प्रतिमा उस काल में चल रहे सारस्वत अभियान का प्रतीक है। लेखन विधि की खोज के साथ ग्रन्थ रचना तथा लेखन का कार्य द्रुत गति से होने लगा।

मध्य युगीन शिला लेखों तथा ग्रन्थों के प्रशस्ति लेखों से पता चलता है कि उस काल में धर्म निष्ठ राजन्य एवं श्रेष्ठिगण आचार्यों, पंडितों एवं कवियों से सविनय अनुरोध करके धर्म ग्रन्थों की रचना कराते थे तथा ग्रन्थ के पूर्ण हो जाने पर श्रुत पंचमी पर्व पर ग्रन्थ को हाथी पर विराजमान कर तथा गाजे-बाजे के साथ शोभा यात्रा के साथ जिन मन्दिर में ले जाकर स्वाध्याय हेतु विराजमान कर देते थे। कवि चक्रवर्ती यति श्री मल्लिषेण मुनि कृत **महापुराण** के प्रशस्ति लेख से पता चलता है कि ग्रन्थ का लेखन शक सं० ९६९ की ज्येष्ठ शु० ५ को पूर्ण हुआ था। **पास नाह चरिउ** के रचायिता कवि-शेखर विबुध श्रीधर (१२वीं शती ई०) ने उक्त ग्रन्थ की

रचना दिल्ली के श्रेष्ठि नट्टल साहु के अनुरोध पर की थी तथा ग्रन्थ के पूर्ण हो जाने पर उसकी शोभा यात्रा ज्येष्ठ शु० ५ को निकाली गई थी।

हौयसल सम्राट विष्णु वर्द्धन की पट्टमहादेवी शान्तला (१०९०-११२० ई०) के द्वारा **षट्खण्डागम** ग्रन्थ के (एक लाख श्लोकों के समान विस्तार वाली **धवला** टीका सहित) ताड़ पत्रों पर उत्कीर्ण करा कर जिन मन्दिर को भेंट किये जाने का उल्लेख श्रवणबेलगोला के एक शिला लेख में अंकित है। उससे भी १०० वर्ष पूर्व के एक अन्य शिला लेख में अंकित है कि चौलुक्य सम्राट तैलप देव आहवमल्ल के शासन काल में धर्मपरायणा अतिमब्बे ने कन्नड महाकवि पोन्न से **शान्तिनाथ पुराण** की रचना कराई तथा इसकी एक सहस्र प्रतियां ताड़ पत्रों पर उत्कीर्ण करा कर विभिन्न नगरों के जिन मन्दिरों में स्वाध्याय हेतु भेंट रूप में भिजवाई थी तथा उपकृत चतुर्विध संघ ने उन्हें **दान चिन्तामणि** के विरुद से अलंकृत किया था। अपनी इस बीसवीं शताब्दि में भी मूडबिद्री के जैन मठ में संरक्षित षट्खण्डागम ग्रन्थ के (**धवला** टीका सहित) प्राचीन कन्नड लिपि में ताड़ पत्रों पर उत्कीर्ण एक मात्र ज्ञात प्रति से देवनागरी लिपि में प्रतिलिपि तैयार कराने का भारी व्यय वहन करने के लिए (जिसके कारण इस महाग्रन्थ का १८ जिल्दों में मुद्रण सम्भव हो सका) समाज ने विदिशा के श्रेष्ठी लक्ष्मी चन्द्र जी को **श्रीमंत सेठ** की दुर्लभ उपाधि से अलंकृत किया था।''

इस शताब्दी की विख्यात महिला विदुषी पंडिता चन्दाबाई जी को भी उन्होंने अपनी विनयांजलि अर्पित की।

श्रीमती सितारा जैन ने चन्दाबाई जी के जीवन और उनके साथ हुए पत्राचार से भी अवगत कराया जिसमें सहज आत्मीयता परिलक्षित थी। **डा० पूर्ण चन्द्र जैन** और **श्री नरेश चन्द्र जैन** ने चर्चा में भाग लिया। **श्री रमा कान्त जैन** ने चन्दाबाई जी के प्रति श्री तन्मय बुखारिया की भावभीनी काव्य रचना का पाठ किया।

चर्चा का समापन करते हुए **डा० शशि कान्त** ने कहा कि वर्तमान युग शोध-समीक्षा का है अतः हमें अपने ग्रन्थों का समुचित

शोधन करने की आवश्यकता है और जो कुछ आम्नाय प्रतिबद्धता-हठधर्मिता केकारण हमारे साहित्य में प्रवेश कर गया है उसकी शल्य-कारी समीक्षा किया जाना अपेक्षित है। आज जो बहुत सा साहित्य गुरु-अन्धश्रद्धा से प्रकाशित और सृजित किया जा रहा है उस पर भी नियन्त्रण किया जाना अभीष्ट है, अन्यथा कुछ वर्षों बाद यह निर्णय करना ही कठिन हो जायेगा कि क्या वास्तविक है और क्या कपोल-कल्पित, तथा सब कुछ कल्पित-अकल्पित आगम के रूप में प्रतिष्ठित हो जाएगा।

ब्र० पंडिता चन्दाबाई जी की चर्चा करते हुए **डा० शशि कान्त** ने बताया कि चन्दाबाई जी का जन्म १८८९ ई० में वृन्दावन के विशुद्ध वैष्णव परिवार में हुआ था, परन्तु उनका विवाह आरा के एक धार्मिक जैन परिवार में बा० देव कुमार के छोटे भाई धर्म कुमार के साथ १९०० ई० में हुआ। १९०१ ई० में १२ वर्ष की अल्प वय में ही उन्हें वैधव्य दुःख झेलना पड़ा। तथापि जेठ देव कुमार जी के संरक्षण में उन्होंने अध्ययन किया और स्त्रियों में शिक्षा के प्रसार का अभि-यान १९०७ ई० में 'जैन कन्या विद्यालय' की स्थापना से प्रारम्भ किया। जैन महिलाओं में जागृति लाने के उद्देश्य से १९११ में उन्होंने अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महिला परिषद की स्थापना की और इस परिषद के अन्तर्गत १९२१ में **जैन महिलादर्श** पत्रिका का प्रकाशन भी प्रारम्भ किया। १९२२ में उन्होंने आरा के निकट धनपुरा में धर्मकुंज के अन्दर 'जैन बाला विश्राम' की स्थापना की जो एक आवासीय उच्चतर माध्यमिक कन्या विद्यालय के रूप में विकसित हुआ। १९५४ में उनका अमृत महोत्सव मनाया गया और उन्हें अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया गया। २८ जुलाई, १९७७, को ८८ वर्ष की आयु पाकर अन्तिम समय में आर्यिका-व्रत धारण करके उन्होंने समाधिमरण पूर्वक देह-त्याग किया। उनके जीवन का उद्देश्य था— न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं न पुनर्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्त्ति नाशनम्।

आधुनिक काल की एक युग-प्रधान महिला के रूप में जिन्होंने

(शेष पृष्ठ १५१ पर)

संस्मरण :

ब्र० पंडिता विदुषी-रत्न श्रद्धेया चन्दाबाई

—श्रीमती सितारा देवी जैन

पू० चन्दाबाई जी से मेरा परिचय तब हुआ जब मैं कालेज की शिक्षा प्राप्त कर रही थी। वे गजरथ महोत्सव में अपनी सहयोगियो के साथ जबलपुर आई थीं। मैं उनके व्यक्तित्व से बहुत प्रभावित थी। प्रारम्भ से ही धर्म के प्रति मेरी बहुत आस्था थी तथा मैं समाज के लिए भी कुछ करना चाहती थी। बी० ए० में पढ़ते हुए भी मैं अनेक जैन संस्थाओं से जुड़ी हुई थी और कांग्रेस की भी सक्रिय सदस्या थी। १९५८ से १९६९ तक पू० चन्दाबाई जी से मेरा सम्पर्क बना रहा। मैं उनको पत्र लिखती थी। उनके पत्र मेरे पास आते थे और मैं **जैन महिलादर्श** में अपने लेख प्रकाशनार्थ भेजती थी। पू० चन्दाबाई जी मुझे श्री जैन बाला विश्राम में अध्यापन कार्य हेतु एवं संस्था के काम में सहायता करने के लिये आरा बुला रही थीं। मेरी भी इच्छा थी कि मैं उनके सानिध्य में रहकर अपने जीवन को सफल करूं। मेरी इच्छा पूरी न हो सकी और परिवार वालों ने मुझे आरा जाने की अनुमति नहीं दी। एम० ए०, बी० टी०, करने के बाद मैंने मध्य प्रदेश शासन के अन्तर्गत शिक्षा विभाग में सेवा-योजन किया, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई उच्चतर माध्यमिक शाला, दमोह, में व्याख्याता रही, और पूरी जिन्दगी अध्यापन कार्य में व्यतीत की। हमेशा मेरे मानस पटल पर पू० चन्दाबाई जी छाई रहीं, मैं सदा उनकी प्रशंसिका (Fan) रही और आज भी हूँ। उनके पत्र मैंने अमूल्य निधि के रूप में संजोकर रखे हैं। उनके दि० ३-६-५८ के पत्र की अनुकृति इसी अंक में प्रकाशित है।

जब सन् १८८९ में उत्तर प्रदेश के वृन्दावन नगर में चन्दाबाई का जन्म हुआ, देश में अंग्रेजों का राज्य था, भारतमाता पराधीनता की बेड़ियों से जकड़ी हुई थी। बड़े-बड़े नेता एवं जनता स्वतन्त्रता संग्राम में जूझ रहे थे। चारों ओर से यही आवाज आ रही थी—'ओ देश नींद से जाग, जाग।' समाज की स्थिति अत्यन्त दयनीय

थी। बाल विवाह, वृद्ध विवाह, परदा प्रथा, अशिक्षा आदि अनेकों कुरीतियाँ समाज में व्याप्त थीं।

१२ वर्ष की अल्पायु में चन्दाबाई वैधव्य के शोक सागर में डूब गयीं। परन्तु उनके स्वर्गीय पति धर्म कुमार के बड़े भाई बा० देव कुमार ने चन्दाबाई को शोक सागर से उबारा और विद्या अध्ययन करने की प्रेरणा दी। चन्दाबाई ने धर्मशास्त्र, न्याय, साहित्य और व्याकरण की शिक्षा प्राप्त कर अथक परिश्रम द्वारा काशी की 'पंडिता' परीक्षा उत्तीर्ण की। उन्होंने **रत्नकरण्ड श्रावकाचार, तत्त्वार्थ सूत्र, द्रव्यसंग्रह, न्याय दीपिका** और **चन्द्रप्रभ चरित्र** का अध्ययन कर जैन धर्म की महत्ता को जाना व जैन तीर्थों की वन्दना भी की।

पंडिता चंदाबाई के पिता श्री नारायणदास अग्रवाल कांग्रेस के प्रख्यात कार्यकर्ता एवं पं० मोतीलाल नेहरू के अन्यतम सहयोगी थे। १९२१ ई० में महात्मा गांधी जी का असहयोग आन्दोलन चल रहा था जिसमें चंदाबाई ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया। अंतस में ज्ञान-ज्योति और विश्व-वात्सल्य का दीपक जलाकर अंधकार से लड़ने और नारी जीवन की सार्थकता सिद्ध करने के लिये पंड़िता चंदाबाई ने १९२२ ई० में आरा में 'श्री जैन बाला विश्राम' की स्थापना का गौरवपूर्ण कार्य सम्पन्न किया। इसी समय उन्होंने **जैन महिलादर्श** पत्रिका का भी प्रकाशन प्रारम्भ किया जिसका उद्देश्य महिलाओं में शिक्षा, धर्म तथा संस्कृति के प्रति रुचि जागृत करना था। इस पत्रिका से महिलाओं का गौरव एवं सम्मान बढ़ा।

स्त्रियों की पर्दा प्रथा और दासता को दूर करने के लिये उन्होंने 'अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला परिषद' की स्थापना की। राष्ट्रीय आंदोलन के जमाने में महात्मा गांधी, कस्तूर बा, डा० राजेन्द्र प्रसाद, पं० जवाहर लाल नेहरू, नेता जी सुभाष चंद्र बोस व आचार्य कृपलानी 'श्री जैन बाला विश्राम', धर्मकुंज, धनपुरा, आरा में आकर ठहरते थे। आश्रम की शिक्षा गांधी जी द्वारा प्रतिपादित राष्ट्रीय शिक्षा के आधार पर दी जाती थी। जैन धर्म और संस्कृत की शिक्षा तथा सभी विषयों का माध्यम हिन्दी था। आश्रम में

स्वदेशी वस्त्रों को पहनने की प्रेरणा दी जाती थी तथा आश्रम की शिक्षिकायें एवं छात्रायें चरखा चलाती थीं और कपड़े बुनती थीं।

पं० चन्दाबाई उच्चकोटि की लेखिका थीं। बाल विवाह के कारण छोटी-छोटी बालिकाओं का जीवन नष्ट हो रहा था। स्त्रियां पर्दा एवं दासता का जीवन जीने के लिये विवश थीं। पति की मृत्यु के बाद वैधव्य का घोर दुःख एवं परिवार तथा समाज की यातनायें सहती थीं। उनके ऊपर अपार प्रतिबन्ध थे। बालिकायें वृद्धों के हाथों बेची जाती थीं। वृद्ध विवाह के द्वारा माता-पिता धन के लालच में यह कुकृत्य करते थे। स्त्री शिक्षा पर भी कोई ध्यान नहीं दिया जाता था। इन सब दुःखद विभीषिकाओं से मुक्त करने के लिये उन्होंने समाज में जागृति उत्पन्न करने के लिये कई पुस्तकें लिखीं, यथा—**उपदेश रत्नमाला, सौभाग्य रत्नमाला, आदर्श कहानियाँ, आदर्श निबन्ध**, और **निबन्ध दर्पण**।

आपको देश भक्ति, समाज सुधार, लेखन, धर्म ज्ञान एवं सांस्कृतिक निष्ठा से विभूषित होने के कारण उपराष्ट्रपति डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन के कर कमलों द्वारा १९५४ ई० में एक सार्वजनिक समारोह में **अभिनन्दन ग्रन्थ** भेंट किया गया था। जीवन के अन्तिम दिनों में वे साध्वी के सर्वोच्च पद 'आर्यिका' की दीक्षा लेकर 'आर्यिका चन्दाबाई' बन गयी थीं। २८ जुलाई, १९७७, को समाधिमरण पूर्वक उन्होंने देह त्याग किया। देश के इतिहास में उनका नाम अमर रहेगा। ★

(पृष्ठ १४८ का शेष)

जैन समाज में विशेष कर स्त्रियों की शिक्षा के लिए जागृति उत्पन्न की और शिक्षा द्वारा महिलाओं में आत्म सम्मान की भावना को जगाया, उनमें सामाजिक चेतना जागृत की, उन्हें राष्ट्रीय भावना के प्रति उन्मुख किया और उनमें साहित्यिक अभिरुचि को प्रोत्साहित किया, वह सदा स्मरण की जाती रहेंगी। उनके द्वारा स्थापित जैन बाला विश्राम ने ७५ वर्ष पूरे कर लिये और उनका जन्म शती सम्बद्ध दशक यह है—उनके प्रति हमारी विनयांजलि समर्पित है।

—**कु० हेमा सक्सेना**, पुस्तकालय सहायिका

जैन संस्कृति : भारतीय डाक टिकटों पर

—श्री गुलाब चन्द्र जैन

६ मई सन् १९४० ई० को ग्रेट ब्रिटेन-इंग्लैण्ड में सर्वप्रथम डाक टिकट का प्रारम्भ हुआ था। काले रंग की एक छोटी सी चिप्पी पर महारानी विक्टोरिया के चित्रांकित इस डाक टिकट का मूल्य एक पेनी था और इसे 'पेनी ब्लैक' के नाम से जाना जाता था। भारत में १ जुलाई, १८५२, को ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने सर्वप्रथम डाक टिकट जारी किया था। एक चक्राकार गोल मुहर के मध्य ईस्ट इण्डिया कम्पनी का निशान और उसके नीचे टिकट का मूल्य 'आधा आना' अंकित था।

इसके पश्चात सिंध (वर्तमान पाकिस्तान) के कमिश्नर वार्टल प्रेरी ने शासकीय कार्यों के लिये डाक टिकटों का उपयोग आरम्भ किया। उस समय इसे 'सिंध डाक' कहा जाता था। खराब छपाई एवं अच्छा कागज न होने से ये अधिक नहीं चले। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने भी 'सिंह व ताड़वृक्ष' की आकृति मुद्रित कर एक डाक टिकट जारी किया, किन्तु यह योजना भी सफल नहीं हुयी। बाद में डिप्टी सर्वेयर जनरल एच० एल० थूलियर ने अक्टूबर १८५४ में आधा आना, एक आना, दो आना व चार आने वाले डाक टिकट नीले, लाल, पीले व हरे रंगों में मुद्रित कर प्रचारित किये। इन पर बीच में महारानी विक्टोरिया के सिर का चित्र, ऊपर इण्डिया व नीचे टिकट का मूल्य अंकित था। जन साधारण में प्रचारित ये सर्वप्रथम नियमित डाक टिकट थे।

सन् १९०१ में किंग एडवर्ड सप्तम एवं सन् १९१० में किंग जार्ज पंचम के चित्र वाले डाक टिकट प्रचारित हुए। फरवरी १९३१ में नई दिल्ली के उद्घाटन के अवसर पर एक पैसे से लेकर एक रुपया मूल्य तक के छह डाक टिकटों का एक सेट जारी किया गया था जिस पर किंग जार्ज पंचम के चित्र के साथ-साथ दिल्ली का पुराना किला, वायसराय हाउस तथा सेक्रेटेरियट आदि प्रशासकीय भवनों के चित्र मुद्रित थे। ६ मई, १९३५, को किंग जार्ज पंचम के

राज्यारोहण की रजत जयंति के अवसर पर एक पाई से लेकर आठ आना मूल्य तक के सात टिकटों का एक सेट जारी हुआ था जिन पर भारत की प्रसिद्ध इमारतों व मन्दिरों—गेट-वे आफ इण्डिया (मुम्बई), विक्टोरिया मेमोरियल (कलकत्ता), रामेश्वरम् मन्दिर (तमिलनाडु), ताजमहल (आगरा), स्वर्ण मंदिर (अमृतसर), बौद्ध पेगोडा (बर्मा), तथा सवा आने के एक डाक टिकट पर **शीतलनाथ जैन मन्दिर (कलकत्ता)** का चित्र अंकित था। भारतीय डाक टिकटों पर जैन संस्कृति से सम्बन्धित यह सर्वप्रथम चित्रांकन कहा जा सकता है।

भारत के स्वतन्त्र होने के पश्चात सन् १९४७ से आज तक विविध मूल्य एवं चित्रों वाले अनगिनत डाक टिकट प्रचारित हो चुके हैं, किन्तु मात्र दस टिकट ही ऐसे हैं जिन पर जैन संस्कृति से सम्बन्धित मन्दिरों, मूर्तियों या व्यक्तियों के चित्र अंकित हैं। मूल्य एवं प्रकाशन तिथि सहित इन टिकटों का परिचय नीचे प्रस्तुत है—

१. दिनांक १५ अगस्त, १९४९, को तेरह डाक टिकटों के प्रचारित सेट में, १५ रुपया मूल्य के एक टिकट पर शत्रुंजय (पालिताना) के जैन मन्दिर का चित्र अंकित है। इस सीरीज का यह सर्वाधिक मूल्य का टिकट था। इसमें लाल रंग के घेरे के मध्य भूरे गुलाबी रंग में जैन मन्दिर का चित्र मुद्रित किया गया है। चित्र के नीचे **शत्रुंजय जैन मन्दिर** व नाम के नीचे अंग्रेजी में 'इण्डिया' अंकित है।

२. ३० दिसम्बर, १९७२, को प्रमुख राकेट वैज्ञानिक श्री विक्रम अम्बालाल साराभाई (१९१९–१९७१) की स्मृति में उनकी प्रथम पुण्यतिथि पर हलके भूरे व हरे रंग में मुद्रित बीस पैसा मूल्य का टिकट जारी किया गया था। टिकट पर विक्रम साराभाई के चित्र के साथ, बाईं ओर वृक्षों का झुरमुट व उसके बीच से आकाश में ऊपर की ओर उठता हुआ एक राकेट चित्रित है।

३. तीर्थंकर भगवान महावीर के पच्चीस-सौवें निर्वाण वर्ष की स्मृति स्वरूप १३ नवम्बर, १९७४, को पच्चीस पैसा मूल्य का

एक डाक टिकट प्रचारित किया गया था । इस पर हलके सलेटी रंग में पावापुरी (बिहार) में निर्मित **जल मन्दिर** की अनुकृति अंकित है । डाक टिकट का परिचय देते हुये विभाग ने लिखा है—

"भगवान महावीर का जन्म लिच्छवियों की राजधानी वैशाली में हुआ था । उनके पिता का नाम सिद्धार्थ था । वैभव पूर्ण परिस्थिति में जन्म लेकर भी महावीर ने सांसारिक सुखों का परित्याग कर दिया और सन्यासी होकर पंच महाव्रत—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का पालन करने लगे ।

बारह बर्षों तक त्याग और तपस्या का जीवन व्यतीत कर भगवान महावीर ने बोधि प्राप्त की । वे जैनों के चौबीसवें तीर्थंकर हुए । उन्होंने अहिंसा, समानता, आत्मदर्शन और सह-अस्तित्व की आवश्यकता का उपदेश दिया । ये जैन धर्म के मूल सिद्धांत हैं । उन्होंने सभी वासनाओं से दूर रहने का भी उपदेश दिया और लोगों को सम्यक् ज्ञान, सम्यक् धर्म, सम्यक् आचार और सम्यक् तप का सच्चा मार्ग दिखाया ।

महावीर का निर्वाण बिहार के पावापुरी में ७२ वर्ष की आयु में हुआ था । डाक व तार विभाग इस महात्मा की स्मृति में उनके निर्वाण के पच्चीसवें शताब्दि वर्ष के अवसर पर एक डाक टिकट जारी कर उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है ।"

४. भारतीय जैन पुरातत्त्वीय धरोहर को प्रदर्शित करते हुये २७ जुलाई, १९७८, को दो डाक टिकट जारी किये गये थे । अनेक रंगों में मुद्रित पच्चीस पैसे के एक डाक टिकट पर कच्छ (गुजरात) के पुरातत्त्व संग्रहालय में प्रदर्शित, प्रस्तर निर्मित **ऐरावत हाथी** की अनुकृति अंकित है । ऐरावत हाथी की पीठ पर विमान युक्त कलात्मक एवं मनोहर हौदा है जिसमें एक मानवाकृति, सम्भवत: इन्द्र देवता, आसीन है । हाथी के मस्तक पर महावत भी निर्मित है।

५. द्वितीय डाक टिकट पर भगवान शीतलनाथ का लांछन **कल्पवृक्ष** चित्रित है । शीतलनाथ की जन्मभूमि विदिशा (म० प्र०) के पुरातात्त्विक उत्खनन में 'कल्पवृक्ष' युक्त स्तम्भ शीर्ष प्राप्त हुआ था । प्रस्तर निर्मित यह कल्पवृक्ष पांच फुट नौ इंच ऊंचा है । इसमें

कल्पवृक्ष के सभी गुणो की कल्पना साकार की गई है। संभवतः यह स्तम्भ शीर्ष भगवान शीतलनाथ को समर्पित किसी विशाल जिनालय के समक्ष स्थापित था। वर्तमान में यह अनुपम कलाकृति भारतीय कला संग्रहालय, कलकत्ता, में प्रदर्शित है। विविध रंगों में चित्रित इस टिकट का मूल्य पचास पैसा है।

६. ९ फरवरी, १९८१, को प्रचारित, एक रुपया मूल्य के एक डाक टिकट पर कर्णाटक प्रदेश की इंद्रगिरि पर्वतमाला पर निर्मित **श्री गोम्मटेश्वर बाहुबली** की प्रतिमा का ऊपरी अर्द्धभाग हलकी नीली पृष्ठ भूमि के मध्य, भूरे गुलाबी रंग में चित्रित है। २० फरवरी, १९८१, को सम्पन्न होने वाले श्री गोम्मटेश्वर बाहुबली के महा-मस्तकाभिषेक के पूर्व यह जारी किया गया था।

७. राजस्थान के प्रखर राजनेता एवं मुख्यमन्त्री **श्री मोहन लाल सुखाड़िया** की स्मृति में २ फरवरी, १९८८, को आसमानी रंग में मुद्रित साठ नया पैसा मूल्य का टिकट जारी किया गया था।

८. महाराष्ट्र निवासी, महान शिक्षाविद **श्री माऊराव पाटिल** की शिक्षा के क्षेत्र में उत्कृष्ट सेवाओं को स्थायित्व प्रदान करने हेतु भारतीय डाक विभाग ने ९ मई, १९८८, को उनके चित्र सहित एक डाक टिकट प्रचारित किया था। इस पर श्री पाटिल के बायीं तरफ अध्यापन कराते हुए शिक्षक एवं अध्ययनरत पांच विद्यार्थी भी अंकित हैं।

९. २९ अगस्त, १९९१, को जारी किये गये, एक रुपया मूल्य के एक डाक टिकट पर जैन मुनि श्री मिश्रीमल का चित्र मुद्रित है। हलके भूरे रंग में, मुख पट्टिका बांधे मुनि श्री के चित्र के बायीं ओर उनका समाधिस्थल (छतरी) भी चित्रित है और ऊपरी भाग में हिन्दी व अंग्रेजी में उनका नाम **मुनिश्री मिश्रीमल** अंकित है।

१०. २८ जनवरी, १९९८, को विख्यात प्राच्य विद्या संशोधक **डा० जगदीश चन्द्र जैन** पर एक डाक टिकट जारी किया गया। पुणे में भंडारकर प्राच्य विद्या शोध संस्थान में श्री मोहन धारिया द्वारा इस डाक टिकट का विमोचन किया गया था।

(शेष पृष्ठ १५९ पर)

भारत में पशु-वध : सरकारी संरक्षण में

—श्री कैलाश भूषण जिन्दल

यह कैसी बिडम्बना है कि जिस देश ने विश्व को **अहिंसा परमो धर्मः, वसुधैव कुटुम्बकम्, सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया,** और **सत्त्वेषु मैत्रिम्** का पाठ पढ़ाया, तथा जिसके संविधान में लिखा है कि "राज्य गाय और बछड़ों तथा अन्य दुधारू और वाहक पशुओं की नस्लों के परि-रक्षण और सुधार के लिए और उनके वध का प्रतिषेध करने के लिये कदम उठायेगा" और "भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह प्राणिमात्र के प्रति दयाभाव रखे," उस देश की सरकार विदेशी मुद्रा की मृगतृष्णा में देश की ५००० वर्ष पुरानी संस्कृति का विनिमय कर रही है।

पश्चिम की संस्कृति यह मान कर चलती है कि पशु-पक्षियों में मनुष्य जैसी उदात्त अनुभूतियाँ नहीं हैं, वे महज़ सहज-बोध और प्रतिक्रिया के पुलिन्दे हैं, तथा उनमें न तो चेतना है और न आत्मा। किन्तु भारत में ऐसा नहीं है। यहाँ **आत्मवत् सर्वभूतेषु** का बोध-वाक्य गूँजता रहा है। **जैसा मैं, वैसे ये**—यहाँ के देशवासियों का प्रेरणा-वाक्य रहा है। बूचड़खाने सह-अस्तित्व की पवित्र भावना के प्रति एक करारी चुनौती हैं। सरकारी संरक्षण में बड़े पैमाने पर चल रहे पशु-वध के कुछ आँकड़े नीचे दिये जा रहे हैं जो चौंकाने वाले हैं। यथा—

१. भारत सरकार ने चतुर्थ पंच-वर्षीय योजना के पश्चात् मांस उद्योग के नौ निगमों की स्थापना की। इन नौ निगमों के बूचड़खानों के आधुनिकरण पर सातवीं पंचवर्षीय योजना में १३ करोड़ रुपये की लागत आई।

२. अंग्रेजों के शासन काल में केवल ३०० क़त्लख़ाने थे, आज यह संख्या बढ़कर ३६,०३१ हो गयी है। वैध क़त्लख़ानों के अतिरिक्त, देश में हज़ारों अवैध क़त्लख़ाने भी हैं, जिनमें सूरज की

पहली किरण के साथ, लाखों पशुओं को मौत के घाट उतार दिया जाता है।

३. १२६ एकड़ में विस्तृत देवनार (महाराष्ट्र) एशिया का सब से बड़ा क़त्लख़ाना है। इसका ८-८ घण्टों की पाली में चलने वाला, संयंत्र २४ घण्टे हत्या करता रहता है। क़त्लख़ाने में तीन चेन (जंजीरें) हैं। प्रत्येक चेन की २,००० पशुओं की वध-क्षमता है। इसके अलावा, फ़र्श-से-हटकर विधि (off-floor system) द्वारा ४०० से ६०० तक बड़े पशु भी प्रतिदिन काटे जाते हैं। वर्ष १९८७-८८ में इस वध-शाला में १,२०,००० बैल, ८० हज़ार भैंसे तथा पाड़े, २५ लाख भेड़-बकरियाँ, ५,२०० बछड़े और ५० हज़ार सुअर काटे गए।

४. एक विदेशी कम्पनी अल-कबीर एक्सपोर्ट्स लिमिटेड को ४ मई, १९८९, को आन्ध्र प्रदेश सरकार ने एक यांत्रिक क़त्ल-ख़ाना (Abettoire) स्थापित करने की अनुमति दे दी। हैदराबाद से ५० किलोमीटर दूर, मेदक जिले के रुद्रारमा ग्राम की ३०० एकड़ ज़मीन पर ४० करोड़ रुपये की लागत से यह क़त्लख़ाना तैयार हुआ। अपने उद्घाटन भाषण में कम्पनी के प्रबन्ध-निदेशक ने कहा : "हमारा मुख्य कार्य मध्य-पूर्व देशों में निर्यात के लिये भारतीय मांस को प्राप्त करना और संसाधित करना है। भारत में ७,५०,००,००० भैंस-पाड़े हैं, जिनमें से क़त्ल के लिये ३,३०,००,००० भैंस-पाड़ों को चुना जायेगा।" अपने लक्ष्य की आपूर्त्ति के लिए कम्पनी प्रतिवर्ष ८० लाख मूक प्राणियों को मौत के घाट उतार कर १५,००० टन जमा हुआ भैंस-मांस तथा ३,००० टन गो-मांस निर्यात करती है। यह उल्लेखनीय है कि 'मध्य-पूर्व देश' (Middle East countries) से तात्पर्य पश्चिम एशिया के सऊदी अरब, अरब अमीरात आदि मुस्लिम क्षेत्रों से है, अतः यह वध हलाल विधि से किया जाता है जो पशुओं के लिये विशेष यन्त्रणादायक होता है। यह भी विस्मयकारी तथ्य है कि इसका कार्यकारी निदेशक एक सुश्रावक जैन है।

५. ब्रुक बॉण्ड कम्पनी का बोरवली (मुम्बई) स्थित मैफको कारख़ाना टीन के डिब्बों में बन्द माँस का उत्पादन करता है। यह डिब्बे ईरान को खाड़ी के इर्द-गिर्द देशों को निर्यात किये जाते हैं। कोरगाँव और नांदेद में मैफको ने बड़े भैंसों को मारने के संयंत्र लगा रखे हैं। १९८८-८९ में २०,००० टन भैंसों का हिमशीतित मांस मलेशिया (जो भी एक मुस्लिम देश है) भेजा गया, जिससे कम्पनी को ९० करोड रुपयों की आमद हुई। सुअर के मांस उत्पादन के लिये मैफको के विभिन्न शहरों में आठ संयंत्र हैं।

६. भारत की राजधानी दिल्ली में ही प्रति माह लगभग ३ लाख मवेशी अर्थात् सालाना लगभग ३६ लाख मवेशी काटे जाते हैं। दिल्ली-स्थित ईदगाह क़त्लख़ाने में वर्ष १९९०-९१ में ५,८८,९२२ भैंसें तथा १८,००,५५७ भेड़-बकरियों का क़त्ल हुआ।

७. पंजाब में चण्डीगढ़ के निकट पटियाला जिले के डेरा-बस्ती कस्बे में आस्ट्रेलिया के सहयोग से पंजाब मीट्स इण्डस्ट्री ने एक आधुनिक क़त्लख़ाना बनाया है, जिसमें हर दिन २,००० पशुओं का वध होगा।

सारांशत:, देश के क़त्लख़ानों में प्रतिदिन ६०,००० मवेशी (गाय, भैंस, बैल, भैंसे, पाड़े, बछड़े-बछिया) मौत के घाट उतारे जाते हैं, जिनसे साल भर में १२ लाख टन मांस का उत्पादन होता है। इसमें से ६० हज़ार टन मांस निर्यात किया जाता है। इस निर्यात से वर्ष १९९३-९४ में सरकार को १९८ करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा प्राप्त हुई थी। १९७० में भारत का पशुधन ३३ करोड़ ६४ लाख था। जिस रफ्तार से भारत में पशु-संहार हो रहा है, उसे देखते हुए, २१वीं शती में प्रवेश पर १ जनवरी २००० की सुबह एक पशु-विहीन भारत की सुबह सिद्ध होगी! देखना है कि गो-रक्षा और गो-संवर्धन के प्रति प्रतिबद्ध भारतीय जनता पार्टी अपने शासन काल में क्या इन मूक पशुओं को जीवित रहने का संवैधानिक अधिकार दिलाने के लिये कोई कारगर कदम उठा पायेगी।

——

प्रतिक्रिया

पिच्छि की मर्यादा का अवमूल्यन न हो

–श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन

शोधादर्श-३४ के सम्पादकीय में भट्टारक-संस्था के सन्दर्भ में व्यक्त विचार सन्तुलित और सुसंगत तो हैं ही, चिन्तनीय भी हैं। हमारे मन में भी यह प्रश्न उठता रहा है कि जिनशासन में भट्टारकों की मुद्रा किस श्रेणी में आती है? **मूलाचार** में तो स्वयंपतित मयूर-पंखों से निर्मित पिच्छि को योगियों का लिंग या चिन्ह बताया गया है (स्वयंपतितपिच्छानाँ लिंगं चिह्नं च योगिनाम्)। **भाव प्राभृत** की टीका में "जिनलिंगं नग्नरूपमहनमुद्रा मयूरपिच्छिकमण्डलु-सहितं निर्मलं कथ्यते" के अनुसार निर्मल नग्नरूप ही जिनमुद्रा है। सामान्यतया दिगम्बर सम्प्रदाय में मुनि, आर्यिका, ऐलक और क्षुल्लकों के पास पिच्छि-कमण्डलु देखा जाता है। किसी के हाथों में संयम और शौच के प्रतीक इन उपकरणों को देखकर इन्हीं का बोध होता है। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि चूंकि भट्टारक भी पिच्छि धारण करते हैं, इसलिए इनका दर्जा क्या माना जाए? मुनि तो ये हैं नहीं, ऐलक भी हम इन्हें नहीं कह सकते, क्योंकि वस्त्र के नाम पर उनके पास केवल कौपीन होती है। तो क्या इन्हें हम क्षुल्लक मानें? यह भी उचित नहीं जान पड़ता, क्योंकि क्षुल्लक ग्यारह प्रतिमाओं की मर्यादा में बंधा होता है। हमने भट्टारकों को हाथ में पिच्छि लेकर जिनशासन-देव या देवियों को नमस्कार करते हुए देखा है। ऊँची कक्षा का कोई छात्र निचली कक्षा के छात्र को नमस्कार कैसे कर सकता है! इस क्रिया से तो इनकी प्रथम दर्शन

(पृष्ठ १५५ का शेष)

भारत के बाहर केवल एक ही उदाहरण उपलब्ध है। सन् १९७९ में पूर्व जर्मनी ने २५ मार्क मूल्य का एक डाक टिकट जारी किया था जिस पर श्वेताम्बर मान्यता के अनुरूप साज-सज्जा युक्त भगवान महावीर का चित्र अंकित था। ★

नोट : पृ० १५२ की पंक्ति १ के प्रारम्भ में '१९४० ई०' के स्थान पर '१८४० ई०' पढ़ा जाय।

प्रतिमा पर ही सवालिया निशान लग जाता है। मठ-मन्दिरों के रख-रखाव, विकास आदि में इनकी सतत लिप्तता या आसक्ति देखी जाती है। हवाई जहाज, कार और रेलों में ये यात्रा करते ही हैं। मठ की सम्पत्ति के स्वामी ये होते ही हैं। ऐसी स्थिति में आरम्भ-परिग्रह-अनुमति-त्याग प्रतिमाओं के पालन की सम्भावना के लिए भी कहाँ स्थान है! इनकी दीक्षा के समय इन पर किस व्रत के संस्कार किये जाते हैं अथवा इनका गुणस्थान कौन सा है, यह सब विचारणीय है। आचार्य विद्यानन्द जी महाराज ने लिखा है—"यदि हाथ में पिच्छि लेकर भी किसी के मन में आकिंचन्य भाव का उदय नहीं हुआ और परिग्रहों के प्रति तृष्णा बनी रही तो वह आत्मवंचित हँसी का ही पात्र है।"

भट्टारकों ने जिनशासन की महती सेवा की है और इसीलिये उनके प्रति हमारे मन में बहुमान भी है किन्तु जब हम उनके सामने होते हैं तो मन में एक इस प्रकार का ऊहापोह अवश्य रहता है कि हम उन्हें क्या कह कर प्रणाम कहें। यदि जयजिनेन्द्र कहें तो शायद उन्हें अच्छा नहीं लगे और इच्छामि कहना मन को रुचता नहीं। शिष्टाचार तो निभाना ही होता है/निभाना ही चाहिए, अतः हाथ जोड़कर थोड़ा माथा झुका लेते हैं।

भट्टारकों के हाथ में पिच्छि के स्थान पर अन्य उपकरण क्या हो सकता है, इस विकल्प के बारे में हमें विचार करना चाहिए। पिच्छि तो महाव्रतियों या प्रतिमाधारकों के ही हाथ में शोभा देती है। अब यह अलग बात है कि कुछ महाव्रती भी आजकल भट्टारकों का अनुकरण करने लगे हैं। इससे पिच्छि का अवमूल्यन हो रहा है, जिसे रोका जाना चाहिए।

शोधादर्श इस दिशा में प्रशंसनीय कार्य कर रहा है। समाज में व्याप्त रूढ़ियों, कुरीतियों, पूर्वबद्ध धारणाओं, शिथिलाचार आदि के निरसन में हर कोई इतना खुलकर नहीं लिख सकता। इस सत्साहस के लिए कृपया बधाई स्वीकारें।

[अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्रि परिषद के अध्यक्ष आदरणीय प्राचार्य जी की दिगम्बर जैन साधु की पहचान बनी

मयूरपिच्छि की मर्यादा में वर्तमान में कतिपय महाव्रतियों के शिथिलाचार से हो रहे अवमूल्यन को रोकने की व्यग्रता उचित ही है। पिच्छि की मर्यादा की रक्षा करना जैन धर्म की अस्मिता की रक्षा करना है जो प्रत्येक धर्मनिष्ठ श्रावक का कर्त्तव्य है। हमारी समझ में विद्वानों की जमात शास्त्रि परिषद तथा उसके धर्मज्ञ सदस्यगण धर्म की अस्मिता के सजग प्रहरी बन कर पिच्छि की मर्यादा का अवमूल्यन रोकने में प्रभावी भूमिका निभा सकते हैं। यदि अपनी परिग्रह अनुरक्तता तथा अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार अनाचार से दि० जैन श्रमणाचार को दूषित करने वाले या पदानुसार समाचारी न करने वाले साधु समझाने-बुझाने पर भी अपने को न सुधारें तो विद्वत् जन को उनके दीक्षाच्छेद/बहिष्कार के लिए समाज को जागरुक/प्रेरित करना चाहिए। पिछले ३०-३५ वर्षों में ही ऐसे दृष्टान्त उपलब्ध हैं जब समाज द्वारा किन्हीं शिथिलाचारियों को (आचार्य पद धारियों सहित) दीक्षाच्छेद करने तथा वस्त्र पहनने के लिये बाध्य किया गया था।

आज के भट्टारक गण को दि० जैन त्यागियों की किस श्रेणी के अन्तर्गत उनकी चर्या की दृष्टि से गिना जाना चाहिए, उन्हें किन शब्दों के साथ प्रणाम किया जाना चाहिये तथा क्या उनका मयूर पिच्छि धारण करना संगत एवं पिच्छि की मर्यादा के अनुरूप है, अच्छा है यदि इस विषय पर भट्टारकों में अग्रणी श्रवणबेलगोला मठाधीश स्वस्ति श्री चारुकीर्ति स्वामी जी के विचार भी प्राप्त कर लिये जायें।

यह भी उल्लेखनीय है कि आज स्वयंपतित मयूर पंखों से निर्मित पिच्छि कदाचित् ही किसी को प्राप्त होती हो। दिगम्बर जैन साधुओं के लिये पिच्छियों का निर्माण करने वाले व्यापारी मोर पंखों को थोक में मोर के शिकारियों से ही प्राप्त करते हैं। (देखें, **शोधादर्श**-३३ पृ० २७५-७६)। जीव दया का पाठ पढ़ाने वाले अहिंसा व्रतधारी साधुओं द्वारा हिंसा जन्य उत्पाद मयूरपिच्छि का उपयोग किया जाना कहां तक उचित है, यह भी विचार करने योग्य है। **—अजित प्रसाद जैन**]

जिज्ञासा

श्री शांतिलाल के० शहा की स्वाध्याय-मूलक जिज्ञासा **शोधादर्श**, ३२ (पृ० १३९-४०) और ३३ (पृ० २६६-६७) में प्रकाशित हुई थीं और उन पर परिचर्चा अंक ३२ (पृ० १४०-४४) तथा अंक ३४ (पृ० ६४-७१) में प्रकाशित हैं। उसी क्रम में श्री शहा की निम्नलिखित जिज्ञासा दी जा रही है और इस सम्बन्ध में सुधि पाठकों से यथा-संक्षिप्त विचारणा आमन्त्रित है—

जैन दर्शन-तत्त्वज्ञान में बताया गया है कि आत्मा पूर्ण चैतन्य, पूर्ण ज्ञान, पूर्ण वीर्य और पूर्ण सुख से युक्त है। जैन धर्म के कर्म सिद्धान्त में कहा गया है कि मानव के पूर्वभव और इस भव के कर्म स्वरूप एक कार्मण शरीर बनता है, और मृत्यु के बाद वह कार्मण शरीर आत्मा को, इसके कर्म के फलस्वरूप जो गति मिलने वाली है उस गति में ले जाता है। गति का अर्थ है जीवन प्रवाह। इस से यह फलित होता है कि आत्मा दुर्बल है ओर कार्मण शरीर उसको जिधर ले जायेगा, वह वहां जाती है। उसका वीर्य-बल-ज्ञान नष्ट हो जाता है अथवा लघु होता है।

लेकिन जैसा कि तत्त्वज्ञान में कहा गया है कि आत्मा पूर्ण वीर्य युक्त है, तो प्रश्न उठता है कि इस तरह से आत्मा के कार्मण शरीर के साथ जाने से क्या उसकी शक्ति नष्ट होती है ? और क्या यह विधान धर्मसंगत - युक्तिसंगत - दर्शनसंगत है ? और इसकी इस सिद्धान्त से क्या संगति है कि पदार्थ अथवा वस्तु के मूल गुण नष्ट नहीं होते, उसकी पर्याय बदलती है ?

विशेष सन्दर्भ के लिये पं० दलसुख मालवणिया की पुस्तक **आत्म मीमांसा** दृष्टव्य है।

——

साहित्य सत्कार

जैन डायरी : अ० भा० जैन तीर्थ दर्शन—ले० श्री विमलचन्द जैन, संपादक—श्री शान्तिलाल सोनी; प्रकाशक—जैन डायरीज़, डायरी हाउस, जैन मन्दिर के पास, महन्दी का चौक, रामगंज बाजार, जयपुर-३०३००३; सप्तम संस्करण १९९८; पृष्ठ २२३; मूल्य रु० ४०/-

इस डायरी में भारतवर्ष के सभी दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्रों का उनके धर्मायतनों, मार्ग स्थिति, आवास स्थिति व अन्य उपलब्ध सुविधाओं के विवरण सहित संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है। तीर्थ स्थलों की सड़क मार्ग से दूरी दर्शाते हुए एक मानचित्र भी दिया गया है। इसका सर्वप्रथम प्रकाशन भगवान् कुन्दकुन्दाचार्य के द्वि-सहस्राब्दि वर्ष १९८९ में किया गया था तथा तब से इसके पूर्व एक अंग्रेजी भाषा के संस्करण सहित छह संस्करण निकल चुके हैं। तीर्थ यात्रा एवं देश भ्रमण में रुचि रखने वालों के लिए पुस्तक उपयोगी है। यदि पिछले संस्करणों में तीर्थ क्षेत्रों के विवरण में रही त्रुटियों को तथा अब तक के हुए विकास कार्यों के आलोक में उपलब्ध सुविधाओं के विवरण को संशोधित करने की सावधानी बरती जाती तो पुस्तक की उपयोगिता और अधिक बढ़ जाती। (उदाहरणार्थ—१. पृष्ठ ७३ पर बटेश्वर के यमुना तट स्थित मन्दिर में भगवान अजित नाथ की प्रतिमा को सं० १८३८ में भट्टारक जगत भूषण जी द्वारा निर्मित लिखा गया है जब कि यह प्रतिमा १२वीं शताब्दि [विक्रम] की निर्मित है तथा भट्टारक जिनेन्द्र भूषण जी द्वारा महोबे से लाई गई थी। २. पृष्ठ ७८ पर अयोध्या में "नवाब के आदेशानुसार मस्जिद के स्थान पर आदिनाथ का मन्दिर" बनवाए जाने का उल्लेख किया गया है, जबकि मखदूम शाह जूरन गौरी द्वारा १२वीं शताब्दि के अन्तिम दशक में बिशाल आदिनाथ जिन मन्दिर को ध्वस्त करके बनाई गई मस्जिद अभी भी मौजूद है, केवल मस्जिद के पृष्ठ भाग में मस्जिद का कुछ भाग तोड़ कर नवाब के आदेश पर एक छोटे से आदिनाथ जिनालय

–टोंक मन्दिर– का निर्माण करा दिया गया था। ३. पृष्ठ ८४ पर कौशाम्बी के विवरण में रेस्ट हाउस से क्षेत्र तक ४ कि० मी० कच्चा मार्ग लिखा है, जबकि यह मार्ग वर्षों पूर्व पक्का बन चुका है।) हम आशा करते हैं कि अगले संस्करण में इस ओर यथोचित ध्यान दिया जायेगा।

प्रतिष्ठा रत्नाकर—ले० पं० गुलाबचन्द जैन 'पुष्प'; सम्पादक–डा० दरबारी लाल कोठिया तथा ब्र० जय कुमार 'निशान्त'; प्रकाशक–जैन समाज प्रीत विहार श्री महावीर स्वामी जिनालय, एफ-ब्लाक, दिल्ली-१२; पृष्ठ सं० ९७ + ६२५ = ७२२; मूल्य रु० २०१/-

वाणी भूषण, प्रतिष्ठा दिवाकर, संहिता सूरि आदि उपाधियों से अलंकृत पं० गुलाब चन्द जी 'पुष्प' ने आचार्य जय सेन (१३वीं शती ई०) के संस्कृत भाषा में निबद्ध **प्रतिष्ठा पाठ** (जो सर्वाधिक प्राचीन उपलब्ध प्रतिष्ठा विधि का ग्रंथ है) को आधार रख कर तथा अपने स्वयं के शताधिक प्रतिष्ठाएं सम्पन्न कराने के अनुभव का उपयोग करके इस ग्रन्थ की रचना की है जिसमें प्रतिष्ठा विधि के सभी आवश्यक विषयों का सांगोपांग वर्णन किया गया है। मंगलाष्टक/मंगल पाठ से लेकर जिन बिम्ब पंच कल्याणक प्रतिष्ठा तक की क्रियाओं का सप्रमाण विशद विवेचन किया गया है। विषय वस्तु एक विशिष्ट परिच्छेद सहित १४ परिच्छेदों में विभक्त की गई है। एक परिच्छेद में बाहुबलि बिम्ब प्रतिष्ठा, मानस्तम्भ प्रतिष्ठा, आचार्य-उपाध्याय-साधु बिम्ब प्रतिष्ठा, चरणपादुका प्रतिष्ठा, यंत्र प्रतिष्ठा, वेदी प्रतिष्ठा का वर्णन किया गया है। विशिष्ट परिच्छेद में अन्य बातो के अतिरिक्त मंत्राधिकार के अन्तर्गत मंत्र एवं मंत्र शक्ति, मंत्र रचना, जाप एवं विधान मंत्र तथा प्रतिष्ठा सम्बन्धी मंत्र और यन्त्राधिकार के अन्तर्गत यन्त्र एवं यन्त्र निर्माण विधि, यन्त्र फल, आवश्यक यन्त्र तथा चौबीस तीर्थंकर यंत्र का वर्णन किया गया है। ग्रन्थ में संस्कृत पाठ के साथ हिन्दी पद्यानुवाद भी दिया गयाहै। इस कृति का नाम "प्रतिष्ठा रत्नाकर" वस्तुतः यथानाम तथागुण की उक्ति को चरितार्थ करता है। इस बृहत्काय ग्रन्थ का

प्रकाशन जैन समाज प्रीत विहार दिल्ली ने फरवरी १९९८ में सम्पन्न हुई श्री आदिनाथ पंच कल्याणक प्रतिष्ठा के उपलक्ष में किया है।

विद्वान लेखक ने ग्रन्थ में निर्दिष्ट विभिन्न प्रतिष्ठा विधियों को आगमानुसार बताते हुए लिखा है कि बारहवें श्रुतागम दृष्टिवाद में समाहित पूर्वों में ग्यारहवें पूर्व कल्याणवाद में तीर्थंकरों के पंच कल्याणकों का वर्णन हुआ है जिसके अनुसार आचार्य जयसेन ने संस्कृत भाषा में **प्रतिष्ठा पाठ** ग्रंथ की रचना की थी जिसको आधार रख कर उन्होंने अपने इस ग्रन्थ की रचना की है। किन्तु कल्याण-बाद पूर्व में तीर्थंकरों के कल्याणकों के वर्णन मात्र से यह तो घटित नहीं होता कि उसमें जिन-प्रतिमाओं आदि की प्रतिष्ठा विधि का भी वर्णन था। न ही कोई ऐसी किंवदन्ती है कि अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहु के उपरान्त श्रुत के एक-देश ज्ञाता किन्हीं ज्योतिर्धर आचार्य को कल्याणवाद पूर्व का ज्ञान था जिनकी शिष्यानुशिष्य परम्परा से यह आचार्य जयसेन को प्राप्त हुआ था। वस्तुतः उपलब्ध ऐतिहासिक एवं पुरातात्त्विक प्रमाणों से तो यही पता चलता है कि वीर निर्वाण के कुछ सौ वर्षों बाद से ही जिन प्रतिमाओं का निर्माण प्रारम्भ हुआ होगा तथा प्रतिमा निर्माण की प्रारम्भिक सदियों में विभिन्न आचार्य अपने विवेकानुसार प्रतिष्ठा कराते रहे होंगे। प्राचीन प्राकृत साहित्य में कोई प्रतिष्ठा पाठ उपलब्ध न होने से संभावना यही प्रतीत होती है कि आचार्य जयसेन के काल (तेरहवीं शती ई०) तक आते-आते ही प्रतिष्ठा विधि पूर्ण रूप से विकसित हुई होगी। अतः किसी भी प्रतिष्ठा विधि को 'आगमानुसार' कहना अतिशयोक्ति पूर्ण ही प्रतीत होता है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के चौदहवें परिच्छेद में अन्य प्रतिष्ठा विधियों के अन्तर्गत आचार्य, उपाध्याय व साधु की बिम्ब एवं चरणपादुका प्रतिष्ठा विधि का वर्णन भी किया गया है। देवगढ़ की मध्य युगीन मूर्ति कला से पूर्व की कदाचित् ही कोई आचार्य-उपाध्याय-साधु की प्रतिमा आज दिखायी पड़ती है तथा देवगढ़ की मूर्तियों में भी किसी

आचार्य-उपाध्याय-साधु विशेष का नाम नहीं है। किन्तु आज तो कई आचार्यों की मूर्तियां (उनके जीवित आकार एवं आकृति के अनुरूप) हमारे लब्ध प्रतिष्ठ प्रतिष्ठाचार्यों के आचार्यत्व में प्रतिष्ठित की जा चुकी हैं। यही नहीं, उनकी **चरण पादुकाएं** (कहीं-कहीं स्वर्ण निर्मित) भी प्रतिष्ठित की जा चुकी है यद्यपि उन महर्षियों ने अपने सम्पूर्ण दीक्षा काल में अपने चरणों को पादुकाओं से स्पर्श भी नहीं कराया।

डा० पन्ना लाल जैन साहित्याचार्य ने प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रकाशन की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि "अ० भा० दि० जैन विद्वत्परिषद ने एक सर्वमान्य प्रतिष्ठा पाठ के प्रकाशन पर विचार किया था। तदनुसार समाज के मान्य प्रतिष्ठाचार्य संहिता-सूरि पं० नाथूलाल जी शास्त्री इन्दौर और वाणी-भूषण प्रतिष्ठा-दिवाकर पं० गुलाबचन्द्र जी 'पुष्प' ने प्रतिष्ठा पाठ का संकलन किया था। **कुछ विचार विषमता के कारण** विद्वत् परिषद इन संकलनों के प्रकाशन की व्यवस्था नहीं कर सकी·····(ये दोनों संकलन अब प्रकाशित हो गये हैं) आशा है·····प्रतिष्ठाचार्य विद्वान इन प्रकाशनों से लाभान्वित होंगे। समाज में प्रचलित आम्नाओं के अनुरूप कुछ क्रियाओं में मतभेद अवश्य है पर उसे संघर्ष का कारण न बना कर जिन धर्म की प्रभावना का ही अंग बनाया जावे·····।" अच्छा होता यदि साहित्याचार्य जी ने उन विचार विषमताओं पर तथा मतभेद वाली क्रियाओं पर भी प्रकाश डाला होता।

हम आशा करते थे कि "पुष्प" जी जैसे लब्ध प्रतिष्ठित विद्वान के मार्ग दर्शन में प्रकाशित प्रस्तुत ग्रन्थ में सभी पूजा पाठ पूर्ण रूप से शुद्ध रूप में छापे गए होंगे। किन्तु यह देख कर कुछ निराशा हुई कि कतिपय लोकप्रिय पूजाओं के पाठ में प्रथम मुद्रण के लिये प्रेस कापी तैयार करते समय लिपिकार की असावधानी से हो गयी अशुद्धियां बाद में मुद्रित प्रायः सभी संकलनों में भी यथावत् दुहराई जाती रही हैं तथा संकलनकर्ता विद्वत्जन रुढ़ीवादी मान-सिकता के कारण पाठ में यथोचित सुधार कर छपवाने में संकोच

करते रहे हैं तथा श्रावक भी बिना पाठ के अर्थों पर ध्यान दिये पूजा करते चले आ रहे हैं। उदाहरण के लिये कविवर द्यानतराय कृत देव-शास्त्र-गुरु पूजा के पृष्ठ १४३-१४५ पर मुद्रित पाठ में निम्न-लिखित परम्परागत अशुद्धियां यहां भी दृष्टिगोचर होती हैं—
(i) चन्दन के पद में "पावन सरस चन्दन"—'बावन सरस चन्दन' के स्थान पर ('बावन' चन्दन की सर्वोत्कृष्ट किस्म का नाम है),
(ख) "तपत वस्तु परवीन"—'तपनहरन परवीन' के स्थान पर,
(ii) "भवि करत शिव पंकत मचूं"—'भक्ति-रत शिव पंकत मचूं" के स्थान पर।

प्रतिष्ठा रत्नाकर एक सर्वांगीण प्रतिष्ठा पाठ संकलन है जिसमें प्रतिष्ठा सम्बन्धी छोटी से छोटी बात पर भी ध्यान दिया गया है। प्रतिष्ठा कारक विद्वानों के लिए यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है।

जैन धर्म में देव दर्शन और चन्द्रवाड़ के चन्द्रप्रभु—ले०—श्री छोटे लाल जैन, एडवोकेट; प्रकाशक—दीप ज्योति प्रकाशन, ६१३ मसीहा गंज, बोधराज कम्पाउन्ड, सीपरी बाजार, झांसी; १९९७; पृष्ठ ३२; मूल्य रु० ५/-

यह लघु पुस्तिका दो अध्यायों में विभक्त है। पहले में जैन धर्म में देव दर्शन पर विचार किया गया है। इसमें जैन धर्म में उपास्य देव का स्वरूप, श्रावक के षट् आवश्यक नैत्यिक कर्मों में प्रथम स्थान प्राप्त देव दर्शन-पूजा का फल, तथा मन्दिर में प्रवेश करने से लेकर दर्शन करने तक की विधि का वर्णन किया गया है। विद्वान लेखक का मानना है कि जिस मूर्ति का सूरि-मंत्र संयम शील दृढ़ चारित्र धारक साधु द्वारा दिया गया होगा वह मूर्ति उतनी ही आकर्षक चमत्कारी एवं प्रभावकारी होती है (पृष्ठ २३)। हमारी समझ में किसी मूर्ति का आकर्षक एवं प्रभावकारी होना अधिकतर मूर्तिकार शिल्पी के कला-कौशल पर निर्भर करता है। जहां तक चमत्कारी या अतिशययुक्त होने का प्रश्न है तो वर्तमान में तो इस रूप में मान्यता अधिकांशतः प्राचीन मूर्तियों की ही है। यदि वर्तमान में प्रतिष्ठित मूर्तियों में चमत्कार या अतिशय प्रायः नहीं दिखायी

पड़ता तो इस से यह निष्कर्ष निकालना तो कदाचित उचित नहीं होगा कि इन्हें सूर्य मंत्र देने वाले उन सभी साधुओं के संयम तथा चारित्र की दृढ़ता में कमी रही है।

पुस्तिका के दूसरे अध्याय में 'चन्द्रवाड़ के चन्द्रप्रभु' का वर्णन है। आठवें तीर्थंकर भगवान चन्द्रप्रभु की स्फटिक मणि की १५ इंच ऊंची यह पद्मासनस्थ प्रतिमा किसी समय फिरोजाबाद के निकट चन्द्रवाड़ में स्थापित थी जो १०वीं से १५वीं शताब्दी तक चौहान राजाओं की वैभवशाली राजधानी रही थी। सन् १७३० ई० में फिरोजाबाद के एक सुश्रावक को यह चन्द्रवाड़ में यमुना नदी के गर्भ से स्वप्न के आधार पर प्राप्त हुई थी जिसे ला कर फिरोजाबाद नगर के चन्द्रप्रभु जिनालय में विराजमान कर दिया गया था। प्रतिमा अति मनोज्ञ है तथा हमें भी इसके दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। लेखक के अनुसार स्फटिक मणि की इतनी बडी प्रतिमा अन्य कहीं नहीं है। प्रतिमा की प्राचीनता के विषय में अनुमानों के आधार पर लिखा है कि यह प्रतिमा मूल रूप से लंका में रावण के जिनालय में स्थापित थी जिसे लंका विजय के उपरान्त भगवान राम ने अयोध्या में ला कर अपने जिनालय में स्थापित कर दिया था तथा जिसे चन्द्रवाड़ नरेश चन्द्रपाल ने अयोध्या से लाकर चन्द्रवाड़ में विराजमान कर दिया था तथा किसी समय यवनों के आक्रमण की आशंका पर यमुना जी में छिपा दिया गया था। इस प्रकार के थोथे निराधार अनुमान से प्रतिमा जी महिमा मंडित नहीं होती।

इस पुस्तिका की रचना एवं प्रकाशन लेखक ने गुरुवर्य स्व० आचार्य विमल सागर महाराज की तृतीय पुण्य तिथि के अवसर पर उनकी स्मृति में किया है।

अध्यात्म योगी राम—संकलन–श्री बाबू लाल जैन; सम्पादक–श्री अनिल अग्रवाल तथा श्री वीर सागर जैन; प्रकाशक–श्रीमती गोदावरी देवी जैन चैरिटेबल ट्रस्ट, २/१० अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-२; प्रथम संस्करण १९९८; पृष्ठ-३२०; मूल्य-स्वाध्याय, डाक खर्च रु० २०/-

आचार्य रविषेण (७वीं शती ई०) कृत **पद्मपुराण** संस्कृत काव्य के सर्वोत्कृष्ट चरित प्रधान काव्यों में गिना जाता है तथा इसमें राम कथा के जैन परम्परा में मान्य स्वरूप को चित्रित किया गया है। जैन परम्परा में श्री राम को आठवें बलभद्र तद्भव मोक्षगामी भगवान राम माना गया है। प्रस्तुत ग्रन्थ में भगवान राम के जीवन वृत्त की कथा वस्तु **पद्मपुराण** से जैसे-का-तैसा लेकर उसमें से नगर-ग्राम, वन-उपवन, द्वीप-समुद्र, नरक-स्वर्ग, युद्ध आदि के विस्तृत वर्णनों को संक्षिप्त कर या छोड़ कर, जिन-जिन स्थलों पर अवसर मिला वहां पर जैन धर्म में निरूपित अध्यात्म, चरणानुयोग और करुणानुयोग के विषय को सरल भाषा में इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है कि सामान्य जन कथा के सहयोग से धर्म तत्त्व को सरलता से ग्रहण कर सकें। ग्रन्थ में दो अनुक्रमणिकायें भी दी गई हैं—पहली मूल ग्रंथ **पद्मपुराण** के प्रत्येक पर्व को दर्शाती है तथा दूसरी में जहां-जहां जो-जो तत्त्व विषय जोड़ा गया है उसकी सूची प्रस्तुत की गई है। ग्रन्थ बहुत उपयोगी, पठनीय एवं मननीय है।

—अजित प्रसाद जैन

आचार्य कवि विद्यासागर का काव्य वैभव—ले०—डा० शेखर चन्द्र जैन; प्रकाशक—श्री कुन्थुसागर ग्राफिक्स सेन्टर, ६, उमियादेवी सोसायटी नं० २, अमराईवाडी, अहमदाबाद-३८००२६; १९९७; पृष्ठ १०८ + १०; मूल्य रु० २०/-

आचार्य विद्यासागर जी की पांच काव्य कृतियों—मूक माटी : धरा की अनुगूंज, नर्मदा का नरम कंकर, तोता क्यों रोता ?, चेतना के गहराव में, तथा डूबो मत लगाओ डुबकी, में डुबकी लगा और उनके गहन अध्ययन, मनन एवं चिन्तन के उपरान्त डा० शेखर चन्द्र जैन ने प्रस्तुत कृति में आचार्य श्री की इन काव्य कृतियों के भाव पक्ष और कला पक्ष को जिस प्रकार उजागर किया है, वह श्लाघनीय है। अल्पज्ञ और मन्दबुद्धि पाठकों को भी आचार्य श्री की काव्य प्रतिभा का परिचय पाने और उनके काव्य का रसास्वाद करने में यह कृति सहायक होगी।

सोनागिर वैभव—ले० श्री रामजीत जैन; प्रकाशक—श्री चन्द्रभान जैन, २/५, विभव नगर, आगरा; १९९७; पृष्ठ १२८ सचित्र; मूल्य रु० ५१/-

मध्य प्रदेश के दतिया जिले में स्थित सुन्दर एवं मनोरम पहाड़ी सोनागिर, प्राचीन नाम श्रमणगिरि और स्वर्णगिरि, जैन धर्मावलम्बियों के लिये अत्यन्त पवित्र तीर्थ-स्थल है। कहा जाता है कि आठवें तीर्थंकर चन्द्रप्रभ का समवसरण इस क्षेत्र पर कई बार आया था और नंग कुमार व अनंग कुमार आदि साढ़े पांच करोड़ मुनिराज यहां से मोक्ष गये थे। यहां पर्वत पर समय-समय पर निर्मित ७७ मन्दिर और तलहटी में २६ मन्दिर हैं। पर्वत पर चन्द्रप्रभ मन्दिर (क्रमांक ७६) में एक प्रतिमा सातवीं शताब्दी की है तथा पार्श्वनाथ की पद्मासन नीलवर्ण प्रतिमा संवत् ११०१ (१०४४ ई०) की है और पहाड़ से उतरते समय अन्तिम द्वार के पास कोटे में एक भग्न प्रतिमा भी संवत् ११०१ की है। चन्द्रप्रभ मुख्य मन्दिर (क्रमांक ५७) के द्वार की भित्ति पर अभिलिखित लेख में मूलसंघ बलात्कार गण के भट्टारक श्रवणसेन-कनकसेन (समय संवत् १३३५ = १२७८ ई०) का उल्लेख है और मन्दिर की पांचवीं वेदी में भगवान सुपार्श्वनाथ की मूलसंघ सरस्वती गच्छ के भट्टारक धर्मचन्द्र द्वारा संवत् १२७२ (१२१५ ई०, में प्रतिष्ठित प्रतिमा है।

मन्दिरों का परिचय, इस क्षेत्र की ऐतिहासिकता, यहां उपलब्ध शिलालेख एवं पुरासम्पदा, यहां से जुड़ी रही भट्टारकीय पीठें और उनका इतिहास, इस क्षेत्र पर विद्यमान विभिन्न संस्थाओं का परिचय और यहां से जुड़े विशिष्ट महानुभावों के परिचय, आदि को इस पुस्तक में प्रबुद्ध विद्वान लेखक ने कुशलता से संजोया है। सोनागिर के सम्बन्ध में बहुत कुछ एक स्थान पर जानने के लिये पुस्तक उपयोगी है।

प्राकृतभाषा-स्तबक प्रथम भाग—ले०—डा० सुदीप जैन; प्रकाशक—श्री कुन्दकुन्द भारती ट्रस्ट, १८-बी, स्पेशल इन्स्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली-११००६७; १९९७; पृष्ठ ६१; मूल्य रु० २०/-

श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ (मानित विश्वविद्यालय), नई दिल्ली, में आरम्भ किये गये प्राकृतभाषा विषयक 'प्रमाणपत्र पाठ्यक्रम' के लिये उसके स्तर के अनुरूप प्राकृत भाषा, भाषा विज्ञान, व्याकरण एवं अनुवाद आदि का बोध कराने वाली पुस्तक का अभाव दूर करने हेतु डा० सुदीप जैन ने इस सरल एवं संक्षिप्त पुस्तक की रचना की है। इसके लिये वे साधुवाद के पात्र हैं।

समवशरण पूजन विधान—ले०-पं० कुँवरलाल; सम्पादक–डा० सुदीप जैन; प्रकाशक–श्री रमेश चन्द्र जैन एवं श्री पंकज जैन, जिनवाणी भारती पब्लिक स्कूल, सैक्टर ४, द्वारका (पालम), नई दिल्ली-११००४५; १९९७; पृष्ठ १२६; मूल्य रु० १५/-

पद्मावती पुरवाल जैन श्री गुलाब राय के सुपुत्र कवि कुँवर लाल 'लाल' जी ने श्री सबसुखराय के अनुरोध पर संवत् १८३४ (१७७७ ई०) में सरल हिन्दी में **समवशरण विधान** की रचना की थी। **त्रिलोकसार** पर टोडरमल की देशभाषामयी टीका **सम्यग्ज्ञान-चंद्रिका** में आगत समवसरण वर्णन इसका आधार है। रोचक एवं प्रवाहमय शैली में पद्य में तीर्थंकर की धर्मसभा अर्थात् समवसरण सभा का परिचय, विशद वर्णन और उसमें समागत विशिष्ट व्यक्तियों का वर्णन इसमें किया गया है तथा २२ पूजन दैनिक पूजापाठ में बहुप्रचलित छन्दों में इसमें रची गई हैं। छन्दों का परिमाण लगभग अट्ठारह सौ बताया जाता है। दिल्ली में समवसरण पूजन विधान के अवसर पर पूर्व प्रकाशित रचना की प्रतियां अपेक्षित संख्या में अप्राप्य होने के कारण मुनिश्री कनकोज्जवलनन्दि जी की प्रेरणा पर डा० सुदीप जैन ने पुनः प्रकाशन के पूर्व न केवल इसका श्रम-पूर्वक सम्पादन किया अपितु सारगर्भित प्रस्तावना और परिशिष्ट में नित्य पूजन विधि देकर इसे विद्वद्जन और सुधि श्रावकों के लिये अधिक उपयोगी बना दिया है।

महाकवि आचार्य विद्यासागर की साहित्य साधना एवं शोध-सन्दर्शिका—ले०-मुनिश्री सुधा सागर जी; प्रस्तोता-आचार्य ज्ञान-

सागर वामर्थ विमर्श केन्द्र, सरस्वती भवन, सेठजी की नशियां, ब्यावर-३०५९०१; तृ० सं० १९९७; पृष्ठ ५० + ६; मूल्य रु० १५/-

प्रस्तुत कृति में मुनि श्री सुधासागर ने आचार्य श्री विद्यासागर के व्यक्तित्व और कृतित्व की प्रशस्ति जिस प्रकार प्रस्तुत की है उसकी प्रशंसा करने के लिये अपने पास उपयुक्त शब्दों का अभाव है। मुनि श्री के शब्दों में शिरोमणि चारित्र के महान साधक, साहित्य जगत की कविता-कामिनी के विलास और शब्द वेधा (ब्रह्मा) आचार्य श्री द्वारा सन् १९९६ तक लिखित ग्रन्थ रत्नों का संक्षिप्त परिचय इस पुस्तक में दिया गया है। संस्कृत में **शारदा स्तुति, श्रमण शतकम्, निरञ्जन शतकम्, भावना शतकम्, परिषह-जय शतकम्, सुनीति शतकम्** और **चेतन चन्द्रोदय** (अप्र०); प्राकृत में **वारस अणुपेक्खा**; कन्नड में **चिनतने माडबुके/चिन्तयेन्नु विडबुक**; हिन्दी में **मूकमाटी महाकाव्य, नर्मदा का नरम कंकर, डूबो मत, लगाओ डुबकी, तोता क्यों रोता है, निजानुभव शतक, मुक्तक शतक, दोहा स्तुति शतक, दोहा दोहन, चेतना के गहराव में, कुन्दकुन्द कुन्दन, पूर्णोदय शतक, सर्वोदय शतक** (अप्र०), **स्वरूप सम्बोधन पद्यानुवाद** (अप्र०) **दश भक्ति हिन्दी पद्यानुवाद** (अप्र०) तथा समय-समय पर रची विविध स्तुतियां एवं भजन; बंगला में **अर्थ इ अनर्थेर मूल, रे मन,** और **आमि आमार** कविताएं; तथा अंग्रेजी में **My Self, My Saint,** एवं **My Ego** नामक कविताएं आचार्य श्री की देन हैं। इनके अतिरिक्त अनेक प्राचीन आचार्यों के विभिन्न ग्रन्थों का पद्यानुवाद करने का भी उन्हें श्रेय है। इस विपुल साहित्य सृजन के लिये आचार्य श्री धन्य हैं।

पुस्तक से विदित होता है कि आचार्य श्री के वाङ्मय पर शोध कार्य कर ६ मनीषी विश्वविद्यालयों से पी-एच० डी०/डी० लिट्० उपाधि प्राप्त कर चुके हैं, ७ शोधकर्ता लघु शोध प्रबन्ध प्रस्तुत कर चुके हैं और ४ का शोधकार्य प्रगति पर है। पुस्तक में १११ विषय और इंगित किये गये हैं जिन पर अभी और शोध किया

जा सकता है। अतः विश्वविद्यालयों में शोध कार्य के इच्छुक व्यक्तियों के लिये यह पुस्तक उपयोगी होगी।

महाकवि आचार्य ज्ञानसागर के हिन्दी साहित्य की मौलिक विशेषताएं—ले०-डा० के० एल० जैन; प्रकाशक—आचार्य ज्ञान सागर वागर्थ विमर्श केन्द्र, ब्यावर; १९९६; पृष्ठ ५२ + ८ + २ चित्र; मूल्य रु० १०/-

पं० भूरामल शास्त्री दीक्षोपरान्त क्रमशः क्षुल्लक ज्ञानभूषण और आचार्य ज्ञानसागर के नाम से विख्यात हुए। उन विद्वान महाकवि की साहित्य-साधना के परिचय स्वरूप मुनिश्री सुधा सागर की प्रस्तावना युक्त इस पुस्तक में उनके द्वारा हिन्दी में रचित कृतियों का मन्थन कर उनमें समाहित मौलिक विशेषताओं को समीक्षात्मक दृष्टि से उद्घाटित किया गया है। आचार्य श्री की हिन्दी में रचित प्रमुख कृतियों के नाम हैं—**पवित्र मानव जीवन, सरल जैन विवाह विधि, सचित विचार, सचित विमोचन, गुण सुन्दर वृत्तांत, ऋषभ चरित्र, भाग्य परीक्षा,** तथा **कर्त्तव्य पथ प्रदर्शन**। समीक्षक के शब्दों में "इन रचनाओं में साहित्य की जो मौलिक विशेषतायें वर्णित की गई हैं वे निश्चित रूप से भारतीय समाज के लिये एक संजीवनी का कार्य करती हैं।"

महाकवि आचार्य ज्ञान सागर के संस्कृत साहित्य में प्रकृति चित्रण—ले०-डा० किरण टण्डन; प्रकाशक—आचार्य ज्ञान सागर वागर्थ विमर्श केन्द्र, ब्यावर; १९९६; पृष्ठ ४८ + ८ + २ चित्र; मूल्य रु० १०/-

इस पुस्तक के लेखक डा० किरण टण्डन ने **महाकवि ज्ञान सागर के काव्यों का एक अध्ययन** शोध प्रबन्ध पर कुमायूँ विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० उपाधि प्राप्त की है। अब उन्होंने ज्ञानसागर जी के संस्कृत में रचित महाकाव्यों—**वीरोदय, जयोदय, भद्रोदय,** एवं **सुदर्शनोदय** तथा **दयोदय** (चम्पू) का अवगाहन कर उनमें समाहित प्रकृति-चित्रण को प्रस्फुटित किया है। मुनि श्री सुधासागर ने प्रस्तावना दी है। संस्कृत काव्य रसिकों के लिये पुस्तक पठनीय है।

महाकवि आ० ज्ञानसागर आध्यात्म संदोहन—सम्पादक—डा० अरुण कुमार जैन, शास्त्री; प्रकाशक—श्री दिगम्बर जैन समिति, जयपुर एवं सकल दिगम्बर जैन समाज, जयपुर; १९९६; पृष्ठ ३०४+१२; अनेक चित्र व सजिल्द; मूल्य रु० ९०/-

प्रस्तुत ग्रन्थ मुख्यत: दो खण्डों—संगोष्ठी खण्ड और चातुर्मास खण्ड—में है। प्रथम खण्ड में आचार्य ज्ञानसागर द्वारा प्रणीत **सम्यक्त्व-सार शतक** एवं आचार्य कुन्दकुन्द विरचित **समयसार** और **प्रवचन-सार** पर उनकी हिन्दी टीका पर जयपुर में नवम्बर १९९६ में आयोजित तीन-दिवसीय अ० भा० विद्वत् संगोष्ठी में ४० विद्वानों द्वारा पठित आलेख समाहित किये गये हैं। द्वितीय खण्ड में आचार्य विद्यासागर के सुशिष्य मुनि श्री सुधासागर के जयपुर में हुए चातु-र्मास का लेखा-जोखा है। जहां प्रथम खण्ड ज्ञान एवं विचारप्रद सामग्री से युक्त है, वहीं द्वितीय खण्ड मुनिश्री के प्रचार-प्रदर्शन से समृद्ध है। हमें तो लगता है—आत्मा का चिन्तन करते-करते

जो हो रहे आत्म-प्रचार में लीन,
ऐसे साधु आज जग में
कहलाते हैं सच्चे और शालीन।।

श्री १००८ भगवान महावीर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं गजरथ महोत्सव स्मारिका (२८ जनवरी से २ फरवरी, १९९८)—स्मारिका संयोजक-श्री राजेन्द्र कुमार जैन; प्रकाशक—श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, बी-२००५, इन्दिरा नगर, लखनऊ

संदेशों, विज्ञापनों और चित्रों से युक्त यह भव्य स्मारिका तीर्थंकर महावीर पंच कल्याणक स्तुति, उनका परिचय और उनके सिद्धान्त एवं जीवन चरित्र विषयक आलेखों और कल्याणकों की महत्ता, पंचकल्याणक में जिन-बिम्ब प्रतिष्ठा महोत्सव एवं पंच कल्याणक प्रतिष्ठा विधान विषयक विद्वान मनीषियों द्वारा प्रस्तुत सामग्री के साथ-साथ इन्दिरा नगर जैन मन्दिर का इतिहास तथा अन्य पठनीय सामग्री संजोये हुए है। इसके लिये स्मारिका समिति साधुवाद की पात्र है।

आस्था का दीप—ले०-उपाध्याय श्री विद्यासागर; प्रकाशक-श्री जिनेन्द्र कुमार जैन इंजीनियर, अलीगंज, लखनऊ; १९९८; पृष्ठ ५६+३ चित्र; मूल्य रु० १५/-

पं० विनोद कुमार सिद्धान्त शास्त्री के प्राक्कथन से युक्त प्रस्तुत कृति में युवा कवि उपाध्याय श्री की ४४ रचनायें संकलित हैं। सरल, सुबोध भाषा में, संक्षेप में अपने भावों को जिस प्रकार उन्होंने अभिव्यक्ति दी है, उसमें उनकी काव्य-प्रतिभा का दर्शन होता है। कृति पढ़कर निम्नलिखित भाव मन में उठा—

'आस्था का दीप' क्या खूब जलाया आपने
मन मुदित हो उठा देख आलोक सामने
यह आस्था जगमगाती रहे सदा आपके हिये
भावना यही है रमाकान्त की आपके लिये ।।

लखनऊ के दिवंगत जाने-अनजाने कवि, तृतीय भाग—ले०-डा० विश्वनाथ याज्ञिक; सम्पादक-प्रकाशक—श्री विष्णु दत्त शर्मा, ३३, पानदरीबा, लखनऊ-४; अप्रैल १९९७; पृष्ठ १३०; मूल्य रु० ४०/-

इस अंक में लखनऊ में हुए १५ कवियों, यथा, श्री फूलचन्द्र जैन 'पुष्पेन्दु', पं० बलभद्र प्रसाद दीक्षित 'पढीस', पं० चन्द्र भूषण त्रिवेदी 'रमई काका', पं० सूर्य प्रसाद त्रिपाठी 'भीम', श्री रूप नारायण पाण्डेय 'कमलाकर', श्री अनूप शर्मा, पद्मभूषण श्री श्री नारायण चतुर्वेदी 'श्रीवर', पं० दुलारे लाल भार्गव, सुश्री सुमित्रा कुमारी सिन्हा, श्री तुलसी राम वैश्य 'भास्कर', श्री जय जय राम टण्डन, श्री वंशीधर शुक्ल, श्री गोपाल कृष्ण निगम 'विरोधी', श्री विश्वनाथ सिंह 'विकल गोंडवी' और श्री रमा शंकर मिश्र 'श्रीपति', का परिचय, उनकी रचनाओं के उद्धरणों के साथ, दिया गया है। पुष्पेन्दु जी की १६ रचनायें इसमें संकलित हैं। यह अंक पुराने कवियों के विषय में अच्छा संदर्भ ग्रन्थ है।

—रमा कान्त जैन

जैन धर्म प्रवेशिका—ले०—श्री कैलाश भूषण जिन्दल, अजिताश्रम, गणेशगंज, लखनऊ-२२६०१८; १९९८; पृ० ११८; मूल्य रु० १५/-

श्री कैलाश भूषण जिन्दल एक नेष्ठिक स्वाध्यायशील श्रावक हैं। उन्होंने अपनी ८१वीं जन्म जयन्ति पर उपहार स्वरूप यह पुस्तिका अपनी सन्तान और साथ ही समस्त युवा पीढ़ी को जैन धर्म की आचार-संहिता, तत्त्व-ज्ञान और दर्शन का सरल भाषा में परिचय प्राप्त कराने के लिये प्रस्तुत की है। १२ अध्यायों में तीर्थंकर, शलाका पुरुष, पंच परमेष्ठी और णमोकार मन्त्र, नित्य नियम पूजा, दशलाक्षणी, व्रत, अहिंसा परमो धर्मः, मांसाहार बनाम शाकाहार, रत्नत्रय, द्रव्य, तत्त्व और कर्म, स्याद्वाद, तथा भारतीय संस्कृति में जैन धर्म का योगदान, का क्रमशः संक्षिप्त विवेचन है। यह सूचित करता है कि सारांशतः जैन धर्म का लक्ष्य आचार में अहिंसा, चिन्तन में अनेकान्त, वाणी में स्याद्वाद और समाज में अपरिग्रह का निष्कलुष प्रवर्तन है। सहज सुबोध शैली में जैन धर्म का युवा पीढ़ी के लिये उपयोगी परिचय सुलभ करने के लिए श्री जिन्दल को साधुवाद !

सर्वोदयी जैन तन्त्र—ले० डा० नन्द लाल जैन; प्र०—श्री कपूरचन्द जैन पोतदार, पोतदार निवास, टीकमगढ़ (म० प्र०); पृ० १००; मूल्य रु० २५/-

डा० नन्द लाल जैन की अंग्रेजी पुस्तक **Jain System in Nutshell** का परिचय **शोधादर्श**-२०, के पृ० ९५ पर हम दे चुके हैं। **सर्वोदयी जैन तन्त्र** उसका हिन्दी में परिवर्धित संस्करण है। भाषा सरल और सुबोध है। जैन धर्म एवं धार्मिक सम्प्रदाय का एक स्थान पर समग्र परिचय इसमें उपलब्ध है और आधुनिक वैज्ञानिक शब्दावली से संश्लिष्ट कर इसे वैज्ञानिक सोच के पाठकों के लिये भी ग्राह्य बनाने का सुन्दर प्रयास किया गया है। विदेशों में जैन धर्म और सम-सामयिक समस्याओं का निदर्शन, तथा परिशिष्ट में संदर्भ सामग्री और मौलिक सिद्धान्तों का विवरण उपयोगी है। इस सब के लिये लेखक साधुवाद के पात्र हैं। तथापि 'तन्त्र' शब्द का प्रयोग जो 'System' के पर्यायवाची के रूप में किया गया है, उचित नहीं जान पड़ता और पुस्तक के विषय में यह भ्रम उत्पन्न करता है कि यह कोई जन्तर-मन्तर से सम्बन्धित तन्त्र विद्या की पुस्तक है।

महावीर-विचार (शोध और बोध)—ले०–डा० प्रे० गं० मिश्रीकोटकर, M.B.B.S., ११४-B, एल० आय० टी० रोड, रामनगर, नागपुर-४४००१०; मार्च १९९७; पृ० १००; मूल्य रु० ४०/-

यह पुस्तक हमें चाण्दुरबाजार के श्री क० ध० मिश्रीकोटकर के सौजन्य से प्राप्त हुई जिसके लिये हम उनके आभारी हैं। उनके अनुसार "प्रस्थापित मान्यताओं पर आघात करते-करते पाश्चात्य विचार संशोधन का आधार लेकर नये प्रमेय-मुद्दे उपस्थित करने का लेखक का प्रयत्न है। लेखक ने अनेक मान्यताओं पर प्रश्न चिन्ह लगाये हैं तथा कुछ नये मुद्दे विचारार्थ रखे हैं—उदा० जैन धर्म अनादि न होकर भ० महावीर ने स्थापन किया, अन्य २३ तीर्थंकर नहीं हुए, वह सादे श्रमण थे, मोक्ष साधना के लिये दिगम्बरत्व आवश्यक नहीं है, निश्चय/शुद्ध नय ही उपयुक्त है, तप तथा शारीरिक कष्ट/परिषह सहने के बजाय ज्ञान-प्राप्ति सर्वोत्कृष्ट है, आदि। यह तथा अन्य कई मुद्दों पर शांत भाव से विचार होना और उन पर प्रतिक्रिया व्यक्त किया जाना आवश्यक है, ऐसा मुझे लगता है।"

लेखक के शब्दों में 'संशोधनात्मक, बोधप्रद किन्तु थोड़ा-सा आव्हानात्मक यह एक संकलन है। धर्म का स्थान मानवी जीवन में असाधारण रहता आया है। सभ्यता की ऊंचाई किन्तु निर्भर रहती है केवल धर्म की गुणवत्ता पर। इस मौलिक तत्त्वज्ञान जो कि गाभा रहता आया है धर्म का, उसकी पैछान कराने का यह अल्प-सा प्रयास है।" अपना आधार उन्होंने कुन्दकुन्द के **समयसार** को माना है।

यद्यपि हमारी परम्परागत आस्था को ठेस पहुंचती है, ऋषभ द्वारा असि-मसि-कृषि आदि द्वारा सभ्यता का प्रवर्तन मनुष्य को आदिम अवस्था से मुक्ति दिलाने और श्रम पूर्वक जीने की राह दिखाने का सशक्त उपदेश था। यह वास्तव में चिन्तनीय है कि "किसी एक के अहं के लिये सौ आदमियों जवान नर-नारी को निष्क्रिय बनाकर इन लोगों को बोध वाक्यों से भ्रमित, भयभीत, उदासीन करना कितना सही है।"

डा० मिश्रीकोटकर ने १९९० से अपने तर्क पूर्ण विचारों को प्रकाशित करना प्रारम्भ किया। उनका यह आह्वान कि "एक

प्रणाली में हम जन्मे, बढ़े, इसलिये क्या स्वतन्त्र विचार हमें करना ही नहीं चाहिए", चिन्तन की एक स्वागत योग्य दृष्टि है। परन्तु यह दृष्टि हमारी आस्था को झकझोरती है, हमें अपने साहित्य और परम्परा का इस अपेक्षा से परीक्षण करने के लिये प्रेरित करती है कि इसमें कितना अवांछनीय कुछ व्यक्तियों द्वारा अपने निहित स्वार्थ एवं अपरिष्कृत अथवा विकृत मानसिकता के कारण प्रविष्ट कर दिया गया है, और आज के सामाजिक परिवेश तथा वैचारिक अवधारणा के सापेक्ष परम्परा से प्राप्त श्रद्धामूलक विचारों और साधु-त्यागी वेष एवं आचार का मूल्यांकन और परिष्कार-संस्कार करने के लिये उत्प्रेरित करती है। इस प्रकार की दृष्टि परम्परा पोषकों को सह्य नहीं है और परिणामस्वरूप सलमान रश्दी तथा तस्लीमा नसरीन अपनी जान बचाते दुनिया भर में भागे-भागे फिर रहे हैं। हमारे देश में और स्वधर्म में भी पं० दरबारी लाल 'सत्यभक्त' जो अब नब्बे के दशक में हैं, इसका जीवित उदाहरण हैं—१९३२ में अपने एक लेख में जैन धर्म में श्रद्धास्पद सर्वज्ञता का उन्होंने समीक्षात्मक विवेचन किया था। अपने समय के ऐसे ही एक उदाहरण महावीर थे और डा० मिश्रीकोटकर की प्रतिपत्ति में बल है कि महावीर को नल्लमुका (dumb) बनाकर उनके चिन्तन और व्यक्तित्व को अवमानित (denigrate) किया गया है। अतः लेखक का यह स्वतन्त्र शोधन, परम्परागत आस्था पर प्रहार करते हुए भी, मननीय है।

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी का संक्षिप्त इतिहास एवं कार्य-विवरण—ले०—डा० गोपीचन्द्र वर्मा; प्र०—रामा प्रकाशन, २६३६, रास्ता खजानेवालान, जयपुर-३०२००१; जनवरी १९९८; पृ० viii + ८८; मूल्य रु० १००/-

डा० प्रभाकर शास्त्री के 'शुभाभिशंसनम्', डा० वीरेन्द्र स्वरूप भटनागर की प्रस्तावना और स्वयं लेखक की भूमिका के अतिरिक्त पुस्तक में छः अध्याय हैं—महावीर और उनके सिद्धान्त, राजस्थान में दिगम्बर जैन भट्टारकों की ऐतिहासिक परम्परा, अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी : उद्गम और इतिहास, अतिशय क्षेत्र एवं मन्दिर

की प्रबन्ध व्यवस्था, अतिशय क्षेत्र के प्रबन्ध और सम्पत्ति पर अधिकार जमाने हेतु अनुचित मुकदमेबाजी, तथा कार्य-विवरण। मूल अभिलेखों की फोटो-अनुकृति तथा अवशेषों एवं मन्दिर आदि के चित्रों ने पुस्तक की प्रमाणिकता और भव्यता में वृद्धि की है। प्रस्तुतिकरण वस्तुपरक है और लेखक की श्रम साध्यता का द्योतक है।

उत्तर भारत में भट्टारक परम्परा वास्तव में कब प्रारम्भ हुई, और 'भट्टारक' शब्द की व्युत्पत्ति व शाब्दिक अर्थ, के सम्बन्ध में कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं मिलते हैं तथापि बखतराय साह के **बुद्धिविलास** (१७७० ई०) से यह विदित होता है कि फीरोजशाह तुगलक के शासन काल (१३५१-८० ई०) में प्रभा चन्द्र भट्टारक ने दिल्ली में लंगोट पहनने की प्रथा प्रारम्भ की। दिल्ली के ही भट्टारक नागौर भी जाते रहे परन्तु १५१५ ई० में नागौर में एक स्वतन्त्र भट्टारक गद्दी की स्थापना हुई। राजस्थान में नागौर के अतिरिक्त सांगानेर एवं चाकसू में भट्टारक गद्दी थीं और बाद को आमेर (जयपुर) में भट्टारक गद्दी रही जिसमें १३ भट्टारकों की नामावली दी गई है। आमेर गद्दी के प्रथम भट्टारक देवेन्द्र कीर्ति (६०५ ई०) थे और अन्तिम भट्टारक चन्द्र कीर्ति (१९६९ ई०) थे। १७४५ ई० में जयपुर के राजघराने पर आमेर के भट्टारकों का प्रभाव बना और रामबाग के उत्तर में स्थित भट्टारक जी की नसिया के लिए रियासत से भूमि प्रदान की गई। इस गद्दी के अन्तिम ६ भट्टारक खण्डेलवाल जाति के थे। १९१८ ई० तक श्री महावीर जी इसी भट्टारकीय गद्दी के अन्तर्गत था।

यह रवायत है कि श्री महावीर जी की अतिशयकारी मूर्ति जयपुर राज्य की नियामत हिंडोण के चांडण गांव में गंभीर नदी के तट के एक टीले से लगभग ४०० वर्ष पहले निकली थी, परन्तु इस मन्दिर की अवस्थिति का उल्लेख १७१२ ई० के रियासती अभिलेखों में ही सर्वप्रथम मिलता है। १७१४ ई० में बसवा निवासी श्री अमर चन्द बिलाला जो खण्डेलवाल दिगम्बर जैन थे और रियासत में फौजदार के पद पर कार्यरत थे, ने वर्तमान मन्दिर का निर्माण कराया। मूर्ति के मूल उद्गम स्थान पर छतरी बनी है और

वहां पर चढ़ावे का एक भाग आज भी उसी चर्मकार के वंशजों को जाता है जिसने प्रथमत: मूर्ति की सूचना दी थी। रियासती अभिलेखों में १७१२ ई० से ठाकुर जी श्री महावीर जी को केसर दिये जाने का उल्लेख है, इसे सरावगी देहरा (दिगम्बर जैन मन्दिर) कहा गया है, और इसके लिए एक सरावगी टहलुवे व यात्रियों की सुरक्षा हेतु पहरे की व्यवस्था का रियासत की ओर से किये जाने का उल्लेख है।

१९३० ई० से श्री महावीर जी अतिशय क्षेत्र का प्रबन्ध जयपुर के पंच सरावगियान की प्रबन्ध-कारिणी कमेटी द्वारा किया जा रहा है। यह क्षेत्र राजस्थान सार्वजनीन प्रन्यास अधिनियम, १९५९, के अन्तर्गत 'दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी' के नाम से सहायक देवस्थान आयुक्त, जयपुर, के कार्यालय में रजिस्ट्रीकृत सार्वजनीन प्रन्यास है और इसकी प्रबन्ध कारिणी समिति, सोसायटीज़ रजिस्ट्रेशन ऐक्ट के अन्तर्गत पंजीकृत संस्था है। पूजा-अर्चना बीस पन्थी दिगम्बर जैन आम्नाय के अनुसार होती रही है।

१९१८ ई० और पुन: १९४१ ई० में कुछ शरारती श्वेताम्बरों ने इस क्षेत्र पर अपना मालिकाना अधिकार करने का असफल प्रयास किया। पुन: १९४३ में और फिर १९५३ में भी उन्होंने यह विवाद उठाया परन्तु चूंकि उनका दावा पूर्णत: निराधार था, १९७० में राजस्थान उच्च न्यायालय द्वारा उनका वाद अन्तत: खारिज कर दिया गया। फिर भी वे अपनी शरारत से बाज़ नहीं आये और १९६२ में एक वाद सहायक देवस्थान आयुक्त के समक्ष प्रस्तुत कर दिया और इस वाद के भी व्यर्थ होने की स्थिति जानकर 'श्री श्वेताम्बर जैन श्री महावीर जी तीर्थ रक्षा समिति' के नाम से एक संस्था बनाकर, उस की ओर से १९७४ में एक याचिका दायर कर दी जो अभी भी लम्बित है। श्वेताम्बर समाज में सम्पत्ति की लोलुपता की दृष्टि से विवाद खड़ा करने की दुष्प्रवृत्ति वहां के कुछ लोगों में है और इस पर ना तो उनके साधु-सन्त और न ही समाज के प्रमुख लोग कोई अंकुश लगाते हैं, यह एक क्षोभ का विषय है।

इस क्षेत्र के सम्बन्ध में व्यवस्थित अभिलेख-पुष्ट सामग्री को प्रस्तुत करने के लिए लेखक डा० वर्मा साधुवाद के पात्र हैं।

—डा० शशि कान्त

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश
प्रगति प्रतिवेदन वर्ष १९९७–९८

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ० प्र०, की स्थापना सन् १९७६ में उत्तर प्रदेश शासन की 'श्री महावीर निर्वाण समिति' के उत्तराधिकारी स्वरूप एक रजिस्टर्ड सोसायटी के रूप में की गई थी। समिति का १९८७-९१ का प्रगति प्रतिवेदन **शोधादर्श**-१५ (नवम्बर १९९१) के पृष्ठ ८१-८६ पर, १९९१-९२ का प्रगति प्रतिवेदन **शोधादर्श**-१८ (नवम्बर १९९२) के पृष्ठ ८३-८४ पर, १९९२-९५ का प्रगति प्रतिवेदन **शोधादर्श**-२५ (मार्च १९९५) के पृष्ठ ८१-८४ व ८६-८७ पर, १९९५-९६ का प्रगति प्रतिवेदन **शोधादर्श**-२८ (मार्च १९९६) के पृष्ठ ९३-९७ पर और १९९६-९७ का प्रगति प्रतिवेदन **शोधादर्श**-३२ (जुलाई १९९७) के पृष्ठ १४५-५० पर प्रकाशित है। प्रस्तुत प्रगति प्रतिवेदन अप्रैल १९९७ से मार्च १९९८ की अवधि के सम्बन्ध में है।

सदस्यों का वियोग :

इस अवधि में हमारी समिति के सम्माननीय आजीवन सदस्य और अध्यक्ष श्री सुमेर चन्द जैन पाटनी का निधन हो गया। उनका उन्मुक्त सहयोग हमें समिति के प्रारम्भ से ही निरन्तर प्राप्त होता रहा था। उनके मार्गदर्शन से वंचित होने का हमें दुख है। हम दिवंगत आत्मा की सद्गति और चिरशान्ति की कामना करते हैं।

नये सदस्य :

इस अवधि में डा० विनय कुमार जैन तथा डा० ओम प्रकाश अग्रवाल जैन (लखनऊ) को समिति की आजीवन सदस्यता प्रदान की गई। श्री सुन्दर सिंह जैन (दिल्ली) और श्री सुरेन्द्र नाथ जैन, श्री राकेश चन्द्र जैन तथा डा० वृषभ प्रसाद जैन (लखनऊ) को वर्ष १९९८ के लिये समिति की साधारण सदस्यता प्रदान की गई।

आर्थिक प्रगति :

समिति का नियत जमा राशि के रूप में ध्रौव्य फण्ड दिनांक १-४-१९९७ को रु० ९,०५,७३३-३३ पैं० था जो दिनांक

३१-३-१९९८ को बढ़ कर रु० ९,९२,१३०-०० पैं० हो गया। प्राप्ति-व्यय लेखे का आडिट मेसर्स ए० जिन्दल एण्ड कम्पनी, चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट्स, द्वारा किया गया।

शोध पुस्तकालय :

पुस्तकालय में संग्रहीत पुस्तकों का मूल्य एक लाख रुपये से अधिक है। पुस्तकालय में सभी भारतीय धर्मों, दर्शन एवं संस्कृति के महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का तुलनात्मक अध्ययन के उद्देश्य से संग्रह करने का प्रयास किया गया है। जैन धर्म के सभी सम्प्रदायों के मूल ग्रन्थों, शोध प्रबन्धों तथा शोधपरक एवं सामान्य साहित्य का संग्रह करने का प्रयास किया जाता है। लखनऊ, कानपुर एवं अवध विश्व-विद्यालयों के जैन विद्या पर काम कर रहे शोध अनुसन्धानकर्ताओं द्वारा तथा अन्य जिज्ञासु विद्वानों द्वारा पुस्तकालय का उपयोग किया जाता रहा है। शोध प्रवृत्तियों का निर्देशन डा० शशि कान्त करते हैं। इस वर्ष रु० १२,७९०/- मूल्य के ग्रन्थों की पुस्तकालय में वृद्धि हुई। पुस्तकालय दिगम्बर जैन मन्दिर (श्री मुन्ने लाल कागजी धर्मशाला), चारबाग, लखनऊ के एक कक्ष में स्थित है जो धर्मशाला प्रबन्ध कमेटी के सौजन्य से नि:शुल्क उपलब्ध कराया हुआ है। पुस्तकालय की सोमवार को छोड़कर प्रतिदिन प्रात: ८.०० बजे से १०.३० तक नियमित रूप से खुलने की व्यवस्था है।

शोधादर्श :

जैन विद्या की विभिन्न विधाओं के विद्वानों एवं चिन्तकों की छुटपुट शोध प्रवृत्तियों को बढ़ावा देने के उद्देश्य से स्व० डा० ज्योति प्रसाद जी जैन 'विद्यावारिध' के मार्गदर्शन एवं प्रधान सम्पादकत्व में समिति द्वारा इस चातुर्मासिक शोध-पत्रिका का शुभारम्भ फरवरी १९८६ में किया गया था। जून १९८८ में उनके निधन के उपरान्त उनके योग्य सुपुत्र डा० शशि कान्त और श्री रमा कान्त जैन इस शोध पत्रिका के सम्पादन का भार संभाले हैं। प्रधान सम्पादक का उत्तरदायित्व श्री अजित प्रसाद जैन वहन कर रहे हैं। पत्रिका नियमित रूप से प्रकाशित की जाती है और अब तक हम ३४ अंक प्रकाशित

कर चुके हैं। वर्ष १९९७ में प्रकाशित अंक ३१, ३२, व ३३ में ३०६ पृष्ठों की उपयोगी सामग्री की समाज के प्रबुद्ध वर्ग द्वारा व्यापक सराहना हुई है और यह उच्च कोटि की शोध पत्रिका के रूप में समादृत हुई है।

तीर्थंकर छात्र सहायता कोष :

वर्ष १९९७-९८ में ४२ छात्र-छात्राओं को रु० १२,९४८-०० पै० की अध्ययन सहायता प्रदान की गई। छात्र-छात्रायें कक्षा सप्तम् से स्नातकोत्तर स्तर तक के थे। इस कोष का संचालन श्री नरेश चन्द्र जैन, उप मंत्री, महामंत्री की देख-रेख में करते हैं।

महावीर जन कल्याण निधि :

वर्ष १९९७-९८ में ७ असहाय महिलाओं को रु० ४,५१७-०० पै० की सहायता प्रदान की गई। इस निधि का संचालन डा० शशि कान्त, संयुक्त मन्त्री, महामन्त्री की देख-रेख में करते हैं।

अध्यक्ष के रिक्त पद की पूर्ति :

समिति की नियमावली के नियम १२ (५) में प्राविधान के अन्तर्गत प्रबन्ध समिति द्वारा श्री सुमेर चन्द जैन पाटनी के १६-८-१९९७ को हुए दुखद निधन के फलस्वरूप हुई रिक्ति की पूर्ति हेतु बैठक दिनाक ११-१-१९९८ में सर्वसम्मति से वरिष्ठ उपाध्यक्ष श्री लून करन जैन नाहर को अध्यक्ष बनाया गया। नियमानुसार इसकी सूचना रजिस्ट्रार, सोसायटीज, उ० प्र०, को दे दी गई।

विवेच्य वर्ष में समिति के विभिन्न कार्यक्रम प्रवृत्त रहे। आयकर अधिनियम की धारा १२-क के अन्तर्गत समिति का रजिस्ट्रेशन हो गया और कर निर्धारण वर्ष १९९७-९८ में आयकर की मांग को निरस्त करा दिया गया। समिति के अध्यक्ष श्री सुमेर चन्द जैन पाटनी और उनके निधन के उपरान्त श्री लून करन जैन नाहर तथा सहयोगीगण विशेषकर श्री कन्हैया लाल जैन, श्री बिजय लाल जैन, डा० शशि कान्त, श्री नरेश चन्द्र जैन और श्री रमा कान्त जैन के प्रति मैं विशेष रूप से आभारी हूँ कि उन्होंने समिति की विभिन्न प्रवृत्तियों को सुचारू रूप से संचालित करने में मुझे महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

—**अजित प्रसाद जैन**, महामंत्री

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ० प्र० : प्राप्ति-व्यय विवरण अप्रैल १९९७—मार्च १९९८

सम्परीक्षित लेखा

प्राप्ति		व्यय	
प्रारम्भिक शेष :		शोध पुस्तकालय	६,९२०.५०
(१) रिजर्व फण्ड	९,०५,७३३.३०	शोधादर्श—प्रकाशन एवं वितरण	१७,६२६.५०
(२) बैंक बचत खाता	१३,३६२.११	तीर्थंकर छात्र सहायता कोष	१२,९४८.००
(३) नकद राशि	२,८१२.२१	महावीर जन कल्याण निधि	४,५१७.००
योग	९,२१,९०७.६२	आडिट एव आयकर परामर्शदाता की फीस	३,०००.००
समिति—सदस्यता शुल्क आदि	१,४५५.००	योग	४५,०१२.००
शोधादर्श—ग्राहक शुल्क आदि	२,१११.००	अन्तिम शेष :	
शोध पुस्तकालय—सदस्यता शुल्क व जमानत	४८०.००	(१) रिजर्व फण्ड	९,९२,१३०.००
साहित्य विक्रय	१९०.७५	(२) बैंक बचत खाता	८,२२५.५६
बैंक ब्याज	५०,१९७.८८	(३) नकद राशि	३,०४४.९९
पुनर्निवेश पर पूंजीगत वृद्धि	७१,४२८.३०	योग	१०,०३,४००.५५
अन्य दान आदि	६४२.००		
कुल योग	१०,४८,४१२.५५	कुल योग	१०,४८,४१२.५५

सारस्वत सम्मान समारोह

लखनऊ ११ जून, १९६८ ई०

श्री गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी, श्री रमा कान्त जैन, डा. शशि कान्त, श्री अजित प्रसाद जैन
पुण्य स्मृति डा. ज्योति प्रसाद जैन के चित्र के साथ

डा. अमर पाल सिंह
अध्यक्ष, सम्मान समारोह

श्री गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी
प्रमुख, काव्य संध्या

श्री अमृत लाल नागर

श्री कैलाश भूषण जिन्दल

श्री खुशाल चन्द्र गोरावाला

श्री जगजोत सिंह जैन

श्री जौहरी मल जैन

डा० दरबारी लाल कोठिया

श्री नर्मदेश्वर चतुर्वेदी

श्री परिपूर्णानन्द वर्मा

श्री प्रेम बिहारी

डा. बहादुर चन्द छाबड़ा

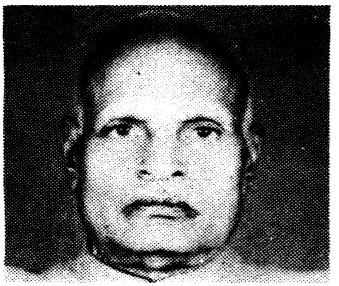

श्री महेश्वर पाण्डेय

श्री लक्ष्मी चन्द्र जैन

सौ. लीलावती जैन

श्रीमती वासंती शहा

श्री वीर नन्दन जिन्दल

श्री शरत कुमार कौशिक

श्री श्रवण कुमार श्रीवास्तव

श्री सत्यंधर कुमार सेठी

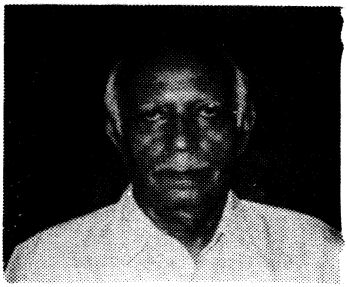

श्री सी.एम. अडवानी

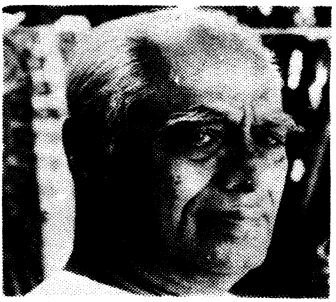

श्री सी.के. नागराजा राव

डा. सैयद इर्तिज़ा हुसैन

डा. हर्बर्ट वी. गुन्थर

श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा

श्री ज्ञान चन्द्र जैन

सम्मानित सारस्वत

—डा० शशि कान्त

श्री अजित प्रसाद जैन (जन्म १ जनवरी, १९१८ ई०, मेरठ) एक महन अध्येता, मनस्वी चिन्तक और उद्‌बोधक लेखक व समीक्षक हैं। १९३६ में आगरा विश्वविद्यालय के अन्तर्गत मेरठ कालेज, मेरठ, से बी० ए० करने के उपरान्त वह राजकीय सेवा में चले गये और ३ वर्ष शिमला में सेना मुख्यालय में कार्य करने के बाद यू०पी० लोक सेवा आयोग से चयनित होकर यू० पी० सचिवालय, लखनऊ, में कार्यरत रहे तथा अपने संवर्ग के सर्वोच्च पद से १९७६ में सेवा निवृत्त हुए। अपने सेवा काल में भारतीय चिकित्सा की आयुर्वेदिक और यूनानी पद्धतियों को प्रदेश की चिकित्सा व्यवस्था में उचित स्थान दिलाने का श्रेय उनको प्राप्त है। १९७४-७६ में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा भगवान महावीर के २५००वें निर्वाण महोत्सव को सुचारु रूप से सम्पादित कराने का श्रेय भी उन्हें है। १९७६ में गठित 'तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ० प्र०,' के वह संस्थापक-मन्त्री हैं और उसकी विविध गतिविधियों को सम्यक् रुपेण संचालित करते रहे हैं। १९८६ से **शोधादर्श** का प्रकाशन उनके कुशल प्रबन्ध/प्रधान सम्पादकत्व में हो रहा है और उनके सम्पादकीय अग्रलेख तथा समाचार-विमर्श के अन्तर्गत, धार्मिक विषयों के अतिरिक्त सामाजिक परिदृश्य की उत्प्रेरक समीक्षा रहती है। वह जैन एवं जनेतर स्थानीय और अखिल भारतीय सामाजिक संस्थाओं से जुड़े हैं और उनके विचारों का बहुमान है।

पता : पारस सदन, आर्य नगर, लखनऊ-२२६००४

डा० अमर पाल सिंह (जन्म ७ जनवरी, १९१९ ई०, ग्राम बेरगा, जि० फैजाबाद), एम० ए० (अंग्रेजी साहित्य, तथा हिन्दी साहित्य), एल-एल० बी०, पी-एच० डी०, एक अध्ययनशील और जिज्ञासु विद्वान हैं। भारतीय भाषाओं के अतिरिक्त जर्मन और रूसी भाषाओं का भी अध्ययन किया है। १९४५ से ही वह पत्रकारिता

से जुड़े हैं। राष्ट्रीय दैनिक पत्र National Herald और **नवजीवन** के सम्पादकीय में योगदान के उपरान्त १९५६ से वह भारत सरकार के सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय में समाचार सम्पादक, सूचना अधिकारी और उप निदेशक/निदेशक के पदों पर १९७९ तक कार्यरत रहे। उनकी उल्लेखनीय कृतियां हैं—**तुलसी पूर्व राम साहित्य** (प्र० १९६५), **कृष्ण चन्द्रिका** तथा **वन्दे मातरम्** (३ भाग—१५०० ई० से १९४७ ई० तक हिन्दी पद्य, लोक गीत और उर्दू पद्य में उपलब्ध देश भक्ति से प्रेरित रचनायें)। वह राष्ट्रीय चेतना के संवाहक हैं। **शोधादर्श** में भी उनके अध्ययन-चिन्तन से प्रसूत लेख प्रकाशित हुए हैं।

पता : ए १/८, सेक्टर बी, बसन्त विहार, अलीगंज, लखनऊ-२२६०२४

श्री अमृत लाल नागर (जन्म १७ अगस्त, १९१६ ई०, आगरा ; निधन २४ फरवरी, १९९० ई०, लखनऊ) हिन्दी के लब्ध-प्रतिष्ठ साहित्यकार थे। प्रथम पद्य रचना १९२९ में **आनन्द** में प्रकाशित हुई थी। प्रथम कहानी संग्रह (**वाटिका**) १९३५ में और प्रथम उपन्यास (**महाकाल**) १९४७ में प्रकाशित हुए। कुछ समय फिल्म उद्योग से भी जुड़े और आकाशवाणी से लखनऊ में ड्रामा प्रोड्यूसर के पद पर भी कार्य किया, परन्तु १९५६ से पूरी तरह स्वतन्त्र साहित्य सृजन में जुटे। १०० से भी अधिक कृतियों के लेखन का श्रेय उनको है जिनमें कहानी, उपन्यास, संस्मरण, रिपोर्ताज, निबन्ध, हास्य व्यंग्य, नाटक, प्रहसन, बाल साहित्य, अनुवाद और फिल्म संवाद आदि विविध विधाओं का समावेश है। कई साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादन और नाटकों के निर्देशन में भी योगदान रहा। उनकी कई रचनायें पुरस्कृत हुईं। १९७३ में उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा 'साहित्य वारिधि' उपाधि से विभूषित किया गया, १९८९ में भारत सरकार द्वारा 'पद्म भूषण' उपाधि से सम्मानित किया गया और १९८९ में उत्तर प्रदेश शासन का सर्वोच्च साहित्यिक सम्मान 'भारत भारती पुरस्कार' प्रदान किया गया। उनकी एक कृति का रूसी भाषा में और कई कृतियों

का विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ, तथा उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर कई विश्वविद्यालयों में अधिकृत शोध कार्य सम्पन्न हुआ। उनकी महत्वपूर्ण कृतियां हैं—**बूंद और समुद्र** (१९५६), **गदर के फूल** (१९५७), **अमृत और विष** (१९६६), **नाच्यो बहुत गोपाल** (१९७८) और **पीढ़ियां** (१९९०)।

श्री कैलाश भूषण जिन्दल (जन्म ८ मार्च, १९१७ ई०, लखनऊ) आयकर विधि के विशेषज्ञ हैं तथा हिन्दी साहित्य और जैन धर्म के अध्ययन में विशेष अभिरुचि रखते हैं। १९३८ में उन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय से एम० ए० व एल-एल० बी० की परीक्षायें उत्तीर्ण कीं और अर्थ शास्त्र व समाज शास्त्र में एम० ए० में प्रथम स्थान के लिए स्वर्ण पदक प्राप्त किया। १९४२ से १९७२ तक वह भारतीय राजस्व सेवा के सदस्य रहे और मुरादाबाद में आयकर के अपीलेट असिस्टेन्ट कमिश्नर के पद से सेवा निवृत्त होने के बाद १९७२ से लखनऊ में इलाहाबाद उच्च न्यायालय में एडवोकेट हैं। उनके द्वारा बहस किये गये काफी वाद लॉ जर्नलों में रिपोर्ट किये गये हैं। आयकर सम्बन्धी विधि पर ४ महत्वपूर्ण पुस्तकें भी लिखी हैं। हिन्दी साहित्य का इतिहास अंग्रेजी में लिखा है। जैन धर्म पर An Epitome of Jainism, Bhava Pahud (Eng. trans. & commentary), जैन पूजा और स्तोत्र पर अंग्रेजी में ट्रैक्ट, तथा हिन्दी में **जैन धर्म प्रवेशिका** का प्रणयन किया है। **शोधादर्श** में उनके लेख प्रकाशित होते रहते हैं। वह उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन के महामंत्री भी हैं।

पता : अजिताश्रम, गणेशगंज, लखनऊ-२२६०१८

श्री खुशाल चन्द्र गोरावाला (जन्म १९१५ ई०, ग्रा० मडावरा, जि० ललितपुर) एक स्वाध्यायी, व्रती और नैष्ठिक श्रावक हैं। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से एम० ए० करने के उपरान्त कुछ समय आरा के हर प्रसाद जैन कालेज में अध्यापन किया और १९४७ से काशी विद्यापीठ, वाराणसी, में इतिहास के प्राध्यापक और पुस्तकालयाध्यक्ष रहे। वह तपे हुए स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी हैं और

१९३१ व १९४२ के आंदोलनों में उनकी सक्रिय भूमिका रही तथा वह जेल भी गये। भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ (मथुरा), विद्वत्परिषद और स्याद्वाद विद्यालय (वाराणसी) के संचालन व व्यवस्थापन से वह अन्यतम रूप से जुड़े रहे। पू० गणेश प्रसाद जी वर्णी के वह अनन्य अनुयायी रहे। जैन धर्म शास्त्रों का उन्हें तलस्पर्शी ज्ञान है। जटासिंहनन्दि के वरांग चरित का उनका **हिन्दी अनुवाद** इस विषय पर एक अधिकारी ग्रन्थ है। 'तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति' की प्रवृत्तियों के वह समर्थक रहे हैं और **शोधादर्श** के प्रशंसक तथा सहयोगी लेखक हैं।

पता : बी-३६/२१ च ९, ब्रह्मानन्द नगर एक्सटेंशन (दुर्गाकुण्ड नई वसति), वाराणसी-२२१००५

श्री गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी (जन्म २८ अगस्त, १९२० ई०, मेरठ) एम० ए०, एल-एल० बी० तक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त उत्तर प्रदेश सरकार के परिवहन विभाग में सेवारत हुए और राज्य परिवहन अधिकरण के सचिव के पद से सेवा निवृत्त हुए। कविता और साहित्यिक लेखन हॉबी रही और चित्रकला में भी अभिरुचि रही। साहित्यिक संस्थाओं द्वारा 'साहित्यवारिधि', 'ब्रज भाषा विभूषण' और 'ब्रज भाषा विभूति' की उपाधियों से सम्मानित किया गया। अधिकांश कवितायें श्री राम और श्री राधा कृष्ण भक्तिपरक हैं, तथा ब्रजभाषा में और कविता व सवैया छन्दों में हैं। परन्तु देश-प्रेम व अन्य विषयों पर भी रचनायें हैं जो सामान्य हिन्दी में हैं। वर्तमान में वह लखनऊ में हिन्दी के वय-ज्येष्ठ कवि हैं और प्रायः सभी स्तरीय काव्य गोष्ठियों में उनकी सहभागिता रहती है।

पता : हमीरपुर हाउस, ९, विजय नगर, नाका हिन्डोला, लखनऊ-४

श्री जगजोत सिंह जैन (जन्म १४ मई, १९१५ ई०, ग्रा० सैनपुर, जि० मुजफ्फरनगर) ने मेरठ में शिक्षा प्राप्त की और १९३८ में सरकारी सेवा में आ गये। फैजाबाद, इलाहाबाद, दिल्ली और लखनऊ में विभिन्न कार्यालयों में कार्य के उपरान्त जनवरी १९७४ में सेवा निवृत्त हुए। प्रारम्भ से ही धार्मिक-आध्यात्मिक साहित्य

और चर्चाओं में अभिरुचि रही । डा० ज्योति प्रसाद जी जैन की साप्ताहिक गोष्ठी के एक नियमित सदस्य रहे । तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति और शोधादर्श के प्रति विशेष अनुराग है ।
पता : १९५, दुर्विजय गंज, गणेशगंज, लखनऊ-२२६००४

श्री जौहरी मल जैन (जन्म १९९८ ई०, ग्रा० पलरा, जि० मेरठ) ने १९३४ में दिल्ली से मैट्रिकुलेशन परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया और पुन: १९४० में सेन्ट स्टीफेन्स कालेज से एम० ए० में इतिहास विषय लेकर दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान प्राप्त किया था । द्वितीय विश्व युद्ध के चलते भारतीय सेना में सेवारत हुए और अप्रैल १९५० में इन्डियन पुलिस सर्विस में नियुक्त हुये तथा उत्तर प्रदेश काडर को आवंटित हुए । १९५७ में शौर्य पदक से सम्मानित हुए और अपनी सेवा के सर्वोच्च पद—पुलिस महानिरीक्षक के पद से जून १९७७ में सेवा निवृत्त हुए । वह अभी तक उत्तर प्रदेश के एक मात्र जैन पुलिस महानिरीक्षक हैं । सामाजिक कार्य में अभिरुचि है, शोर-शराबे से दूर रहते हैं, और अध्ययनशील एवं मनस्वी चिन्तक हैं ।
पता : बंगला नं० १, रिवर बैंक कालोनी, लखनऊ-२२६०१८

डा० दरबारी लाल कोठिया (जन्म आषाढ़ कृष्ण द्वितीया, १९११ ई०, ग्रा० नैनागिरि, जि० छतरपुर) जैन न्याय (logic) के अप्रतिम अधिकारी विद्वान हैं । न्यायाचार्य, शास्त्राचार्य और एम० ए० के बाद काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से १९६९ में "जैन तर्क शास्त्र में अनुमान-विचार : ऐतिहासिक व समीक्षात्मक अध्ययन" पर पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की । लगभग २५ वर्ष वह वीर सेवा मन्दिर, सरसावा/दिल्ली से जुड़े रहे और पंडित जुगल किशोर मुख्तार के सहयोगी रहे जहां उनकी प्रतिभा ने निखार पाया और वह गहन शोध-अध्ययन के अभ्यासी हुये । तत्पश्चात लगभग १५ वर्ष वह काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के जैन-बौद्ध-दर्शन विभाग में उपाचार्य (रीडर) रहे । जैन बौद्धिक जगत में उनका बहुमान रहा और भारतवर्षीय दि० जैन विद्वत्परिषद के अध्यक्ष भी रहे । १९८२ में उन्हें

अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया गया। उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर एक शोधार्थी द्वारा पी-एच० डी० के लिए शोध कार्य भी किया जा रहा है। उन्हें १९९५ के 'आचार्य कुंदकुंद पुरस्कार' और १९९८ के 'श्री गोम्मटेश्वर विद्यापीठ पुरस्कार' से सम्मानित किया गया है और इस वर्ष गणतन्त्र दिवस पर राष्ट्रपति द्वारा 'राष्ट्र के सर्वश्रेष्ठ संस्कृत मनीषी' के अलंकरण से भी विभूषित किया गया है। संस्कृत और हिंदी में आपके गवेषणापूर्ण ग्रंथों में प्राचीन आचार्यों के सम्पादित और अनूदित ग्रंथों के अतिरिक्त लगभग २० मौलिक ग्रंथ हैं जो जैन दर्शन के न्यायपक्ष को जानने-समझने के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

पता : इटावा बाजार, बीना (जि० सागर)-४७०११३

डा० नन्द किशोर देवराज (जन्म ३ जून, १९१७ ई०, रामपुर) एम० ए०, डी० फिल०, डी० लिट्०, ने भारतीय दर्शन के अधिकारी विद्वान होने के साथ ही हिन्दी साहित्य को कविता, समीक्षा और उपन्यास विधा की रचनाओं से भी समृद्ध किया है। विभिन्न महाविद्यालयों में अध्यापन करने के बाद वह लखनऊ विश्वविद्यालय, काशी हिन्दू वि.व., सागर वि.वि. और हवाई वि.वि. से तथा शिमला स्थित इन्स्टीट्यूट आफ एडवांस्ड स्टडी से सम्बद्ध रहे। दर्शन के क्षेत्र में उनके विशिष्ट विषय अद्वैत वेदान्त, मूल्यों का सिद्धांत और सौन्दर्य शास्त्र रहे। १९३९ में प्रथम कृति प्रकाशित हुई। तब से लगभग ६० वर्ष का सृजन काल उनका है जो एक मनुष्य का सामान्य जीवन-काल होता है और यह स्वयं में एक उपलब्धि है।

पता : ५२, बादशाह नगर, लखनऊ-२२६००७

श्री नर्मदेश्वर चतुर्वेदी (जन्म ८ अप्रैल, १९१५ ई०, ग्रा० जवही, जि० बलिया; निधन १९ सितम्बर, १९९६ ई०, बलिया) एक क्रांतिकारी स्वतंत्रता सेनानी और हिंदी के प्रति समर्पित साहित्य सेवी थे। विश्व भारती (शांति निकेतन) और काशी हिंदू विश्वविद्यालय तथा काशी विद्यापीठ (वाराणसी) में शिक्षण कार्य से जुड़े और नागरी प्रचारिणी सभा (वाराणसी) की पाण्डुलिपि सर्वेक्षण

एवं संचयन सम्बन्धी प्रायोजना में योगदान किया। विभिन्न साहित्यिक संस्थाओं से सम्बद्ध रहे और 'साहित्य महोपाध्याय', 'साहित्य श्री' तथा 'विद्या वाचस्पति' उपाधियों से सम्मानित किये गये। भोजपुरी भाषा की साहित्यिक महत्ता के प्रति जागरुकता जगाई। कई पुस्तकों का बंगला और अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद किया तथा एक दर्जन से अधिक शोधपरक मौलिक ग्रन्थों का हिन्दी में प्रणयन किया।

श्री परिपूर्णानन्द वर्मा (जन्म २ फरवरी, १९०७ ई०, वाराणसी; निधन ७ दिसम्बर, १९९५ ई०, कानपुर) अपराध शास्त्र के ख्यातिनामा विशेषज्ञ होने के साथ ही एक समर्पित पत्रकार और साहित्यकार थे। १९२८ से ही वह पत्रकारिता से जुड़ गये और दैनिक **आज** (वाराणसी), **सैनिक** (आगरा), **लोकमत** (जबलपुर), **प्रेमा, सन्देश, जागरण** (कानपुर) और **अमर उजाला** (आगरा) में सम्पादकीय दायित्व का निर्वहन किया। १९५२ में उ० प्र० विधान सभा के सदस्य निर्वाचित हुए और कितने ही वर्षों तक अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी से सम्बद्ध रहे। विभिन्न सरकारी समितियों के भी सदस्य व अध्यक्ष रहे और उ० प्र० हिन्दी संस्थान के उपाध्यक्ष भी रहे। हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा 'विद्या वारिधि' की उपाधि से सम्मानित किये गये। १९८२ में अपराध विज्ञान पर उनका शोध ग्रन्थ एक अमरीकी प्रकाशन संस्था द्वारा प्रकाशित किया गया। अपराध विज्ञान पर उनकी ७ पुस्तकें अंग्रेजी में और १२ हिन्दी में हैं। जेल के यातनापूर्ण जीवन में कैदियों के साथ मानवीय व्यवहार किये जाने के जो क्रमिक उपाय हुए हैं, उनमें श्री वर्मा की शोध और रिपोर्टों का काफी योगदान रहा। उन्होंने उपन्यास, नाटक और कहानियां भी लिखीं, शेरो-शायरी का भी शौक था, इतिहास और समाज शास्त्र व श्रमिक समस्याओं पर भी उपयोगी पुस्तकें लिखीं। अणुव्रत आन्दोलन से प्रभावित थे और जैन दर्शन व आचार शास्त्र के प्रति जिज्ञासु थे।

श्री प्रेम बिहारी (जन्म १ सितम्बर, १९३० ई०, बरेली) ने लखनऊ विश्वविद्यालय से राजनीति शास्त्र में एम० ए० किया और उत्तर प्रदेश सचिवालय में सेवारत हुए जहां से १९८९ में उप सचिव के पद से सेवा-निवृत्त हुए। विद्यार्थी जीवन से ही समाचार पत्रों और पत्रिकाओं का पढ़ने का चस्का लगा। निरन्तर ही अध्ययनशील रहे और राजनैतिक, आर्थिक व अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य ने चिन्तन एवं अपने विचार प्रकाशन के लिये प्रेरित किया। उनके लेख और पत्र अंग्रेजी के पत्र-पत्रिकाओं में प्रायः प्रकाशित होते हैं जो जनमत के संवाहक और उत्प्रेरक होते हैं। धर्म में भी अभिरुचि है और सत्संग के प्रेमी हैं।

पता : बी-१३९०, इन्दिरा नगर, लखनऊ-२२६०१६

इतिहास-मनीषी डा० बहादुर चन्द्र छाबड़ा (जन्म ३ अप्रैल, १९०८ ई०, कोहाट—अब पाकिस्तान में) ने तत्कालीन पंजाब विश्व-विद्यालय के अन्तर्गत लाहौर कालेज, लाहौर, से १९३१ में एम०ए० और एम० ओ० एल० की परीक्षायें सम्मान सहित उत्तीर्ण करने के बाद १९३४ में हालैण्ड के लीडेन विश्वविद्यालय से पी-एच०डी० की उपाधि प्राप्त की थी। १९३५ में वह भारतीय पुरातात्त्विक सर्वेक्षण में सेवारत हुए और सुपरिन्टेन्डेंट व गवर्नमेंट एपिग्राफिस्ट के पदों पर रहकर अन्त में संयुक्त महानिदेशक के पद से १९६५ में सेवा-निवृत्त हुए। उसके बाद ४ वर्ष चण्डीगढ़ स्थित पंजाब विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति और पुरातत्त्व विभाग में प्रोफेसर व विभागाध्यक्ष रहे। कितने ही विदेशी विश्वविद्यालयों में विजिटिंग प्रोफेसर भी रहे। भारतीय प्राच्य सम्मेलनों और भारतीय एवं भारत–वाह्य प्राच्य विद्या संस्थानों से सम्बद्ध रहे। गुप्तकालीन शिलालेखों से सम्बन्धित **कॉरपस इन्स्क्रप्टोनम इन्डिकेरम** (खण्ड ३) का संशोधित संस्करण उनका विशिष्ट उल्लेखनीय अवदान है। १९७९ में उन्हें 'पुरातत्त्व-विशारद' की उपाधि से सम्मानित किया गया। १९८४ में **स्वस्ति श्री** अभिनन्दन ग्रन्थ भी उन्हें भेंट किया गया। १९८२ में अनन्त-ज्योति विद्यापीठ द्वारा उन्हें **इतिहास-मनीषी**

सम्मान से सम्मानित किया गया। अभिलेख विद्या के एक मौन साधक के रूप में उनकी प्रतिष्ठा है।

पता : बी-२११, सेंचुरी लेन, ४८, रिचमांड रोड, बंगलौर-५६००२५

श्री महेश्वर पाण्डेय (जन्म १९ सितम्बर, १९१६ ई०, ग्रा० गौरा, जि० वाराणसी) ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से गणित विषय में एम० ए० किया और १९७७ में सेवानिवृत्ति तक डी.ए.वी. इन्टर कालेज, लखनऊ, में गणित के प्राध्यापक रहे। उनकी प्रतिष्ठा एक स्नेहशील, गरिमामय और विषय को सहज-सुबोध बनाने वाले अध्यापक की रही। शिक्षकों को गरिमा पूर्ण प्रतिष्ठा, सेवा सुविधायें और उचित वेतनमान आदि दिलाने में उनकी महती भूमिका रही। उ० प्र० माध्यमिक शिक्षक संघ और अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षक संघ के वह वर्षों अध्यक्ष रहे। लखनऊ के शिक्षक निर्वाचन क्षेत्र से उ० प्र० विधान परिषद के १९७० और १९८४ में सदस्य भी निर्वाचित हुए। शिक्षकों के हित में की गई उनकी सेवायें सदा स्मरणीय रहेंगी।

पता : आशियाना कालोनी, लखनऊ

श्री लक्ष्मी चन्द्र जैन (जन्म २८ सितम्बर, १९०९ ई०, छतरपुर) दिल्ली विश्वविद्यालय से संस्कृत और अंग्रेजी में ए० ए० करने के उपरान्त आकाशवाणी दिल्ली से जुड़े और १९३४ में भारत का सम्भवतया पहला आउट-साइड प्रसारण कुरुक्षेत्र में सूर्य ग्रहण के अवसर पर किया। फिर लाहौर में भारत इंश्योरेन्स कम्पनी में सेवारत रहे और १९४४ में डालमिया नगर में रोहतास इन्डस्ट्रीज के अनेक दायित्वों से सम्बद्ध रहे। भारतीय ज्ञानपीठ से अन्तरंग रूप से सम्बद्ध रहे और प्रतिष्ठित साहित्यिक पुरस्कार—ज्ञानपीठ पुरस्कार की कल्पना व संयोजन में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। लाहौर (विभाजन से पूर्व), कलकत्ता और दिल्ली की अनेक साहित्यिक व सांस्कृतिक संस्थाओं से जुड़े रहे, प्रकाशन जगत में बहुमान रहा, और जैनों की सामाजिक एवं शोध संस्थाओं से सम्बद्ध रहे। अब भी 'टाइम्स ऑफ इण्डिया पत्र-समूह' के परामर्शदाता हैं। एक

सृजनशील लेखक हैं, विशिष्ट कृतियां हैं—**कागज की किश्तियां, नये रंग नये ढंग, ग्यारह सपनों का देश** (सहयोगी उपन्यास), **अन्तर्द्वन्दों के पार : गोम्मटेश्वर बाहुबली**; तथा **जैन कला एवं स्थापत्य** (३ भाग) के हिन्दी संस्करण का सम्पादन, एवं अन्यान्य पुस्तकों की भूमिकायें।

पता : बी-५२७, सरिता विहार, नई दिल्ली-११००४४

सौ० लीलावती जैन (जन्म ११ अप्रैल, १९३५ ई०) हिन्दी व मराठी में एम० ए० तथा एम० एड० हैं तथा जलगांव में ४० वर्ष अध्यापन कार्य से जुड़ी रहकर १९९५ में बी० एड० कालेज में प्राध्यापिका के पद से सेवा-निवृत्त हुईं। उनकी शिक्षा-दीक्षा में उनके पति श्री कांतिलाल छाबड़ा का विशेष सहयोग रहा। महिला उत्थान के विविध कार्यक्रमों से जुड़ीं जिनमें मुस्लिम महिलाओं की पाबंदियों से मुक्ति भी शामिल रही। १९८५ में **धर्म मंगल** पाक्षिक पत्र का मराठी में प्रकाशन प्रारम्भ किया ताकि जैन धर्म में आई विसंगतियों और सामाजिक कुरीतियों के प्रति जैन समाज को सजग किया जाये। कई विशेषांक भी निकाले जो चर्चित रहे। सत्यान्वेषण और प्रखर आलोचनाओं के कारण विरोध का सामना भी करना पड़ा, परन्तु दबी नहीं। विशिष्ट आचार्य-मुनि-माताओं की पुस्तकों के हिन्दी से मराठी में और मराठी से हिन्दी में अनुवाद भी किये और सुधारवादी तेवर रखते हुए एक गुरु-भक्त नैष्ठिक श्राविका का स्वरूप बनाये रखा। **शोधादर्श** में भी उनके विशिष्ट विचारों को प्रकाशित किया गया है।

पता : ४/५, भीकमचन्द जैन नगर, पिम्प्राले रोड, जलगांव-४२५००१

श्रीमती वासंती शहा (जन्म १९२४ ई०, ग्रा० बावी, जि० सोलापुर) के पिता श्री बाल चन्द कोठारी पुणे में आकर बसे और घर पर ही उनकी शिक्षा की व्यवस्था की। श्री कोठारी ने अपने स्वतन्त्र राजनैतिक दृष्टिकोण के अनुरूप दैनिक **प्रभात** का प्रकाशन प्रारम्भ किया और अपनी पुत्री को भी राजनैतिक लेखन के लिये प्रोत्साहित किया। गुजरात के श्री पानाचन्द प्रेमचन्द शाहा उनके

पति थे, वह भी पुणे आ गये और उद्योग-व्यवसाय में लगे तथा उन्हें सामाजिक व साहित्यिक कार्यों के लिये पूरा सहयोग दिया। पति के निधन पर उन्होंने अपनी सम्पत्ति के अर्द्धांश का एक चैरिटेबुल ट्रस्ट बना दिया जो ज़रूरतमन्दों की सहायता करता है। सामाजिक उत्थान में लगी विभिन्न संस्थाओं को वह आर्थिक सहायता देती रहती हैं। जैन तत्त्व ज्ञान और दर्शन के अध्ययन में विशेष रुचि रही। विगत ३५ वर्षों से सामाजिक और धार्मिक विषयों पर लिखती रही हैं। साधुओं के रुढ़िवादी व शिथिलाचारी-मायाचारी आचार की निर्भय आलोचक रही हैं। महाराष्ट्र-कर्णाटक प्रदेशों में जैनों के कुछ उपेक्षित समुदायों को धार्मिक-सामाजिक न्याय दिलाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। स्थितिपोषक पत्रों ने जब उनके विचारों को प्रकाशित करने में उदासीनता दिखाई तो १९९२ से मराठी में एक मासिक पत्र **ज्ञानशलाका** का प्रकाशन प्रारम्भ किया। जैन धर्म की मर्यादा के संरक्षण और समाज के उपेक्षित निर्बल समुदायों को न्याय दिलाने के लिये प्रतिबद्ध एक नैष्ठिक श्राविका हैं। **शोधादर्श** में भी उनके विचार प्रकाशित हुए हैं।
पता : 'गन्धकुटी', २१/६, कर्वे रोड, पुणे-४११००४

श्री वीर नन्दन जिन्दल (जन्म ६ मई, १९१५ ई०, लखनऊ) ने लखनऊ विश्वविद्यालय से बी० एस-सी०, एल-एल० बी०, करने के बाद कुछ वर्ष वकालत की और १९४२ से १९७६ तक बैंकिंग व्यवसाय से जुड़े, भारत बैंक लि० की विभिन्न शाखाओं में प्रबन्धक रहने के बाद लखनऊ बैंक लि०, लखनऊ, के प्रबन्ध निदेशक रहे। लखनऊ के सामाजिक जीवन में सक्रिय रहे और कई सामाजिक व सांस्कृतिक संस्थाओं से सम्बद्ध रहे। समाचार पत्रों में पत्र लेखन उनकी हॉबी १९५६ से अनवरत चली आ रही है। अपने विचार-उत्प्रेरक पत्रों द्वारा उन्होंने कितने ही विवाद प्रेरित किये और लोगों को वर्तमान घटनाओं, धार्मिक कठमुल्लापन और सामाजिक समस्याओं के विषय में सोचने के लिए प्रोत्साहित किया। विचारों के संवहन में और लोगों को सोचने तथा अपने विचारों को व्यक्त करने

के लिए प्रेरित करने में उनका योगदान समाचार-पत्रों के अग्रलेखों से कम नहीं रहा है।

पता : अजिताश्रम, गनेशगंज, लखनऊ-२२६०१८

श्री शरत कुमार कौशिक (जन्म १० अक्तूबर,, १९३९ ई०, मथुरा) ने बी० ए०, एल-एल० बी०, करने के बाद कुछ समय मथुरा में वकालत की। १९६२ में लोक सेवा आयोग से चयनित होकर उत्तर प्रदेश सचिवालय, लखनऊ, में सेवारत हुए और अक्तूबर १९९७ में विशेष सचिव के पद से सेवा-निवृत्त हुये। सेवाकाल में भी अध्ययन, लेखन, तथा साहित्यिक, सामाजिक और आध्यात्मिक विषयों पर परिचर्चा में अभिरुचि बनी रही। **धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, सरिता** और **कादम्बिनी** में समय-समय पर विचार प्रकाशित होते रहे। The Pioneer में विगत ३५ वर्षों से पत्र-स्तम्भ में अपने विचार प्रकाशित करते रहे हैं जिनमें मर्यादित और सन्तुलित भाषा-शैली का प्रयोग करते हुए अपना अभिमत स्पष्ट रूप से प्रकट किया ताकि जनमत को सही दिशा मिल सके।

पता : डी-१३६१, इन्दिरा नगर, लखनऊ-२२६०१६

श्री शांतिलाल के० शहा (जन्म २४ अगस्त, १९१७ ई०, ग्रा० तासगांव, जि० सांगली) मुम्बई विश्वविद्यालय से इन्टरमीडिएट परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद ही कांग्रेस में सक्रिय हो गये और १९४२ में तासगांव की तहसील कचहरी पर तिरंगा फहराया। पिता जी के निधन के कारण गार्हस्थिक दायित्वों के वहन हेतु पुणे में देना बैंक और पंजाब नेशनल बैंक में सेवारत हुए और अन्ततः सांगली की शेतकारी शुगर फैक्टरी में चीफ कैशियर और जल सिंचन विभाग के असिस्टेंट सेक्रेटरी के पदों पर ३५ वर्ष सेवा की। उसके बाद १६ वर्ष सांगली और कुंभोजगिरि के श्री पार्श्वनाथ मंदिर ट्रस्टों से सम्बद्ध रहे। हृदय रोग से पीड़ित होने के कारण अब सक्रिय सेवा-कार्य सम्भव नहीं है, तथापि अध्ययन व चिन्तन जारी है। हिन्दी, मराठी और गुजराती भाषाओं में उपलब्ध जैन धर्म, बौद्ध धर्म व हिन्दू धर्म से सम्बन्धित धर्म-दर्शन विषयक साहित्य का

स्वाध्याय व्यसन-स्वरूप है। वह एक नैष्ठिक परन्तु जिज्ञासु श्रावक हैं और जैन धर्म व दर्शन को आधुनिक वैज्ञानिक सोच के परिप्रेक्ष्य में देखना-जांचना चाहते हैं। उनकी जिज्ञासा शोधादर्श में प्रकाशित हुई हैं और उन पर रोचक चर्चा हुई है।
पता : कुसुम बंगला, राजवाड़ा, गणेश दुर्ग, सांगली-४१६४१६

श्री श्रवण कुमार श्रीवास्तव (जन्म २३ नवम्बर, १९२३ ई०, बरेली; निधन १७ जून, १९९७ ई०, कानपुर) लगभग २ वर्ष रेलवे के दफ्तर में कार्य करने के बाद उत्तर प्रदेश शिक्षा सेवा में पदस्थ हुए और विभिन्न सरकारी शिक्षण संस्थाओं में अध्यापन करने के उपरान्त गवर्नमेंट कान्स्ट्रक्टिव ट्रेनिंग कालेज, लखनऊ, के प्रिन्सिपल रहे और अन्त में पाठ्य पुस्तक अधिकारी के पद से मई १९८२ में सेवानिवृत्त हुए। सेवा काल में उन्होंने लन्दन विश्वविद्यालय के इन्स्टीट्यूट ऑफ एजूकेशन से पाठ्य पुस्तकों के लेखन, उत्पादन व वितरण के विषय में विशेष प्रशिक्षण प्राप्त किया। सेवानिवृत्ति के बाद ५ वर्ष कानपुर की श्रमिक विद्यापीठ के निदेशक रहे और अन्त में कुछ माह लखनऊ के लिट्रेसी हाउस से सम्बद्ध रहे। अक्तूबर १९८८ में गम्भीर रूप से अस्वस्थ हो जाने के कारण उन्हें सक्रिय जीवन से विश्राम लेना पड़ा। वह एक निष्ठावान अध्यापक व कार्य-कुशल शिक्षा अधिकारी थे, और विशिष्ट मानवीय गुणों से समन्वित थे जो उनके सम्पर्क में आने वाले सभी लोगों को प्रभावित करते थे। पाठ्य पुस्तकों के निर्माण में जो अवदान उनका रहा वह चिर-स्मरणीय रहेगा।

श्री श्रीनारायण चतुर्वेदी (जन्म २८ सितम्बर, १८९३ ई०, इटावा; निधन १८ अगस्त, १९९० ई०, लखनऊ) इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम० ए०, एल० टी०, और किंग्स कालेज, लन्दन, से शिक्षा शास्त्र में एम० ए०, यू० पी० सरकार के अन्तर्गत शिक्षा सेवा के सदस्य रहे और १९४८ में सेवानिवृत्त हुए, परन्तु उसके उपरान्त २ वर्ष आकाशवाणी में उप निदेशक और तत्पश्चात १९५१-५४ में मध्य भारत में शिक्षा निदेशक रहे। उसके बाद भी वह उत्तर प्रदेश शासन

के अन्तर्गत हिन्दी परामर्शदाता रहे तथा विभिन्न सरकारी समितियों के सदस्य रहे। हिन्दी साहित्य की अप्रतिम पत्रिका **सरस्वती** के भी २० वर्ष सम्पादक रहे जिसमें वह उसकी स्तरीयता को बनाये रखने के प्रति प्रतिबद्ध रहे। आर्थिक कारणों से यह पत्रिका उनके सम्पादक काल के बाद बन्द हो गई जो हिन्दी का बड़ा दुर्भाग्य था। प्रायः ७५ वर्ष हिन्दी साहित्य की सेवा की। 'भाई जी', 'विनोद शर्मा' और 'श्रीवर' के नाम से कविता करते थे। वह उभयनिष्ठ व्यक्तित्व के धनी थे—ब्रिटिश सरकार ने उन्हें 'राय बहादुर' का खिताब दिया था और स्वतन्त्र भारत की सरकार ने उन्हें 'पद्म भूषण' की उपाधि से अलंकृत किया। हिन्दी भाषा की अस्मिता के प्रति उनकी निष्ठा और प्रतिबद्धता उस समय अत्यन्त मुखर हुई जब उर्दू को उत्तर प्रदेश में द्वितीय राजभाषा बनाए जाने और हिन्दी भाषा को इस प्रकार अवमानित किये जाने के विरोध में हिन्दी संस्थान के माध्यम से प्रदत्त उत्तर प्रदेश शासन के सर्वोच्च सम्मान 'भारत भारती पुरस्कार' को उन्होंने अस्वीकार कर दिया।

श्री सत्यन्धर कुमार सेठी (जन्म १२ अक्तूबर, १९१० ई०, ग्रा० भादबा, जि० जयपुर; निधन १२ जुलाई, १९९७ ई०, उज्जैन) एक धर्मनिष्ठ श्रावक थे। उन्होंने जैन शास्त्रों का गहन अध्ययन किया था और अपने व्यवसायिक जीवन का सफल निर्वहन करते हुए धार्मिक व सामाजिक जीवन में विशेष सक्रिय हुए। १९४८ में उज्जैन आकर कपड़े के व्यापार में लगे, साथ ही महावीर जयन्ति को सार्व-जैन पर्व के रूप में मनाना प्रारम्भ किया, एक जैन पुरातत्त्व संग्रहालय की स्थापना कराई और जैन मन्दिर ट्रस्टों तथा मन्दिर में शास्त्र भण्डारों की स्थापना कराई। विद्यालयों और वाचनालयों की स्थापना भी इस उद्देश्य से कराई कि जैन धर्म के सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार हो। जैनेतर संस्थाओं से भी सम्बद्ध रहे। यद्यपि वह परम्परा-पोषक थे, वह रुढ़िवाद की कुरीतियों को प्रोत्साहन नहीं देते थे। उनकी व्याख्यान शैली रोचक होती थी और उन्हें 'वाणी भूषण' की उपाधि से अलंकृत किया गया था। सभी अखिल भारतीय

जैन संस्थाओं से वह जुड़े थे और अखिल विश्व जैन मिशन के प्रधान संचालक अपने अंतिम दिनों तक रहे। **शोधादर्श** में व्यक्त स्पष्ट-वादिता के वह प्रशंसक थे।

श्री सी० एम० अडवानी (चोइथराम एम० अडवानी) (जन्म १९२५ ई०, सिन्ध प्रान्त—अब पाकिस्तान में) सिन्धी भाषा में साहित्यिक लेखन छात्र जीवन से ही करते रहे और विभाजन से पूर्व कराची में तथा बाद को लखनऊ से प्रकाशित **सिन्धी गुलशन** में उनकी कहानियां प्रकाशित होती रहीं और सिन्धी साहित्य को समृद्ध करने के लिये उन्हें १९९२ में 'सिन्धु रतन' पुरस्कार से राज्यपाल श्री सत्य नारायण रेड्डी द्वारा सम्मानित किया गया। १९५९ में लखनऊ में सिन्धु समाज का गठन किया और सिन्धी समुदाय की विभिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक, भाषायिक और धार्मिक प्रवृत्तियों से जुड़े रहे तथा विगत १० वर्ष से हरिओम मन्दिर के अध्यक्ष हैं जो सिन्धियों की एक धार्मिक-सामाजिक संस्था है। विभाजन के बाद लखनऊ आने पर उत्तर प्रदेश सचिवालय में सेवारत हुए और ३६ वर्ष सेवा करने के उपरान्त दिसम्बर १९८३ में अनुसचिव के पद से सेवा निवृत्त हुए। सेवा निवृत्ति के बाद उन्होंने The Pioneer में पत्र स्तम्भ में सामयिक विषयों पर विचार व्यक्त करना शुरू किया और प्राय: सप्ताह में २ पत्र औसत उनके प्रकाश में आते रहे जिनमें वर्तमान परिदृश्य पर निष्पक्ष एवं निर्भीक टिप्पणी रहती है।

पता : फ्लैट नं० २३, न्यू म्यूनिसिपल बिल्डिंग, तुलसी दास मार्ग, चौक, लखनऊ-२२६००३

श्री सी० के० नागराजा राव (चिकबल्लापुर कृष्णामूर्ति राव नागराजा राव) (जन्म १२ जून, १९१५ ई०, ग्रा० चेल्लकेरे, जि० चित्रदुर्ग; निधन १० अप्रैल, १९९८ ई०, बंगलौर) ने कन्नड भाषा में विपुल साहित्य का सृजन किया। पहला कहानी संग्रह (**कडुमल्लिगे**) १९३७ में, प्रथम नाटक (**शूद्रमुनि**) १९४३ में और प्रथम उपन्यास (**पट्टमहादेवी शान्तला**) १९७८ में प्रकाशित हुए।

१९८३ में **पट्टमहादेवी शान्तला** पर उन्हें 'मूर्तिदेवी पुरस्कार' से सम्मानित किया गया और भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा इसका ४ खण्डों में हिन्दी में अनुवाद भी प्रकाशित किया गया। होयसाल और चालुक्य वंशों पर कई ऐतिहासिक उपन्यास लिखे। साहित्य समीक्षा और शोध पत्र भी लिखे। कन्नड में अनुवाद भी किये और सम्पादन से भी जुड़े। फिल्मों के लिये संवाद और गीत भी लिखे। विभिन्न साहित्यिक, सांस्कृतिक और सामाजिक संस्थाओं में सक्रिय रहे। कर्नाटक सरकार द्वारा साहित्य का सर्वोच्च सम्मान 'कन्नड राज्योत्सव पुरस्कार' १९९१ में प्रदान किया गया।

डा० सैयद इर्तिज़ा हुसैन (जन्म १० सितम्बर, १९४० ई०, ग्रा० करोली बुधकर, जि० रायबरेली) अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़, में शिया थियोलॉजी विभाग में रीडर हैं, और अरबी, फारसी, संस्कृत, फ्रेंच, हिन्दी, उर्दू व अंग्रेजी भाषाओं के ज्ञाता हैं और धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन में विशेषज्ञ हैं। अगस्त १९६७ से अध्यापन कर रहे हैं। हिन्दी में **इस्लाम का उदय और लक्ष्य** पुस्तक लिखी है और हिन्दी, उर्दू व अंग्रेजी में विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में इस्लाम, अलीगढ़ विश्वविद्यालय और मुस्लिम जगत पर लेख लिखते रहे हैं जो उनके सन्तुलित दृष्टिकोण को और धार्मिक हठधर्मिता व असहिष्णुता के विरोध को उद्भासित करते हैं। उनका साहस, दूरदर्शिता और समन्वय की भावना प्रशंसनीय हैं। वह धार्मिक सद्भाव और परस्पर सद्व्यवहार के प्रबल पक्षधर हैं।

पता : थियोलॉजी विभाग (विलायत मंजिल), अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़-२०२००२

डा० हर्बर्ट बी० गुन्थर (जन्म १७ मार्च, १९१७ ई०, जर्मनी) ने म्यूनिख विश्वविद्यालय और वियना वि० वि० से भारतीय दर्शन में पी-एच० डी० की उपाधियां प्राप्त की। १९५० से १९६४ तक वह भारत में रहे और लखनऊ वि० वि० तथा वाराणसेय संस्कृत वि० वि० में अध्यापन कार्य से जुड़े। १९६४ में कनाडा चले गये और वहां सास्केछवान वि० वि० में १९८४ तक सुदूर पूर्व के

अध्ययन से सम्बन्धित विभाग के अध्यक्ष और प्रोफेसर रहे तथा डी० लिट्० की उपाधि से सम्मानित किये गये। वह बौद्ध धर्म-दर्शन के गहन अध्येता हैं और तिब्बती बौद्ध दर्शन एवं तन्त्रयान के विशेषज्ञ हैं। भारत प्रवास के दौरान लखनऊ और वाराणसी में उन्होंने प्रसंगतः तुलनात्मक दृष्टि से जैन दर्शन का भी अध्ययन किया। प्राच्य विद्या के गहन अध्येता के रूप में उनका अवदान सदैव अविस्मरणीय रहेगा।

पता : १३२०–१३ स्ट्रीट ईस्ट, सास्काटून, सास्केछवान, कनाडा

श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा (जन्म २२ जनवरी, १९१९ ई०, बिजनौर) आगरा विश्वविद्यालय के अन्तर्गत मेरठ कालेज, मेरठ, से १९३७ में बी० ए० करने के उपरान्त यू० पी० पब्लिक सर्विस कमीशन द्वारा चयनित होकर १९४० में लखनऊ में यू० पी० सचिवालय में सेवारत हुए और तत्समय संवर्ग को उपलब्ध संयुक्त सचिव के सर्वोच्च पद से १९७७ में सेवानिवृत्त हुए। एक संवेदनशील और कार्य कुशल अधिकारी के रूप में उनकी प्रतिष्ठा रही। १९७२-७४ में राज्य कर्मचारियों को उत्कृष्ट कार्य के लिए सम्मानित करने की योजना को उन्होंने प्रायोजित एवं कार्यान्वित किया। प्रारम्भ से ही उनकी धार्मिक-आध्यात्मिक साहित्य के अध्ययन में अभिरुचि रही। अध्ययन उनकी मुख्य हॉबी है। सामाजिक एवं राजनैतिक परिदृश्य पर उनको सहज ही चिन्ता है। वह एक मनस्वी चिन्तक हैं जो कोलाहल से दूर रहकर अपनी सामर्थ्य के अनुसार जरूरतमन्द लोगों की सहायता करने में प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। **शोधादर्श** के नियमित पाठक और प्रशंसक हैं।

पता : १६-सी, के पार्क, शांतिमार्ग, महानगर एक्स०, लखनऊ-६

श्री ज्ञान चन्द्र द्विवेदी (जन्म ६ जुलाई, १९३२ ई०, ग्रा० समहन, जि० इलाहाबाद; निधन १० मार्च, १९९३ ई०, लखनऊ) ने विषम परिस्थितियों में संघर्षरत रह कर अपने कार्य क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित किया। कुछ वर्ष अध्यापक रहने के बाद वह लोक सेवा आयोग से चयनित होकर उ० प्र० सचिवालय में सेवारत हुए और

सेवा में रहते हुए लखनऊ विश्वविद्यालय से एल-एल० बी० की परीक्षा विशेष सम्मान के साथ उत्तीर्ण की। सचिवालय से त्याग-पत्र देकर उत्तर प्रदेश अधिवक्ता परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया और दिसम्बर १९६१ से इलाहाबाद में उच्च न्यायालय में अधिवक्ता हो गये। अधिवक्ता के रूप में उन्होंने शीघ्र ही विशेष प्रतिष्ठा-सूचक स्थान प्राप्त कर लिया और उत्तर प्रदेश बार काउंसिल के सदस्य व अध्यक्ष निर्वाचित हुए। सफल अधिवक्ता होने के साथ ही वह एक कुशल पत्रकार और श्रमिकों, पत्रकारों, अधिवक्ताओं व अध्यापकों के हित के लिए संघर्षशील नेता भी रहे। १९८४ से वह उत्तर प्रदेश विधान परिषद के सदस्य रहे, कई समितियों के अध्यक्ष रहे और परिषद में भारतीय जनता पार्टी के नेता तथा पार्टी के उपाध्यक्ष भी रहे। अपनी पार्टी में उनका बहुमान था और सभी शीर्ष नेताओं से उनके निकट सम्बन्ध थे। बौद्धिकता के साथ मानवीयता का अद्‌भुत समन्वय उनमें था और सम्बन्धों के प्रति संवेदनशीलता उनका विशिष्ट गुण था।

श्री ज्ञान चन्द जैन (जन्म ८ फरवरी, १९१८ ई०, जौनपुर) ने लखनऊ विश्वविद्यालय, आगरा वि० वि० और इलाहाबाद वि० वि० से क्रमशः बी० ए०, एल-एल० बी० और एम० ए० की परीक्षायें उत्तीर्ण कीं। इलाहाबाद में छात्र-जीवन में ही वह पत्रकारिता से जुड़ गये। कुछ वर्ष हिन्दी दैनिक **भारत** के सम्पादकीय में कार्यरत रहे और स्वतन्त्र पत्रकार के रूप में भी कार्य किया। १९४७ से १९७६ तक वह लखनऊ के हिन्दी दैनिक **नवजीवन** के समाचार सम्पादक रहे तथा तत्पश्चात १९८४ तक **स्वतन्त्र भारत** के अग्र-लेखक रहे। १९३८ से एक कार्यकारी पत्रकार रहे और हिन्दी में पत्रकारिता के विशेषज्ञ के रूप में प्रतिष्ठित हुए। गढ़वाल विश्व-विद्यालय ने १९८० में उन्हें पत्रकारिता विभाग के व्यवस्थापन के लिए आमन्त्रित किया। पुस्तकें पढ़ने और कहानी लिखने का शौक उन्हें छात्र जीवन से ही था और १९३५-३६ में ही उनकी कहानियां **हंस, माधुरी** और **चांद** जैसी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई

थीं। सामयिक घटनाओं और कथा साहित्य के साथ ही वह जैन इतिहास के गम्भीर अध्येता रहे हैं। **निगण्ठ ज्ञातपुत्र** (प्र० १९७७) में उन्होंने तीर्थंकर महावीर की जीवनी का प्रणयन किया है जो महावीर के जीवन और उनके समय का एक वस्तुपरक मूल्यांकन प्रस्तुत करता है। अमृत लाल जी नागर और डा० ज्योति प्रसाद जी जैन के वह निकट-मित्र और प्रशंसक रहे। नागर जी से सम्बन्धित उनके संस्करण प्रकाशित हो रहे हैं जो हिन्दी साहित्य के अध्येताओं के लिये बहुत उपयोगी होंगे। एक अन्य महत्त्वपूर्ण कृति **प्रेमचन्द पूर्व के हिन्दी उपन्यास** भी प्रकाशनाधीन है। स्वयं अपने संस्मरण भी वह लिख रहे हैं जिनमें २०वीं शती के प्रारम्भ से परिदृश्य का एक समीक्षात्मक आकलन स्वानुभव के आधार पर होगा। तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति की गतिविधियों के समर्थक और **शोधादर्श** के प्रशंसक हैं।

पता : शिखर भवन, टाटपट्टी, यहियागंज, लखनऊ-२२६००३

[**नोट** : पृ० १९७ पर पंक्ति १८ में 'अंग्रेजी में ए० ए०' के स्थान पर 'अंग्रेजी में एम० ए०' पढ़ा जाय।]

समाचार विमर्श

—श्री अजित प्रसाद जैन

दिगम्बर जैन समाज के शीर्ष नेताओं की बैठक

"दिनांक २४ मई १९९७ को मुम्बई में दिगम्बर जैन समाज की चार अखिल भारतीय संस्थाओं के अध्यक्षों एवं महामन्त्रियों की एक संयुक्त बैठक साहू शरद कुमार जैन के आतिथ्य में हुई। इस में भारतवर्षीय दिगम्बर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा के अध्यक्ष श्री निर्मल कुमार सेठी और उपाध्यक्ष श्री उम्मेदमल पाण्ड्या, दिगम्बर जैन परिषद के अध्यक्ष साहू रमेश चन्द्र जैन, दिगम्बर जैन महासमिति के अध्यक्ष श्री प्रदीप कुमार सिंह कासलीवाल, भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी के कार्यकारी अध्यक्ष श्री देव कुमार सिंह कासलीवाल, महामन्त्री श्री अरविन्द राव दोषी और विधि सलाहकार डा० डी० के० जैन, एवं श्री प्रकाश बड़जात्या, मंत्री, जैन सहयोग, पुणे, ने भाग लिया। श्री एस० के० जैन बैठक के संयोजक थे। सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया कि—

'दिगम्बर जैन समाज में आज संगठन की अत्यन्त आवश्यकता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में तो एकता का महत्व और भी बढ़ गया है। ऐसे समय में पूजा पद्धति को लेकर कुछ जगहों पर उठे विवाद दिगम्बर जैन समाज में फूट का कारण बन रहे हैं।

अतः भारतवर्षीय दिगम्बर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा, दिगम्बर जैन परिषद, दिगम्बर जैन महासमिति एवं भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष एक स्वर से समाज से विनम्र निवेदन करते हैं कि जिस मन्दिर में जो पूजा पद्धति प्रचलित है अथवा परम्परा से चली आ रही है उसमें कोई परिवर्तन करने की चेष्टा न की जाये। न ही वहां पर कोई ऐसे कार्य किये जायें जिससे समाज में विद्वेष अथवा विवाद पैदा हो। समाज से यह भी निवेदन है कि जगह-जगह पर इसी प्रकार के प्रस्ताव पारित किये जायें जिससे सामाजिक सौहार्द बना रहे।'

इस आशय का प्रस्ताव भी पारित किया गया कि जैन समाज को अल्पसंख्यक दर्जा दिये जाने के सम्बन्ध में चारों संस्थाओं के अध्यक्ष अपने संयुक्त हस्ताक्षरों द्वारा एक ज्ञापन प्रधानमन्त्री एवं उन राज्यों के मुख्यमंत्री को दें जहां अभी तक जैन समाज को अल्पसंख्यक मान्यता प्राप्त नहीं हुई। यह भी तय हुआ कि इस कोर्डिनेशन कमेटी की अगली बैठक दिल्ली में १६ अगस्त, १९९८ को होगी और इसका आयोजन महासभा करेगी।"

हम महासमिति, परिषद, महासभा तथा भा० दि० जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी के अध्यक्षों एवं महामन्त्रियों की इस प्रथम बैठक का स्वागत करते हैं जो सभी संस्थाओं के मिल कर सहयोग पूर्वक कार्य करना सुनिश्चित करने की दृष्टि से आयोजित की गई थी। यों तो महासमिति, परिषद व महासभा तीनों संस्थायें सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज का अकेले ही अधिकृत प्रतिनिधि होने का दावा करती रही हैं पर कुछ मौलिक मतभेदों के चलते अपनी-अपनी ढपली अपना-अपना राग ही अलापती रही हैं, परिणाम स्वरूप हम अभी तक राष्ट्रीय महत्व के मुद्दों पर (जैसे कि दूरदर्शन एवं आकाशवाणी पर अण्डे-मांसाहार के प्रचार पर रोक, नई पशुवध शालाओं की स्थापना पर रोक, मांस निर्यात का विरोध, धार्मिक अल्पसंख्यक समुदाय की मान्यता की मांग, आदि) केन्द्र व राज्य सरकारों के समक्ष सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज की मांग एक जुट होकर प्रस्तुत नहीं कर सके हैं। हम आशा करते हैं कि दि० जैन समाज के शीर्ष नेताओं की यह समन्वय समिति इस कमी को कारगर रूप से दूर करने में समर्थ होगी।

समन्वय समिति ने अपनी इस पहली बैठक में जैन समाज को धार्मिक अल्पसंख्यक समुदाय की मान्यता दिये जाने की मांग का एक ज्ञापन, प्रधानमंत्री जी तथा उन राज्यों के मुख्य मन्त्रियों को देने का निर्णय लिया जिनमें जैन समाज को यह मान्यता प्राप्त नहीं है। हमारी सीमित जानकारी के हिसाब से तो अभी तक किसी भी राज्य में जैन समाज को धार्मिक अल्पसंख्यक समुदाय की मान्यता

प्राप्त नहीं हुई है । पर यदि समन्वय समिति या उसकी किसी घटक संस्था के पास मान्यता प्राप्त होने सम्बन्धी पक्की जानकारी उपलब्ध है तो उन्हें उसे जन साधारण की जानकारी के लिये प्रचारित करना चाहिए ।

अच्छा होता यदि इस प्रथम बैठक में मांस निर्यात के विरोध में, दूरदर्शन व आकाशवाणी से प्रायोजित कार्यक्रमों के माध्यम से अण्डे व मांसाहार का प्रचार बन्द किये जाने के लिये तथा नई पशु-वध शालाएं स्थापित किये जाने के विरोध में भी ज्ञापन दिये जाने का निर्णय लिया गया होता । हम आशा करते हैं कि समन्वय समिति इस सम्बन्ध में भी शीघ्र ही निर्णय लेगी ।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि हमारे राजनेताओं तथा जैनेतर समाज की दृष्टि में सम्पूर्ण जैन समाज एक ही इकाई है । उनकी दृष्टि में दिगम्बर श्वेताम्बर का भेद कोई अर्थ नहीं रखता । पर यदि हमारी किसी मांग को गम्भीरता से न लेना हो तो कह दिया जाता है कि यह मांग सम्पूर्ण जैन समाज की ओर से नहीं की गई है । क्या हम अपने सभी आम्नायों के समाज नेताओं से यह आशा करें कि वे सम्पूर्ण जैन समाज का एक राष्ट्रीय मंच तैयार करेंगे जिसके माध्यम से हम आम सहमति के आधार पर सभी अखिल भारतीय महत्व के मुद्दों पर सम्पूर्ण जैन समाज की ओर से अधिकारियों के समक्ष अपनी मागें प्रस्तुत कर सकें । अभी तो यह आशा दिवा स्वप्न ही मालूम पड़ती है ।

शास्त्रि परिषद का वार्षिक अधिवेशन

श्री अ० भा० दिगम्बर जैन शास्त्रि परिषद का वार्षिक अधिवेशन दि० २ जून, १९९८, को मेरठ नगर (उ० प्र०) में पूज्य उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी एवं मुनिवर श्री वैराग्य सागर महाराज के सानिध्य में तथा प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ । अधिवेशन में पारित एक प्रस्ताव द्वारा गोलाकोट अतिशय क्षेत्र (म० प्र०) में हुए मूर्ति भंजन कांड की घोर निन्दा की गई तथा शासन से अपराधियों को शीघ्र पकड़ कर कठोर दण्ड देने की मांग की औपचारिकता पूरी की गई ।

एक दूसरे प्रस्ताव द्वारा श्री पार्श्वनाथ विद्यापीठ द्वारा प्रकाशित डा० सागर मल जैन कृत "यापनीय सम्प्रदाय" पुस्तक में वर्णित तथ्य विरुद्ध अप्रमाणिक उल्लेखों का जिनमें दिगम्बर जैन आम्नाय के प्रमुख आचार्यों—पुष्पदन्त, भूतबलि, उमास्वामी आदि को यापनीय सम्प्रदाय के आचार्य सिद्ध करने का प्रयास किया गया है, घोर विरोध किया गया। परिषद ने इस विषय पर सही स्थिति प्रस्तुत करने तथा डा० सागरमल जैन के तर्कों का प्रामाणिक उत्तर देने के लिए "यापनीय संघ एवं दि० जैन आचार्य" ग्रन्थ डा० रतन चन्द जैन, भोपाल, से लिखवाने का निर्णय लिया।

एक अन्य प्रस्ताव द्वारा परिषद ने दैनिक विधि विधान, गृह प्रवेश, विवाह आदि मांगलिक कार्यों को संपन्न कराने हेतु शास्त्र विहित एक लघु पुस्तिका ब्र० जय निशान्त से लिखाने का निर्णय लिया।

एक अन्य प्रस्ताव द्वारा शास्त्रि परिषद ने मुनि परम्परा की सुरक्षा हेतु मुनि संघों द्वारा पालन किए जाने के लिए एक २३ सूत्री **आदर्श नियमावली** प्रसारित की जो निम्न प्रकार है—

(१) संघ में व्यक्तिगत नौकर नहीं रखना।

(२) संघ में रुपया पैसा आदि नहीं रखना।

(३) संघ के नाम से चौका नहीं रखना।

(४) संघ में मोटर गाड़ी आदि वाहन नहीं रखना।

(५) मुनि संघों को तीर्थ यात्रा के लिए यदि भक्त श्रावक जन भक्ति पूर्वक स्वयं की पूर्ण व्यवस्था में ले जावें तो जाना, नहीं तो शान्त भाव रखते हुए जहां हम हैं, वहीं हमारे तीर्थ हैं, ऐसा समझना।

(६) त्यागी वर्ग समुदाय में एक साथ अपनी नित्य क्रियायें करें; धार्मिक ग्रन्थों का क्रमिक अभ्यास करना।

(७) भक्ति-पाठ की पुस्तकें, स्वाध्याय के योग्य आवश्यक शास्त्र, डायरी, पेन्सिल आदि परिमित मात्रा में त्यागी वर्ग स्वयं के पास रखें।

(८) हर प्रकार के अध्ययन योग्य शास्त्र सामूहिक रूप में संघ में रखना, उनको अपने-अपने अध्ययन के अनुसार लेकर पढ़ना।

(९) सदैव स्वावलम्बन में रहना।

(१०) विकथा नहीं करना।

(११) अकेले नहीं रहना।

(१२) अन्य संघ के त्यागी वर्ग को अपने संघ में नहीं रखना। यदि उनके गुरु स्वर्गस्थ हैं और उनकी संघ परम्परा में गुरु सानिध्य में धर्माचरण से रहे हों, रहने योग्य हों तथा यदि प्रार्थना करें कि "मैं आपके संघ में रह कर आत्म-कल्याण करना चाहता हूँ" तो उसे रखना और संभाल करना।

(१३) गुरु विद्यमान रहते हुए भी उनकी आज्ञा या सम्मति हो तो अध्ययनार्थ चित्त स्थिरता से रह सकते हैं। गुरु एक ही रखना।

(१४) सामायिक-जाप-स्तोत्रादि का पाठ नियमित समय पर करना, समस्त साधु-साध्वियों आदि के साथ समान व्यवहार रखना, अनुपयोगी वस्तुओं का संग्रह नहीं करना।

(१५) घर की मोह-ममता को छोड़ कर ही संघ में रहना। व्रत धारण करने वाले ही संघ में रहेंगे। मनमाने घर में, मनमाने संघ में या मनमाने यहां-वहां घूम कर आने वाले को संघ में नहीं रखना।

(१६) अपने संघ के त्यागी अपने संघ को छोड़ कर अन्य संघ में नहीं जावेंगे। बिना कहे आने -जाने पर दीक्षा छेद कर रखें जावेंगे या पुनः दीक्षित होंगे।

(१७) मुनि, ऐलक, छुल्लक और ब्रह्मचारी एक स्थान में तथा आर्यिका, छुल्लिका और ब्रह्मचारिणी अलग स्थान में अपने-अपने समूह में रहेंगे/रहेंगी।

(१८) परिजनों को संघ में नहीं रखना।

(१९) छुल्लक, छुल्लिका एवं ऐलक को मोटर आदि में नहीं बैठना होगा।

(२०) साल दो साल तक मुनि-धर्माचरण, अध्ययन, सेवा भाव आदि में दृढ़ता देख कर ही मुनि-दीक्षा दी जावेगी। दीक्षा के

बाद भी साल-दो-साल बाद योग्यतानुसार गुरु-आज्ञा से ही धर्म कार्य हेतु पृथक से विहार कर सकेंगे, किन्तु अकेले नहीं।

(२१) त्यागी वर्ग को किसी भी श्रावक के निजी गृहों में न रह कर सार्वजनिक स्थानों में रहना होगा।

(२२) चातुर्मास से अन्य समय साधु को किसी भी स्थान पर अथवा किसी मठ, संस्थान या आश्रम आदि में स्थायी रूप से नहीं रहना चाहिये।

(२३) त्यागी वर्ग किसी भी कार्य हेतु चन्दा–चिट्ठा नहीं मांगेंगे, किन्तु धर्म कार्य के लिए उपदेश तथा प्रेरणा दे सकते हैं।

इस आचार संहिता के सम्यक क्रियान्वयन की दिशा में पहल करने हेतु शास्त्रि परिषद ने पांच विद्वानों की एक समिति भी बनाई है जो प्रमुख आचार्यों के पास जाकर विचार विमर्श करेगी और उनका समर्थन/सहमति प्राप्त कर उक्त आचार संहिता को लागू करवाने का उपक्रम करेगी।

शास्त्रि परिषद ने अपने वर्ष १९९३ के वार्षिक अधिवेशन में भी दिगम्बर जैन साधु संस्था के द्वारा चरणानुयोग में प्रतिपादित चारित्र सम्बन्धी मर्यादाओं के प्रति दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही उपेक्षा वृत्ति पर गंभीर चिन्ता व्यक्त की थी तथा एक प्रस्ताव पारित कर एकल विहार के निषेध पर, मन्दिर, आश्रम, मान स्तम्भ, पाठशालाओं आदि के निर्माण कार्यों में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से लिप्त न होने पर, ख्याति-लाभ पूजादि की चाह से विरत रहने व उपाधियों आदि के व्यामोह से बचे रहने पर तथा मूलाचार में निर्दिष्ट साधु योग्य उपकरणों के अतिरिक्त अन्य प्रकार के संसाधनों के प्रवेश से संघ को एवं अपने को बचाए रखने पर विशेष रूप से बल दिया था तथा साधु संस्था से इन सबसे बचे रहने के लिये विनम्र प्रार्थना की गई थी। हमें नहीं लगता कि हमारे साधु वर्ग पर इस प्रार्थना का कोई अनुकूल प्रभाव पड़ा हो। उल्टे विगत पांच वर्षों में साधु की शिथिलोन्मुख प्रवृत्तियों में अधिकाधिक वृद्धि ही देखने में आई। शास्त्रि परिषद ने भी कदाचित् प्रस्ताव मात्र

पारित करके अपने कर्त्तव्य की इति श्री मान ली थी। पर इस बार पांच विद्वानों की सम्पर्क समिति बनाने से प्रतीत होता है कि परिषद प्रस्तावित आचार संहिता को मुनि संघों में लागू किये जाने के लिये पूर्ण रूप से गम्भीर है और हमें आशा करनी चाहिए कि परिषद के साधु-शिथिलाचार रोकने के प्रयास किसी सीमा तक तो सफल होंगे ही।

शास्त्रि परिषद द्वारा प्रस्तावित यह २३ सूत्री नियमावली परिषद के अध्यक्ष जी को चारित्र चक्रवर्ती पू० आ० श्री शान्ति सागर जी की परम्परा के पट्टाचार्य स्व० श्री अजित सागर म० द्वारा एक ग्रन्थ में सहेज कर रखी हुई मिली थी जिसे, कहा जाता है कि, आ० श्री शान्ति सागर जी म० अपने शिष्यों प्रशिष्यों को दीक्षोपरान्त पालन करने के लिए कहा करते थे। ऐसा लगता है कि वर्तमान में इस नियमावली का सम्यक् रूप से पालन आ० श्री शान्ति सागर जी की परम्परा के पट्टाचार्यों द्वारा भी नहीं किया जा रहा है। शास्त्रि परिषद के इस अधिवेशन को दो पूज्य मुनिराजों का पावन सानिध्य भी प्राप्त था। कम से कम उनका समर्थन/अनुमोदन तो तुरन्त ही प्राप्त किया जा सकता था।

वैसे **आदर्श नियमावली** के रूप में प्रचारित की जा रही इस नियमावली में आदर्श जैसी बात तो नजर नहीं आती। पू० आचार्य श्री धर्म भूषण महाराज के संघ में लागू नियमावली (शोधादर्श-३३ के पृष्ठ २७६-२८१ पर प्रकाशित) की तुलना में तो यह नियमावली बहुत उदार तथा आज की परिस्थितियों से कुछ अंशों तक समझौता किए लगती है। उदाहरण के लिए नियम (१) में यद्यपि साधुओं द्वारा व्यक्तिगत रूप से नौकर रखने का निषेध किया गया है, तथापि सामूहिक रूप में किसी भी संख्या में नौकरों को रखने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया है। यह तब है जबकि महाव्रतियों की छोटी-मोटी सेवा, वैयावृत्य तो संघ के ब्रह्मचारी तथा मुनि भक्त श्रावक करते ही हैं। नियमावली में कूलर, हीटर, पंखा, टेलीफोन, टेलीविजन, ट्रांजिस्टर, मच्छरदानी, तन्त्र-मन्त्र, आदि के उपयोग का

कोई निषेध न होने से यह संकेत मिलता है कि साधु द्वारा इन उपकरणों को रखना तथा उनका उपयोग करना वर्जित नहीं समझा गया है। हमारे देखने में एक ऐसे आचार्य श्री भी आए हैं जो अपने कक्ष में दो टेलीफोन रखे हुए थे तथा दोनों पर भक्तों को विभिन्न प्रकार के परामर्श/आदेश देने में किसी बड़े उद्योगपति/व्यापारी की भांति अति व्यस्त रहते थे। पता नहीं, सामायिक आदि अपनी दैनिक धार्मिक क्रियाओं के लिये पर्याप्त समय किस प्रकार निकालते होंगे।

नियमावली में मोटर वाहनों आदि के संघ में रखे जाने तथा साधुओं द्वारा उनका उपयोग किये जाने पर तो रोक लगाई गई है पर इसमें डोली रिक्शा आदि का उल्लेख न होने से ऐसा लगता है कि उनका उपयोग वर्जित नहीं किया गया है। आज एकाधिक मुनिराज एवं आर्यिकाए डोली में बैठकर निरन्तर विहार करते देखने में आते हैं। क्या मनुष्यों द्वारा ढोई जाने वाली डोली की सवारी मोटर वाहन आदि की सवारी से कम निन्दनीय है? यह ध्यान देने योग्य है कि साधु के ईर्या समिति का पालन किसी भी प्रकार के वाहन के उपयोग के साथ नहीं हो सकता। आज अधिकतर मुनि/आर्यिका संघों में मोटर वाहन आदि हैं जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में संघ की ही सम्पत्ति हैं। हमें नहीं लगता कि ये संघ नियम (४) के लागू हो जाने पर अपने वाहनों को त्याग देंगे।

आ० धर्मभूषण संघ नियमावली में संघ के साथ महिला त्यागियों (आर्यिका, छुल्लिका, ब्रह्मचारिणियों) को रहने की आज्ञा नहीं है जबकि शास्त्रि परिषद द्वारा प्रस्तुत नियमावली में पुरुष एवं महिला त्यागियों दोनों का एक ही संघ में रहने का निषेध तो नहीं किया गया है पर दोनों के अपने-अपने समूह में अलग-अलग स्थानों में रहने की अपेक्षा की गई, जो एक लचीली-सी ही व्यवस्था है। यद्यपि नियम २३ में त्यागी वर्ग को चन्दा-चिट्ठा मांगने से विरत रहने को कहा गया है, हम नहीं समझते इससे उन महामुनियों/आर्यिका माताओं की प्रवृत्तियों पर कोई रोक लग सकेगी जो अपने

मार्गदर्शन में करोड़ों की लागत से नए तीर्थों व विशाल मन्दिरों का निर्माण कराने में लगे हैं। आ० धर्म भूषण संघ नियमावली के नियम १२ (संघस्थ कोई भी साधु अपने पास पिच्छि कमण्डल व शास्त्र के अलावा अन्य किसी प्रकार का परिग्रह नहीं रखेगा) के अनुरूप भी इस नियमावली में कोई प्राविधान नहीं किया गया है और न ही साधुओं को यश, ख्याति, उपाधि के व्यामोह से विरत रहने की अपेक्षा की गई है।

फिर भी इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि हमारे सभी मुनि/आर्यिका संघ इस आदर्श नियमावली को अपना लें तो शिथिलाचार की प्रवृत्तियों पर बहुत कुछ रोक लग सकेगी। हम अ० भा० दि० जैन शास्त्रि परिषद को इस प्रस्ताव को पारित करने तथा इसके क्रियान्वयन के लिये सक्रिय होने के लिये बधाई देते हैं तथा उसके इस सामयिक प्रयास की सफलता की कामना करते हैं।

तीर्थ संरक्षिणी महासभा का गठन

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा द्वारा १ अप्रैल, १९९८, से श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन (तीर्थ संरक्षिणी) महासभा का गठन किया गया है। इन दोनों संस्थाओं के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री निर्मल कुमार जी सेठी ने बताया कि "तीर्थ संरक्षिणी महासभा का गठन हमने अपनी प्राचीन संस्कृति व आर्ष परम्परा की रक्षा करने के लिए किया है तथा **इस संस्था के द्वारा सिर्फ उन्ही तीर्थ क्षेत्रों/मन्दिरों/मूर्तियों का जीर्णोद्धार व बिकास किया जावेगा जो कि लुप्त हो रहे हैं और अन्य समाज वालों के अधिकार में हैं या वे अधिकार की चेष्टा कर रहे हैं।**"

श्री सेठी जी ने यह भी बताया कि वें ६ जुलाई के बाद गाड़ी लेकर तीर्थ क्षेत्रों के जीर्णोद्धार के कार्य हेतु दो माह के लिए यात्रा पर निकल रहे हैं और यदि समाज उन्हें सक्रिय योगदान देवे तो कोई भी प्राचीन तीर्थ बिना जीर्णोद्धार के नहीं रहेगा, अब हम यह नहीं देख सकते कि हमारा कोई प्राचीन तीर्थ श्वेताम्बरों के हाथ में या जैनेतर समाज के हाथ में चला जाए। उन्होंने समाज से इस महान् कार्य में तन-मन-धन से सहयोग देने की अपील की है।

इस समय देश के सभी दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्रों—सिद्ध क्षेत्रों कल्याणक क्षेत्रों, अतिशय क्षेत्रों व प्राचीन सांस्कृतिक/मूर्तिकला केन्द्रों की राष्ट्रीय स्तर पर ऊपरी सार-सम्हाल श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी द्वारा की जा रही है जो गत ७५ वर्षों से कार्यरत है। विभिन्न क्षेत्रों की प्रबन्ध समितियों को क्षेत्र के जीर्णोद्धार-विकास हेतु आंशिक आर्थिक योगदान देने के अतिरिक्त इस कमेटी की विशेष व्यस्तता कतिपय प्राचीन प्रमुख क्षेत्रों पर स्वामित्व तथा पूजा अर्चना के अधिकारों को लेकर श्वेताम्बर समाज से, विभिन्न न्यायालयों में चल रहे मुकदमों में दि० जैन समाज की ओर से पैरवी करने में रही है (जैसे श्री सम्मेद शिखर जी, मक्सी पार्श्वनाथ, केसरिया जी आदि)। सोनगढ़ में भी एक तीर्थ सुरक्षा फण्ड ट्रस्ट बना है पर वह सामान्यतया उन्हीं क्षेत्रों पर अपना योगदान करता है जिनकी प्रबन्ध समितियां सोनगढ़ की विचार धारा से प्रभावित हैं। अब अखिल भारतीय स्तर पर एक तीसरी संस्था—तीर्थ संरक्षिणी महासभा का उदय हुआ है जिसके उत्साही अध्यक्ष जी ने ऐसे प्राचीन क्षेत्रों/मन्दिरों/मूर्तियों के जीर्णोद्धार-विकास का बीड़ा उठाया है जो विलुप्त हो रहे हैं और जिन पर दूसरे समाज वाले अधिकार जमाए बैठे हैं। हम उनके संकल्प की सराहना करते हैं तथा उनके प्रयास की सफलता की कामना करते हैं। यदि तीर्थ संरक्षिणी महासभा के उत्साही कार्यकर्त्ताओं के प्रयास से गिरनार व उस जैसे एक दो प्रमुख क्षेत्रों पर भी पुनः दिगम्बर जैन समाज को निर्बिघ्न पूजा-अर्चना का अधिकार प्राप्त हो जाए तो यह निःसन्देह एक बहुत बड़ी उपलब्धि होगी।

श्री सेठी जी के अनुसार तीर्थ संरक्षिणी महासभा द्वारा सर्वप्रथम अंजनगिरि क्षेत्र (महाराष्ट्र में नासिक के पास) का जीर्णोद्धार करने का निर्णय किया गया है। इस पहाड़ी के भूतल पर एक जैन मन्दिर के खण्डहर पड़े हैं तथा पहाड़ी पर एक या दो जैन गुफाएं हैं जो कभी जैन मुनियों की तपस्थली रही होंगी। एक गुफा की एक दीवार पर पद्मासन में बैठी एक मूर्ति उकेरी हुई है, गुफा के बाहर

चट्टानों पर भी भगवान पार्श्वनाथ की दो खण्डित मूर्तियां दिखाई पड़ती हैं। **ये सभी पुरावशेष पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षित हैं।** पहाड़ी पर सनातनी देवी-देवताओं के मन्दिर हैं तथा सबसे ऊपर अंजना माता का मन्दिर है जहां प्रतिवर्ष आदिवासियों का भारी मेला लगता है। पहाड़ी पर सर्वत्र सनातनी बाबाओं व आदिवासियों का अधिकार है।

श्री सेठी जी की प्रेरणा से इस क्षेत्र के जीर्णोद्धार-विकास के लिए नासिक के कुछ उत्साही युवकों ने एक समिति का गठन कर लिया है जो क्षेत्र पर कोई छोटी बड़ी जमीन को खरीद कर उस पर दि० जैन तीर्थ का जीर्णोद्धार करेगी। सेठी जी ने इस कार्य के लिये प्रारम्भिक फण्ड उपलब्ध कराने का आश्वासन भी इस समिति को दिया है।

यह तो स्पष्ट है कि पुरातत्त्व विभाग द्वारा संरक्षित होने के कारण इस स्थल पर मौजूद जैन पुरावशेषों के जीर्णोद्धार के नाम पर एक ईंट भी नहीं लगाई जा सकती। अतः जमीन खरीद कर उस पर नव निर्माण करके इस क्षेत्र का पुनरुद्धार किया जाना प्रस्तावित है। अंजनगिरि कोई तीर्थंकर-कल्याणक क्षेत्र या सिद्ध क्षेत्र या जैन संस्कृति के इतिहास से जुड़ा कोई महत्वपूर्ण स्थल नहीं प्रतीत होता। हां, कुछ जैन मुनियों की कभी साधना स्थली रही हो सकती है।

हाल ही में हमारे कतिपय आचार्यों एवं आर्यिका माताओं की अनुकम्पा से व सीधे मार्गदर्शन में करोड़ों की लागत वाले कई नए तीर्थों व विशाल मन्दिरों का निर्माण हुआ है और हो रहा है। अंजनगिरि व उस जैसे कुछ और तीर्थ जिनका निर्माण/पुनरुद्धार तीर्थ संरक्षिणी महासभा के प्रयास से होगा, नए तीर्थों की इसी श्रंखला में जुड़ेंगे। उधर हमारी श्रद्धा के मूल केन्द्र, हमारी धार्मिक अस्मिता के प्रतीक चरम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी की जन्म, दीक्षा व मोक्ष कल्याणक की पावन स्थलियों—कुण्ड ग्राम-वैशाली तथा पावानगर को हम भव्य तीर्थ क्षेत्रों के रूप में विकसित

अब तक नहीं कर पाए हैं। भगवान नेमिनाथ के तप-ज्ञान-मोक्ष कल्याणकों से पवित्र हुए गिरनार पर्वत पर आज जैनेतर समाज का पूरा कब्जा है। यद्यपि आचार्य निर्मल सागर महाराज बरसों से पर्वत की तलहटी में ससंघ आसन जमाए बैठे हैं, हमें पर्वत पर भली भांति पूजा-अर्चना करने का भी अधिकार नहीं है।

क्या ही अच्छा होता यदि श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन (तीर्थ संरक्षिणी) महासभा इन तीर्थ क्षेत्रों पर अपना ध्यान केन्द्रित करती तथा अपनी धन-जन शक्ति का सदुपयोग श्री गिरनार पर्वत पर दिगम्बर जैन समाज का अधिकार प्राप्त कराने में तथा वैशाली व पावानगर को जैन धर्म के गौरव के अनुरूप भव्यतम तीर्थ क्षत्रों के रूप में विकसित करने में लगाती !

गोलाकोट मूर्ति तस्करी कांड

गत २४/२५ अप्रैल की रात्रि में मध्य प्रदेश के गोलाकोट (पचराई) क्षेत्र से अज्ञात तस्कर ४६ तीर्थंकर प्रतिमाओं के सर काट कर ले गये और अब इस क्षेत्र पर मूलनायक आदिनाथ भगवान सहित केवल तीन प्रतिमाएं ही अखण्डित बची हैं। ये सभी पाषाण प्रतिमाएं साढ़े चार फुट से पांच फुट ऊंची, बडी मनोज्ञ थी तथा १०वीं शताब्दी की प्रतिष्ठित बताई जाती हैं। क्षेत्र पर पहले से ही खण्डित प्रतिमायें बड़ी संख्या में पड़ी हुई हैं। मूर्ति तस्करी की यह इस शताब्दि की सबसे बड़ी घटना बताई जाती है।

इस दुखद घटना की खबर फैलते ही देश भर की जैन समाज में भारी रोष व उत्तेजना व्याप्त हो गई। जगह-जगह रैलियां निकाली गयीं, सामूहिक उपवास, प्रदर्शन तथा विरोध सभायें की गयीं और राजनेताओं व अधिकारियों को ज्ञापन देकर अपराधियों को शीघ्र पकड़ने तथा उन्हें कठोर दण्ड देने की मांग की गई। दिगम्बर जैन समाज की सभी अखिल भारतीय संस्थाओं—महासमिति, महासभा, परिषद व भा० दि० जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी—के शीर्ष नेताओं ने एक संयुक्त अपील निकाल कर पूरे देश की समाज से इस कुकृत्य की भर्त्सना करने का आह्वान किया तथा समाज के प्राय:

सभी छोटे बड़े नेताओं ने इसके विरोध में वक्तव्य जारी किये, संस्थाओं ने प्रस्ताव पास किये और सब ने इस प्रकार अपने धार्मिक उत्तरदायित्व की औपचारिकता पूरी की। पर क्या इतने भर से मूर्ति-तस्करी की ऐसी घटनाओं की रोक-थाम सम्भव हो सकेगी ? यह विचारणीय है।

घटना को हुए तीन महीने हो गये पर पुलिस अभी तक अपराधियों का कोई सुराग पाने में सफल नहीं हुई है। समाज नेताओं की मांग पर जांच अब सी० बी० आई० को सौंप दी गई है। मूर्ति तस्करों को पकड़े जाने की सम्भावना दिन-प्रति-दिन क्षीण ही होती जा रही है। पर यदि मूर्ति-तस्कर अन्ततः पकड़े भी गये और न्यायालय द्वारा दण्डित भी कर दिये गये तो क्या इतने से ही मन्दिरों से मूर्तियों की चोरी की रोक-थाम हो जाएगी ? यह विचार करने योग्य है।

इस विषय पर समाज की पत्र-पत्रिकाओं में कुछ सुझाव भी प्रकाशित हुए हैं। एक वरिष्ठ इंजीनियर ने सुझाव दिया है कि मन्दिरों में जहां कहीं रत्नों की प्रतिमाएं प्रतिष्ठित हैं, उन्हें वर्तमान वेदियों से हटाकर विशेष रूप से निर्मित कराये गये डबल लॉक वाले स्टील के सेफों में रखा जाय जिसमें सामने की ओर स्टील की मजबूत छड़ियां पास-पास लगी हों ताकि उनके बीच से ही भक्त जन प्रतिमा जी के दर्शन कर सकें। तथा, जहां कहीं ५०० वर्षों से अधिक प्राचीन या पुरातत्त्व की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण प्रतिमाएं स्थापित हैं, उनके कक्षों की छत व दीवारों को लोहे की सरियों, सीमेंट और कंकरीट के योग से ऐसा मजबूत कर दिया जाए कि कोई चोर आसानी से सेंध न लगा सके तथा उन कक्षों के प्रवेश द्वार बैंकों के स्ट्रांग रूम जैसे मजबूत डबल लॉक वाले कर दिये जाएं, और यह सब काम किसी इंजीनियरिंग विशेषज्ञ संस्था द्वारा कराया जाए।

एक भूतपूर्व वरिष्ठ राज्य संग्रहालय अधिकारी ने सुझाव दिया है कि प्राचीन मूर्तियों की तस्करी रोकने के लिये यह अत्यावश्यक है कि मूर्ति-तस्करी-अपराध निरोधक कानून को समुचित रूप से कठोर

बनाया जावे। वर्तमान में इस अपराध की सजा बहुत कम है—केवल छह मास का कारावास तथा रु० ५,०००/- जुर्माना—जो अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में प्राचीन मूर्तियों के मूल्यों को देखते हुए तस्करों को हतोत्साहित करने में नितान्त अपर्याप्त सिद्ध हुआ है।

उपरोक्त सुझाव अपनी जगह ठीक ही हैं पर वे सीमित रूप से ही कारगर हैं। मूर्ति-तस्करी-अपराध कानून में यथोचित सुधार करना तो वैसे भी सरकार के हाथ में है और यह इस पर निर्भर करता है कि सरकार इस कानून में संशोधन की आवश्यकता की गम्भीरता को कब महसूस करती है। प्राचीन मूर्तियों की तस्करी तो बहुत अर्से से होती आ रही है पर हमारे राजनेताओं व सांसदों का (जिनमें सभी वर्गों एवं धर्मों के प्रतिनिधि मौजूद हैं) ध्यान अभी तक तो इस ओर गया नहीं। फिर, कानून तो तभी हरकत में आता है जब अपराधी पकड़े जावें पर मूर्ति चोरी के अधिकांश मामले तो बिना हल हुए ही पड़े रह जाते हैं। पहला सुझाव बहुत कुछ अंशों तक अव्यवहारिक है क्योंकि उसके अनुसार वेदी कक्षों को सुदृढ़ करना अधिकांश मन्दिर समितियों की सामर्थ्य के बाहर है। रत्न-प्रतिमाएं तो उत्तर भारत के कदाचित् ही किसी मन्दिर में देखने को मिले। अपवाद स्वरूप केवल स्फटिक मणि की प्रतिमाएं ही हैं जो कहीं-कहीं दिखाई पड़ती हैं।

हमारी समझ में गोलाकोट क्षेत्र जैसे मन्दिरों से चोरी की समस्या का पूरी तरह समाधान उपरोक्त सुझावों से सम्भव नहीं है। गोलाकोट क्षेत्र पर मन्दिर पहाड़ी के ऊपर दो परकोटों के भीतर है। वहां न तो किसी दीवार में या छत में सेंध लगाई गई न ही किसी गेट का ताला तोड़ा गया। तो भी चोर मन्दिर में घुस कर ४½' से ५' ऊंची एक हजार वर्ष प्राचीन भव्य पाषाण मूर्तियों के सर काट कर ले गए। जिस सफाई से सर काटे गए हैं उससे यह काम मशीनों द्वारा किया गया मालूम पड़ता है। पहाड़ी के ऊपर क्षेत्र पर कोई व्यक्ति नहीं रहता, न ही कोई चौकीदार क्षेत्र की पहरेदारी के लिए नियुक्त है। क्षेत्र का एकमात्र कर्मचारी पुजारी

है लेकिन वह भी न तो क्षेत्र पर रहता है, न ही पहाड़ी की तलहटी में बसे गांव डूगर में तथा कहीं दूर से ही (कदाचित् खनियाधाना से) आकर पूजा-अर्चना करता है। डूगर गांव में कोई जैन परिवार नहीं बसता। १६ कि० मी० दूर खनियाधाना में जैनियों की अच्छी समृद्ध बस्ती है। वहां एक करोड़ से अधिक की लागत से एक नवीन जिन मन्दिर का निर्माण भी कराया जा रहा है। वहीं के लोग ही मुख्यतया गोलाकोट क्षेत्र की प्रबन्ध व्यवस्था करते हैं।

चोरी की यह घटना २४/२५ अप्रैल की रात्रि में हुई बताई जाती है क्योंकि पुजारी ने २५ अप्रैल को पूजा करने के लिए क्षेत्र पर जाने पर इन सरकटी मूर्तियों को देखा और उसने तत्काल खनियाधाना जाकर क्षेत्र कमेटी के पदाधिकारियों को सूचना दी। लेकिन क्या यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि पुजारी २४ अप्रैल को भी क्षेत्र पर गया था और तब ये मूर्तियां खण्डित नहीं थीं? बताया जाता है कि कुछ समय पहले पुजारी कई दिन तक अस्वस्थता के कारण क्षेत्र पर नहीं गया था। ऐसी स्थिति में आश्चर्य तो इस बात पर होता है कि इस क्षेत्र की पुरातत्त्व की दृष्टि से बहुमूल्य इतनी बड़ी संख्या में मूर्तियां मूर्ति-तस्करों की कुदृष्टि से अब तक कैसे बची रहीं। बताया जाता है कि बुन्देलखण्ड क्षेत्र में गोलाकोट जैसे १०० के लगभग मध्य युगीन प्राचीन मन्दिर हैं जो आज घने जंगलों के बीच स्थित हैं जिनके आस-पास कोई बस्ती नहीं है या कोई जैन परिवार नहीं बसता।

गोलाकोट मूर्ति तस्करी कांड के सम्बन्ध में एक बात और ध्यान देने योग्य है। मन्दिर परिसर में पहले से ही कितनी खण्डित मूर्तियां पड़ी हुई हैं पर उनके सर खण्डित नहीं हैं। मूर्ति तस्करों ने उन खण्डित मूर्तियों के सरों को नहीं छुआ और अखण्डित मूर्तियों के ही सर काटे। इससे यह भी आशंका होती है कि कहीं इस कांड में धर्म द्वेषियों का भी हाथ न रहा हो। सही स्थिति तो अपराधियों के पकड़े जाने पर ही ज्ञात हो सकेगी।

हमारी समझ में गोलाकोट जैसे क्षेत्रों की मुख्य समस्या चौकीदारी की समुचित व्यवस्था का न होना है। जिन क्षेत्रों पर चौकीदारी की समुचित व्यवस्था करना संभव न हो वहां की मूर्तियों को (कम से कम पुरातत्त्व के महत्व की मूर्तियों को) एक केन्द्रीय जैन संग्रहालय स्थापित कर उसमें स्थानान्तरित कर दिया जाना चाहिये जहां पर उनकी सुरक्षा की पूरी व्यवस्था हो। या फिर उन्हें आसपास की जैन बहुल बस्ती के मन्दिर जी में विराजमान कर देना चाहिये। श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी को पुरातत्त्व के महत्व के ऐसे जन विहीन तीर्थ क्षेत्रों की समुचित व्यवस्था क्षेत्र प्रबन्ध कमेटियों को आवश्यकतानुसार अनुदान देकर सुनिश्चित करनी चाहिए तथा एक केन्द्रीय जैन संग्रहालय की स्थापना के लिये भी गम्भीरता पूर्वक विचार करना चाहिए। यदि नवोदित तीर्थ संरक्षिणी महासभा केवल इस काम को ही प्राथमिकता के आधार पर अपने हाथ में ले ले तो उसका गठन सार्थक हो जाएगा। हमारी समाज को समझना चाहिए कि प्राचीन मूर्तियों व सांस्कृतिक कलाकृतियों की सुरक्षा करना नए तीर्थक्षेत्रों/मन्दिरों/मूर्तियों की स्थापना से कहीं अधिक श्रेयस्कर है।

——

अभिनन्दन

जैन दर्शन एवं न्याय के प्रतिष्ठित विद्वान **डा० दरबारीलाल कोठिया** को राष्ट्रपति द्वारा २६ जनवरी, १९९८, को **राष्ट्र के सर्वश्रेष्ठ संस्कृत मनीषी** के अलंकरण तथा २० हजार रुपये प्रतिवर्ष सम्मान निधि से सम्मानित किया गया। १९ अप्रैल को बीना (म० प्र०) में उन्हें वर्ष १९८८ के **श्री गोम्मटेश्वर विद्यापीठ पुरस्कार** से भी सम्मानित किया गया।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय द्वारा १३ अप्रैल को हरिद्वार में नई दिल्ली के **साहु रमेश चन्द्र जैन** को पत्रकारिता के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए **विद्यावाचस्पति** की मानद उपाधि से अलंकृत किया गया।

नई दिल्ली में वयोवृद्ध समाजसेवी **श्री भगतराम जैन** को "आल इण्डिया नेशनल कांफ्रेंस" ने 'इन्दिरा गांधी प्रियदर्शिनी अवार्ड' से सम्मानित किया। एक अन्य समारोह में वर्ल्ड एनवायरन-मेंट कांग्रेस ने उन्हें 'इन्टरनेशनल फैलिसिटेशन अवार्ड' से सम्मानित किया।

२६ मई को वर्धमानपुरम (गाजियाबाद) ऋषभांचल ध्यानयोग केन्द्र पर अलीगढ़ के **डा० महेन्द्र सागर प्रचण्डिया** को द्वितीय ऋषभदेव पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

लखनऊ में उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान द्वारा वाराणसी के **डा० फूल चन्द्र जैन** को पुरस्कार प्रदान किया गया।

डा० निजामुद्दीन को इस्लाम और जैन धर्म के तुलनात्मक अध्ययन के लिए **अणुव्रत पुरस्कार** प्रदान किया गया।

जयपुर के भगवान महावीर कैंसर चिकित्सालय एवं अनुसंधान केन्द्र के तकनीकी समिति के अध्यक्ष व संस्थापक न्यासी **डॉ० प्रफुल्ल भागुभाई देसाई** को १९९८ के "म्यूसियो अथायडे कैन्सर पुरस्कार" से सम्मानित करने की घोषणा की गई है।

अमेरिकी बायोग्राफिकल इंस्टीट्यूट ने **आचार्य श्री महाप्रज्ञ** को उनकी विशिष्ट उपलब्धियों व समाज के लिए उनके योगदान को ध्यान में रखते हुए **मैन आफ द इयर** सम्मान प्रदान किया है।

१९९७ की केन्द्रीय सिविल सेवा परीक्षाओं में सर्वश्री विकास जैन, संजीव जैन और हेमन्त जैन चयनित घोषित हुए हैं।

उपरोक्त सभी महानुभावों का उनकी उपलब्धि के लिए **शोधादर्श** परिवार अभिनन्दन करता है। ★

समाचार विविधा

लखनऊ में महावीर जयन्ति

महावीर जयन्ति की पूर्व संध्या पर युवा जैन मिलन व जैन महिला मण्डल द्वारा जैन बाग डालीगंज में धार्मिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया। अन्य विविध कार्यक्रमों के साथ, महावीर जयन्ति पर प्रातः श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन सभा द्वारा पटेल नगर, आलमबाग, में सत्संग सभा आयोजित की गयी। सायंकाल श्री जैन धर्म प्रबंधिनी सभा के तत्वावधान में कैसरबाग में सार्वजनिक सभा हुई जिसमें श्री राजनाथ सिंह, अध्यक्ष उ० प्र० भारतीय जनता पार्टी, डॉ० एस० सी० राय, नगर प्रमुख, लखनऊ नगर निगम, श्री राय सिंह, प्रमुख सचिव, उ० प्र० शासन, और श्री अनीष कुमार जैन, महाप्रबन्धक, दूर संचार विभाग, ने भगवान महावीर को विनयांजलि अर्पित की।

दूरदर्शन लखनऊ से श्री अंजनी द्विवेदी द्वारा प्रस्तुत एक फीचर भी प्रसारित किया गया जिसकी संगीत पीठिका डा० ज्योति प्रसाद जैन के 'जय महावीर नमो' पर तरंगित थी।

१२ अप्रैल को गांधी स्मारक निधि उ० प्र० व जैन मिलन लखनऊ के संयुक्त तत्वावधान में गांधी भवन में आयोजित सभा में मुख्य अतिथि डा० अरविन्द कुमार जैन, राज्य मंत्री, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य, उ० प्र० सरकार, ने भगवान महावीर के 'अहिंसा परमो धर्मः' के सन्देश को स्पष्ट करते हुए कहा कि हर धर्म की शुरुआत

सत्य और अहिंसा के सिद्धांतों को लेकर हुई है। कार्यक्रम के आरंभ में सुश्री अनीता जैन ने महावीर प्रार्थना प्रस्तुत की। गांधी स्मारक निधि के मन्त्री श्री रघुनाथ कौल ने कहा कि समाज को महावीर और बुद्ध के सिद्धांतों पर अमल की जरूरत है। डा० शशि कान्त ने जीवन में सामंजस्य बैठाने के लिए महावीर के सन्देशों का पालन जरूरी बताया। श्री रघुवर दयाल ने महावीर के आदर्शों को सामने रखते हुए कहा कि जाति से कोई उच्च या महान नहीं बन सकता, धर्म पालन सबके लिये जरूरी है। सभा की अध्यक्षता डा० कंचन लता सब्बरवाल ने और संचालन श्री नृपेन्द्र जैन ने किया। डा० बीना बंसल, श्री राम दास सिंह, श्री राजेन्द्र सिंह बग्गा और श्री नरेश चन्द्र जैन ने भी महावीर के सत्य-अहिंसा के सिद्धांतों पर प्रकाश डाला। गीत, कविता और भजन भी प्रस्तुत किये गये।

अक्षय तृतीया पर्व

वैशाख शुक्ल ३ (२९ अप्रैल, १९९८) को सायंकाल ७.०० बजे से दिगम्बर जैन मन्दिर, इन्दिरा नगर, लखनऊ में उपाध्याय रत्न विद्यासागर महाराज के सानिध्य में प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव को लम्बे उपवास के उपरान्त उनके पौत्र हस्तिनापुर नरेश श्रेयांस द्वारा इक्षुरस का आहार दिये जाने की स्मृति में अक्षय दान की महिमा वाला यह पर्व आरती, भजन एवं नृत्य द्वारा मनाया गया। सभा में मंगलाचरण श्रीमती प्रेमलता जैन ने किया और इस पर्व की महत्ता विषयक उपाध्याय श्री के आलेख का वाचन श्री रोहित कुमार जैन ने किया। दीप प्रज्वलन कर भगवान ऋषभदेव के चित्र का अनावरण किया गया। श्री धीरज कुमार जैन ने भगवान ऋषभदेव से सम्बन्धित धार्मिक प्रश्न मंच का संयोजन किया जिसमें आबाल वृद्ध स्त्री-पुरुषों ने भाग लिया और विजेताओं को पुरस्कार वितरित किये गये। इस अवसर पर उपाध्याय श्री, जो सुकवि भी हैं, के काव्य संकलन 'आस्था का दीप' का विमोचन श्री सुरेश चन्द्र जैन ने किया। तदनन्तर श्री रमा कान्त जैन के संयोजन में काव्य गोष्ठी हुई जिसमें स्व० कविवर पुष्पेन्दु और उपाध्याय श्री की

रचनाओं के पाठ के साथ-साथ कु० वाणी जैन, श्री रोहित कुमार जैन और श्री रमा कान्त जैन ने अपनी रचनाओं का पाठ किया। मन्दिर के मन्त्री श्री मगन लाल जैन ने सभी समागत के प्रति आभार व्यक्त किया।

भारतीय जैन मिलन का स्थापना दिवस

देहरादून में भारतीय जैन मिलन का ३३वां स्थापना दिवस समारोह सम्पन्न हुआ जिसमें संस्थापक सदस्य और पूर्व पदाधिकारी के रूप में लखनऊ के श्री राजेन्द्र कुमार जैन और श्री नरेश चन्द्र जैन को सम्मानित किया गया।

अखिल विश्व जैन मिशन

श्री महावीर जी में सम्पन्न अधिवेशन में अखिल विश्व जैन मिशन के अध्यक्ष श्री राजेन्द्र कुमार ठोलिया (जयपुर), प्रधान संचालक श्री निर्मल सेनानी (सिरोंज) और कोषाध्यक्ष श्री सुरेश पाटनी (ग्वालियर) निर्वाचित हुए।

मालवा की जैन कला पर संगोष्ठी

मध्य प्रदेश पुरातत्त्व अभिलेखागार एवं संग्रहालय के तत्वावधान में शासकीय संग्रहालय, देवास, में २१-२२ मार्च को 'मालवा की जैन कला' पर एक शोध संगोष्ठी सम्पन्न हुई। इसमें २७ शोध पत्र पढ़े गये। देवास की डा० (श्रीमती) भारती श्रोती इसकी संयोजक थी।

श्रावकाचार संगोष्ठी

११-१२ अप्रैल को ब्र० संदीप जैन 'सरल' के संयोजन में अशोक नगर (म० प्र०) में श्रावकाचार पर संगोष्ठी ४ सत्रों में सम्पन्न हुई जिसमें गंज बसौदा से प्रा० पं० लाल चन्द जी 'राकेश' एवं डॉ० आराधना जैन, भोपाल से डॉ० रतन चन्द जी, बीना से प्रा० पं० निहाल चन्द, अशोक नगर से पं० अजित कुमार शास्त्री, तथा बीना के ब्र० संदीप 'सरल' ने भाग लिया और मुनि श्री सरल सागर के **श्रावक समीक्षा** एवं **निशाचर समीक्षा** पर विमर्श प्रस्तुत किया।

प्राकृत भाषा एवं साहित्य अध्ययनशाला

२४ मई से १४ जून तक प्राकृत भाषा एवं साहित्य त्रि-साप्ताहिक १०वी अखिल भारतीय ग्रीष्मकालीन अध्ययनशाला का आयोजन भोगीलाल लहेरचंद इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डोलाजी द्वारा दिल्ली में किया गया। समग्र भारत के विश्वविद्यालयों/महाविद्यालयों से ४० वरिष्ठ अध्यापकों एवं शोध छात्र-छात्राओं ने पूर्णकालिक अध्येता के रूप में इस में भाग लिया। कलकत्ता से समागत प्रो० सत्यरन्जन बनर्जी ने इस शाला के लगातार विगत दस वर्षों के वार्षिक सत्रों की प्रगति का संक्षिप्त परिचय दिया। डॉ० कपिला वात्स्यायन और भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति श्री वैंकटचलैया सम्माननीय अतिथि थे। इस अवसर पर प्राकृत एवं संस्कृत के विख्यात विद्वान **डॉ० वामन महादेव कुलकर्णी** को वर्ष १९९७ का **आचार्य हेमचन्द्र सूरि पुरस्कार** प्रदान किया गया। संस्थान के निदेशक डॉ० विमल प्रकाश जैन ने कार्यक्रम का संचालन किया और उपाध्यक्ष श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन ने धन्यवाद ज्ञापन किया।

उत्तर प्रदेश के जैन तीर्थों की सुरक्षा

११ जुलाई को जैन तीर्थ अतिशय क्षेत्र करगुवां जी में आयोजित बुन्देलखण्ड तीर्थ रक्षा सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए श्री कलराज मिश्र, पर्यटन एवं लोक निर्माण विभाग मन्त्री, ने कहा कि गोलाकोट (म० प्र०) में जैन मूर्तियों के सिर भंजन की घटना एक साजिश है। इस घटना की जांच भारत सरकार ने सी० बी० आई० को सौंप दी है तथा शीघ्र ही सिर भंजन करने वाले तत्वों को बेनकाब कर दिया जाएगा व इन तत्वों को कड़ी सजा दिलाई जायेगी। उन्होंने स्पष्ट किया कि प्रदेश में जैन तीर्थों की समुचित सुरक्षा की जायेगी व प्रदेश में बिखरे हजारों वर्ष पुरानी प्रतिमाओं के अवशेष संग्रहीत कर उन्हें संरक्षण प्रदान किया जायेगा। प्रदेश के चिकित्सा व स्वास्थ्य मन्त्री डा० अरविन्द कुमार जैन ने प्रारम्भ में ध्वजारोहण किया।

भगवान ऋषभदेव अब द्वारपाल

अर्हत्-वचन, अप्रैल १९९८, के पृ० ६४ पर प्रकाशित रिपोर्ट से विदित हुआ कि डा० राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद, में २६ जनवरी को भगवान ऋषभदेव जैन शोध पीठ के भवन के मुख्य द्वार पर भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा की स्थापना ब्र० रवीन्द्र कुमार जैन की उपस्थिति में की गई।

धर्म प्राण श्रावकों के गढ़ मेरठ में एक उद्योगपति ने अपने भवन के प्रवेश द्वार पर भगवान महावीर की प्रतिमा स्थापित की हुई है और न तो वहां की बिरादरी की पंचायत ने और ना ही जैन मिलन या किसी अन्य संस्था ने इस पर दृष्टिपात किया। सम्भव है कि इसके लिये भी किसी गणिनी प्रमुख या आचार्य भगवान की प्रेरणा रही हो।

तीर्थंकर प्रतिमाओं का लौकिक भवनों के मुख्य द्वार पर अलंकरण के रूप में अथवा यक्षादिक की भांति द्वारपाल या द्वार-रक्षक के रूप में यह अभिनव प्रयोग इस शती के आर्यिका-मुनियों के अत्याधुनिक आगमिक ज्ञान का विस्मयकारी उदाहरण है।

पाठ्य पुस्तक पर आपत्ति

बेसिक शिक्षा परिषद की कक्षा सात की पाठ्य-पुस्तक 'भारत की महान विभूतियां' भाग-दो के तीसरे पाठ 'महावीर स्वामी' में जानकारी दी गई है कि "छठी शताब्दी ईसा पूर्व तक भारत के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में नाना प्रकार की बुराइयां उत्पन्न हो गयी थीं। समाज में भेदभाव और ऊंच-नीच की भावनाओं का बोलबाला था।...जनसाधारण ऐसे वातावरण की घुटन से छुटकारा पाने के लिए बेचैन था। इस आवश्यकता को उस समय के कुछ युग पुरुषों ने समझा और अपना सुधारकादी मत लोगों के सम्मुख रखा। इन महापुरुषों की ओर जनसमुदाय आकर्षित हुआ। कुछ समय में इन मतों ने धार्मिक आन्दोलन का रूप ले लिया। इन्हीं मतों में से एक था जैन मत। महावीर स्वामी इस मत के सर्वश्रेष्ठ प्रचारक और संस्थापक थे।"

दैनिक जागरण, दिनांक ११ जून, में प्रकाशित समाचार से विदित हुआ कि दिगम्बर जैन महासभा के प्रदेश महासचिव ने इस पर तीव्र प्रतिक्रिया जाहिर करते हुए कहा कि महावीर स्वामी को जैन धर्म का संस्थापक कहना, जैन समाज की धार्मिक भावनाओं को आहत करता है। महासंघ से जुड़े और लखनऊ विश्वविद्यालय में भाषा विज्ञान विभागाध्यक्ष डा० वी० पी० जैन ने आरोप लगाया कि भाजपा सरकार महावीर स्वामी को उत्तरवर्ती सिद्धकर किसी दूसरे धर्म के अंग के रूप में स्थापित करना चाहती है, इसे जैन समुदाय बर्दाश्त नहीं करेगा।

तथापि इस प्रकार के आक्रोश और आरोप का औचित्य नहीं प्रतीत होता क्योंकि जिस सन्दर्भ में पाठ्य पुस्तक में महावीर स्वामी का उल्लेख किया गया है वह इतिहास-सम्मत है। जैनों की पारम्परिक मान्यता के अनुसार नये तीर्थ के प्रवर्तन के पूर्व—पूर्वगत तीर्थंकरों के तीर्थ का लोप हो चुका होता है। आजकल भगवान महावीर स्वामी का तीर्थ प्रवर्तित है और आज प्रचलित जैन धर्म के प्रवर्तन का श्रेय अन्तिम व २४वें तीर्थंकर महावीर स्वामी को ही है।

दिगम्बर जैन समाज सावधान रहे

गांधी मेडिकल कालेज, भोपाल, के श्री अर्हन्तशरण जैन ने अपनी अन्तर्व्यथा निवेदित की है—उ० प्र० में बांदा के पास गुसयारी-हमीरपुर में १०-१२ मुसलमानों में किसी के पास एक या किसी के पास दो हाथी हैं। अब इन मुसलमानों ने एक संगठन बना लिया है। जो भी इनके पास हाथी तय करने जाते हैं यह बोल चाल का भद्दा व्यवहार उन श्रावकों से करते हैं। साथ ही अनाप-सनाप रेट बताकर पैसा वसूलने लगे हैं। एक स्थान के प्रतिष्ठित व्यक्ति गजरथ के लिए हाथी सेट करने गये तो हाथी वाले मुसलमानों के नये मुखिया ने श्रावकों से कहा कि अन्य समाज के लोगों को जो हाथी ५०० रुपये में देंगे वह जैन समाज को २५ हजार में देंगे। हम गजरथ में झूलकर आनन्दित होते हैं और समाज का लाखों रुपये यह लोग लेकर हिंसा का तांडव करते हैं। एक स्थान के लिये

मय खर्च के दो लाख रुपये में इन समाज के लोगों ने सौदा तय कर लिया । जहां समाज का लगभग डेढ़ लाख पानी में बहा सो बहा उस पैसे से इनका क्रूर धन्धा और बढ़ा । एक श्रावक होने के नाते मेरी दिगम्बर जैन समाज से करबद्ध प्रार्थना है कि पंचकल्याणक प्रतिष्ठा खूब धूमधाम से करें लेकिन गजरथ के स्थान पर अश्वरथ-वृषभरथ-मानवेन्द्र रथ अथवा बड़े रथों को ट्रैक्टरों से खीचकर सैकडों श्रावकों को उसमें बैठा लें । एक गजरथ के बजाय ११ बड़े रथ ट्रैक्टरों से चलायें और धर्म प्रभावना का प्रयोजन साकार करें ।

महावीर पुरस्कार एवं लुहाड़िया पुरस्कार ९८

जैन विद्या संस्थान श्री महावीर जी के वर्ष १९९८ के 'महावीर पुरस्कार' तथा 'ब्र० पूरणचन्द रिद्धिलता लुहाड़िया साहित्य पुरस्कार' के लिये जैन धर्म, दर्शन, इतिहास, साहित्य, संस्कृति आदि से सम्बन्धित ३१ दिसम्बर, १९९४ के पश्चात् प्रकाशित पुस्तक/शोध प्रबन्ध की ४ प्रतियां ३० सितम्बर, १९९८, तक आमन्त्रित हैं । नियमावली तथा आवेदन का प्रारूप संस्थान कार्यालय, दिगम्बर जैन नसियां भट्टारक जी, सवाई राम सिह रोड, जयपुर-३०२००४ से प्राप्त किये जा सकते हैं ।

स्वयंभू पुरस्कार १९९८

अपभ्रंश साहित्य अकादमी जयपुर, के वर्ष १९९८ के 'स्वयंभू पुरस्कार' के लिये अपभ्रंश साहित्य से सम्बन्धित विषय पर हिन्दी अथवा अंग्रेजी में ३१ दिसम्बर १९९३ के बाद प्रकाशित कृतियां ३० सितम्बर, १९९८, तक आमन्त्रित है । नियमावली तथा आवेदन पत्र का प्रारूप अकादमी कार्यालय, दिगम्बर जैन नसिया भट्टारक जी, सवाई राम सिह रोड, जयपुर-३०२००४ से प्राप्तव्य हैं ।

पत्राचार जैन धर्म दर्शन एवं संस्कृति सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी द्वारा संचालित जैन विद्या संस्थान भट्टारक जी की नसियाँ, सवाई राम सिह रोड जयपुर-४ द्वारा संचालित यह पाठ्यक्रम भारत स्थित उन अध्ययनार्थियों के लिये होगा जिन्होने किसी भी विश्वविद्यालय से

स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण की हो। माध्यम हिन्दी भाषा होगा। पाठ्यक्रम का सत्र १ जनवरी, १९९९ से ३१ दिसम्बर, १९९९ तक रहेगा। निर्धारित आवेदन पत्र जयपुर कार्यालय से प्राप्त किये जा सकते हैं।

पत्राचार अपभ्रंश सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम

१ जनवरी, १९९९ से आरम्भ किया जा रहा है। नियमावली एवं आवेदन पत्र १५-९-९८ तक अपभ्रंश साहित्य अकादमी कार्यालय, दिगम्बर जैन नसिया भट्टारक जी, सवाई, राम सिंह रोड, जयपुर-३०२००४ से प्राप्त किये जा सकते हैं। हिन्दी एवं अन्य भाषाओं/विषयों के प्राध्यापक, अपभ्रंश-शोधार्थी एवं संस्थानों में कार्यरत विद्वान इसमें सम्मिलित हो सकेंगे।

जैन प्रकाशन सूची

श्री महावीर सांगलीकर द्वारा सम्पादित इस सूची में हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड, बंगला, तमिल, अंग्रेजी आदि विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित होने वाली ३७५ जैन पत्र-पत्रिकाओं के पते दिये गये हैं। सूची को मेलिंग लिस्ट (प्रेषण सूची) के रूप में छापा गया है। यह सूची जैन फ्रेण्डस, २०१ मुम्बई-पुणे मार्ग, चिंचवड पूर्व, पुणे-४११०१९ से प्राप्त की जा सकती है।

पूज्य क्षुल्लक श्री गणेश प्रसाद जी वर्णी

पू० वर्णी जी द्वारा लिखित **मेरी जीवनगाथा** (भाग-२) श्री गणेशवर्णी दि० जैन संस्थान, नरिया, वाराणसी-२२१००५, से प्राप्त की जा सकती है।

निःशुल्क प्राप्त करें

जिनवाणी मां के अनन्य सेवक श्री महावीर प्रसाद जैन (फर्म-बिशम्भर दास महावीर प्रसाद जैन सर्राफ, १३२५, चांदनी चौक, दिल्ली-११०००६) ने निम्नलिखित तीन ग्रन्थों के २००० सेट जैन मन्दिरों को भेंट करने का निश्चय किया है—(१) भगवत् कुन्द-कुन्दाचार्य कृत **समय प्राभृत** (श्री अमृतचन्द्राचार्य कृत संस्कृत टीका तथा पं० जयचन्द जी कृत भाषा वचनिका सहित, पृष्ठ ६८३), (२) आर्यिका विशुद्धमती जी कृत **समाधि दीपक**, तथा (३) **मांसा-**

हार मानवता पर कलंक । प्रबन्धकगण श्री मन्दिर जी के लेटर हेड पर या रबर स्टाम्प लगे पोस्टकार्ड पर आवेदन कर तथा रु० २०/- मनी आर्डर से डाक खर्च के लिये भेज कर सेट प्राप्त कर सकते हैं।

शोक संवेदन

१० अप्रैल, १९९८, को बैंगलोर में वरिष्ठ पत्रकार प्रसिद्ध लेखक, नाटककार, फिल्म निर्माता एवं होयसलवंश की जैन रानी 'पट्टमहादेवी शान्तला' के कथानक पर वृहद् उपन्यास की संरचना कर 'मूर्तिदेवी पुरस्कार' से सम्मानित ८३-वर्षीय **श्री सी० के० नागराजा राव** का देहावसान हो गया।

१ मई को भोपाल में **शोधादर्श** के हितैषी, अनेक स्थानीय एवं प्रादेशिक संस्थाओं से जुड़े, छिन्दवाड़ा निवासी, ५५-वर्षीय श्री विजय कुमार सांधेलीय का हृदयाघात से असामयिक निधन हो गया।

१४ मई को जबलपुर के निकट बांध में तैरते समय भोपाल के प्रतिभाशाली युवक श्री अमित जैन, जो वर्ष १९९७ की केन्द्रीय सिविल सेवा परीक्षा में चयनित घोषित हुए थे, का असामयिक निधन हो गया।

२ जुलाई को लखनऊ में लब्ध प्रतिष्ठ सुकवि ५६-वर्षीय श्री गौरीश नारायण श्रीवास्तव का हृदयाघात से असामयिक निधन हो गया।

३ जुलाई को नगर के ७४-वर्षीय विद्वान, कवि एवं चिकित्सक डा० विश्वनाथ याज्ञिक हमारे बीच नहीं रहे। भारतीय संस्कृति और धर्मों व दर्शनों का तुलनात्मक अध्ययन करने वाले सुचिन्तक डा० याज्ञिक जैन धर्म, दर्शन और संस्कृति को जानने-समझने में पर्याप्त अभिरुचि रखते थे।

जयपुर में २१ जुलाई को भगवान महावीर कैन्सर चिकित्सक एवं अनुसन्धान केन्द्र के संस्थापक, ६५-वर्षीय श्री विद्या विनोद काला का निधन हो गया।

उपरोक्त सभी महानुभावों के प्रति **शोधादर्श** परिवार अपनी श्रृद्धांजलि अर्पित करता है और शोक संतप्त परिजनों के प्रति अपनी हार्दिक संवेदना व्यक्त करता है।

आभार

श्री ताराचन्द जैन अग्रवाल, पचेवर, जिला टोंक (राज०) ने अपनी माता जी और पिता जी की पुनीत स्मृति में **शोधादर्श** को २०-२० रुपये प्रदान किये।

आयु० हनी जैन, सुपुत्री श्री सूर्य कान्त जैन इंजीनियर एवं सुपौत्री श्री अजित प्रसाद जैन, पारस सदन, आर्य नगर, लखनऊ के १७ अप्रैल, १९९८, को सम्पन्न विवाह के उपलक्ष में निकाले गये धर्मार्थ में से ५१ रुपये **शोधादर्श** को प्राप्त हुए।

इतिहास-मनीषी विद्यावारिधि डा० ज्योति प्रसाद जैन की १०वीं पुण्यतिथि पर उनकी पावन स्मृति में डा० शशि कान्त व श्री रमा कान्त जैन ने **शोधादर्श** को ५१ रुपये भेंट किये।

——

तीर्थंकर छात्र सहायता कोष में योगदान करें

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ० प्र०, द्वारा स्थापित एवं संचालित **तीर्थंकर छात्र सहायता कोष** के माध्यम से प्रति वर्ष कक्षा सप्तम से स्नातकोत्तर स्तर तक के जरूरतमन्द छात्र-छात्राओं को अध्ययन सहायता प्रदान की जाती है। समिति अपने अति सीमित संसाधनों से ही इस कोष को अब तक संचालित करती आई है। कुछ महानुभावों ने यह इच्छा व्यक्त की है कि वे भी इस योजना में अपना योगदान करना चाहेंगे। इन महानुभावों की इस उदात्त भावना का समिति स्वागत करती है तथा उन्हें इस कोष में योगदान करने के लिये सहर्ष आमन्त्रित करती है। आर्थिक योगदान नकद, मनी आर्डर या डिमाण्ड ड्राफ्ट द्वारा "महामन्त्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ० प्र०, पारस सदन, आर्य नगर, लखनऊ-२२६००४" को भेजने की कृपा करें।

——

पाठकों की दृष्टि में

शोधादर्श-३४ में प्रकाशित विद्वत्तापूर्ण आलेख, विशिष्ट समाचार और उनकी निर्भीक मार्मिक समीक्षा पढ़कर अमन्द आनन्द का अनुभव होता है।

—पं० अमृत लाल जैन शास्त्री, वाराणसी

परम श्रद्धेय अजित प्रसाद जी, डा० शशि कान्त जी, श्री रमा कान्त जी (सम्पादक त्रय) सचमुच नि:स्वार्थ भाव से साहित्य सेवा कर रहे हैं जो सर्वथा प्रशंसनीय है। प्राय: सटीक, सार्थक लेख, टिप्पणियां, सामयिक सन्दर्भ में विचारणीय प्रेरणास्पद परिचर्चा (चाहे वह साधु समाज की हो, गृहस्थ की हो, त्यागी-व्रती वर्ग की हो) आप लोग जिस सूझ-बूझ व शास्त्र/पुराण सम्मत ढंग से देते हैं वह अकाट्य बन कर रह जाती है। **शोधादर्श** का कवरेज सार्वभौम दीखता है तो कहीं-कहीं हमें सोचने को बाध्य करता है कि प्रामाणिकता से परिपूर्ण इसके स्थायी स्तम्भ (यथा विचार बिन्दु, साहित्य सत्कार, समाचार विमर्श, जिज्ञासा, चिन्तन कण, शोक संवेदन आदि) जैसे शीर्षक और सम्पादकीय लेखन की बेबाक शैली, अहर्निश चिन्तन-मनन और मन्थन का सुपरिणाम ही है।

—श्री मोतीलाल जैन 'विजय' एवं श्रीमती विमला जैन, कटनी

जैन धर्म और संस्कृति से सम्बन्धित भारत की यह एक मात्र पत्रिका है, जो इतने स्पष्ट विचार प्रकट करने का साहस कर पाती है। इसके लिए निश्चित रूप से आप सभी धन्यवाद के पात्र हैं। आप लोगों के सत्प्रयास से यह शोध पत्रिका राष्ट्रीय स्तर की एक प्रमुख जैन पत्रिका का स्थान ले चुकी है।

—डा० विनोद कुमार तिवारी, रोसड़ा

लोकमान्य सन्तों में यद्यपि संयमजन्य कोई छिद्र नहीं है, पर प्रतिष्ठा का मोह, अपनी स्थापिति के प्रति विमोह स्थित है, जो उन सन्त जनों की परिधि से सामान्य जनों को परे करता है। यदि वे निकट भी हैं तो उन्हें केवल जयकारों की युक्ति से ही जोड़ा जाता

है। उन्हें श्रद्धावान ही बने रहने या आस्था को गरिमा से व्यक्त करने की ही सीख दी जाती है।

कभी-कभी यह भी लगता है कि वे संत जन भी गणमान्यों के द्वारा इस्तेमाल हो जाते हैं। वे अनेक स्थलों पर केवल नाम के लिये होते हैं। उनकी प्रसिद्धि का जो आभामण्डल होता है, उसे कई फितरती जन ओढ़ लेते हैं और वे ही अपनी कार्य-प्रणाली से अनेक ऐसी भव्यताएं घटित करते हैं जिनके प्रलोभन में सन्तजन आ जाते हैं।

मूर्ति पूजा का निषेध करने वाली परम्परा में संत रहे एक गृहस्थ ने एक बार कहा था कि इस से तो मूर्ति को पूजना ही बेहतर है। कोई भी कितना भी पहुंचा हुआ सन्त हो, कहीं न कहीं उसमें कोई न कोई न्यूनता भी होती ही है।

धर्म को प्रदर्शन की परिधि में लाना क्या लाजमी है? कोई कहता है वातावरण को बनाने के लिए यह जरूरी है तो कोई उसमें संलग्न होकर भी बुराई करता है। कोई उसे समय की मांग भी कहता है, परिस्थितियों की मजबूरी भी कहता है।

वास्तव में यह पशोपेश की स्थिति है। कई प्रक्रियाएं चाहकर चलती हैं तो कई अनचाहे भी चलानी होती हैं। आदर्श अपनी जगह पूरी उज्जवलता से कायम हैं किन्तु व्यवहार में आदर्श के प्रतिमानों पर दृढ़ रहना सबके लिए सम्भव नहीं है। आदर्श के परिपालन अब भी होते हैं पर वे बहुत सीमित हैं और समझौते करते चले जाने की स्थितियां भले स्वीकृतियां न हों पर वे ही आज के धर्म की आकृतियां हैं।

—श्री राजेन्द्र नगावत, इन्दौर

शोधादर्श का अंक प्राप्त होने पर आद्यंत पढ़ना प्रकृति बन गई है। मुनि, मठाधीशों एवं (स्वयं को महाविद्वान समझने वाले) कुछ विद्वानों द्वारा किये गए आगम विरुद्ध एवं निन्दनीय आचरण को उद्धरित कर, उन पर भावनात्मक प्रहार करना **शोधादर्श** जैसी सशक्त पत्रिकाओं के लिए ही सम्भव है। एतदर्थ आप सभी बधाई के पात्र हैं।

—श्री गुलाब चन्द्र जैन, विदिशा

पं० पदम चन्द शास्त्री तक को कहना पड़ा है कि ऐसी स्पष्ट भावोत्पादक पत्रिका आपके अतिरिक्त कहीं प्रकाशित नहीं होती है।

–श्री सुखमाल चन्द जैन, नई दिल्ली

सम्पादकीय सटीक, सारभूत तथ्यों को उजागर करने वाली है। वर्तमान के चहुं ओर शिथिलाचार के व्याप्त वातावरण में **शोधादर्श** एक दीपक की भांति टिमटिमा कर अपना यथार्थ ज्ञान प्रकाश प्रसारित कर तत्त्व जिज्ञासुओं का यर्थाथ मार्ग प्रशस्त कर रहा है।

–ब्र० संदीप 'सरल', बीना

सम्पादकीय में भट्टारकों की गद्दियों का स्पष्ट कथन है। मेरा भी विशेष अनुभव है कि स्वस्ति श्री चारूकीर्ति जी, श्रवणबेल-गोला, को छोड़कर अन्य भट्टारक अपने में ही मगन हैं। धर्म प्रचार या तीर्थ विकास में उनका मनोयोग नहीं है। मूडबिद्री के भट्टारक दिवंगत हो गये और बहुत बड़े अनाचार का अन्त हो गया। श्रेष्ठि वर्ग पर इन लोगों का विशेष प्रभाव रहता है और इस प्रकार घिनौना बातावरण तीर्थों की महिमा को दूषित करता रहता है। Jainism लेख से बहुत महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई। आपकी पत्रिका शोध का आदर्श सच्चे अर्थों में प्रस्तुत करती है।

–डा० जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल, आगरा

चिन्तन कण के अन्तर्गत 'लोक-रचना, पंचमेरू, नरक भूमियों और स्वर्गों की अवधारणा' आलेख ने बहुत प्रभावित किया। इसमें नैतिकता-अनैतिकता तथा मन के भावों-परिणामों के आरोह-अवरोह क्रम के अनुसार प्राप्त सुख-दुख द्वारा स्वर्ग-नरक के स्तर की कल्पना निश्चित ही पाठकों को वर्तमान में स्वयं के निर्माण में लाभकारी सिद्ध होगी। श्री प्रकाश चन्द्र जैन 'दास' जी की गीतिका 'सोचो, कैसे निर्मल मन होगा' 'मेरी भावना' की तरह हर क्षण गुनगुनाकर मन को प्रेरणा देने वाली है। जिज्ञासा और समाधान ने बहुत कुछ सोचने-समझने और पढ़ने को उद्वेलित किया तथा अनेक जिज्ञासाओं को पैदा किया।

–डा० (श्रीमती) मुन्नी पुष्पा सिंघई, वाराणसी

आ० अजित प्रसाद जी के एक-एक शब्द को सबसे पहले पढ़ता हूँ। तीर्थक्षेत्रों पर भट्टारक पीठों की चर्चा हास्यास्पद लगी। शेष शिथिलाचार पर जो कुछ लिखा गया है, वह प्रशंसनीय है। **शोधादर्श** में श्रीमती वासंती शहा के विचार विन्दु ने तो एक क्रांतिकारी कदम उठाया है। वह धन्यवाद व प्रशंसा की पात्र हैं।

—श्री कुन्दन लाल जैन, दिल्ली

श्री सुखमाल चन्द जैन का लेख पढ़ कर बहुत आनन्द आया।

—श्रीमती राजदुलारी जैन, कानपुर

डा० शशि कान्त जी तथा आपके सम्पादकत्व में प्रकाशित **शोधादर्श** अपनी शोध परक तथा विचार प्रधान सामग्री से अलंकृत हो सर्वदा पठनीय एवं मननीय बनता है। हिंसा भावना से आक्रांत मानव के मानसिक प्रदूषण के विनाशार्थ अहिंसा का सन्देश सामयिक है। मानवीय नैतिकता का प्रसार-प्रचार होने से ही प्रकृति का दोहन समाप्त होगा, सामाजिक शोषण की इति होगी।

—डा० विश्वनाथ याज्ञिक, लखनऊ

इस पत्रिका ने मुझे इतना प्रभावित किया कि इसे बिना पढ़े रहा नहीं जाता। कवि पुंङ्गव मल्लिषेण के सम्बन्ध में श्री रमा कान्त जैन के गवेषणात्मक लेख से प्रारम्भ इस अंक में सबसे महत्वपूर्ण लेख 'जैनिज्म' है, जिसमें उन परिस्थितियों का उल्लेख है जिनमें वर्णाश्रम धर्म से त्रस्त समाज में तीर्थंकर महावीर के प्रादुर्भाव, उनके जीवन-दर्शन, शिक्षा एवं तात्विक ज्ञान से समाज में एक नवीन विचार धारा का जन्म हुआ। इस लेख में हिन्दू धर्म, बौद्ध धर्म तथा जैन धर्म का तुलनात्मक विवेचन भी हुआ है। आचार्य शिव चन्द्र शर्मा का लेख 'विकासवाद' भी तर्कपूर्ण है। सम्पादकीय में भट्टारक परम्परा पर जम कर प्रहार किया गया है, जो वर्तमान युग में बढ़ रही महन्तई के लिये एक जबरदस्त चुनौती है। संपादकों को इसके लिए साधुवाद।

—डा० परमानन्द जड़िया, लखनऊ

'भट्टारक पीठ की स्थापना' का आपका लेख रोचक लगा। जो मुनिगण विलासपूर्ण हो गये हैं तथा अपने मठ स्थापित कर रहे

हैं उन्हीं की धारणा भट्टारक पद की पुनः मान्यता समाज से स्वीकार कराकर ऐश्वर्यपूर्ण जीवन व्यतीत करने की कल्पना मात्र है। श्रीमती वासंती शहा का लेख 'मुनि व धनी का मोर्चा' व श्री सुखमाल चन्द जैन का लेख 'लोक रचना की अवधारणा' विचार परक हैं, तथा युक्ति संगत लगे।

—श्री हुकम चन्द जैन, मेरठ

Essence of Jainism, 'जैन तत्त्व विचार में जीव तत्त्व' आदि लेख पठनीय एवं अत्यन्त सारगर्भित हैं। राज्य संग्रहालय, लखनऊ में जैन कला वीथिका की समुचित व्यवस्था किया जाना सराहनीय प्रयास है।

—डा० सन्तोष कुमार वाजपेई, सागर

इस अंक में डा० ज्योति प्रसाद जैन का लेख Essence of Jainism तथा NCERT की पुस्तक Ancient India के लिए भेजा गया आपका Write-up **शोधादर्श** के मुझ जैसे सामान्य पाठकों को जैनमत समझने के लिये अत्यन्त उपयोगी और ज्ञानवर्द्धक सामग्री प्रदान करते हैं। श्रीमती वासंती शहा का विचारोत्तेजक लेख 'सत्यान्नास्ति परो धर्मः : मुनि व धनी का मोर्चा' न केवल जनसाधारण को अपितु जैन धर्मावलम्बी श्रद्धालु जनों को भी गम्भीर चिन्तन के लिए विवश करता है।

'जिज्ञासा : समाधान' स्तम्भ के अन्तर्गत जस्टिस एम० एल० जैन ने शोध के एक नए विषय की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। जैन तीर्थंकरों के समान गोरखपन्थी सिद्धों के नाम के अन्त में भी 'नाथ' मिलता है जैसे आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ, धर्मनाथ आदि-आदि। सम्भवतः नाथ-नामान्त्य के कारण ही गोरखपन्थ को 'नाथ सम्प्रदाय' भी कहा जाता है। जस्टिस जैन ने सर्वाधिक जिज्ञासा जैन तीर्थंकरों और गोरखपन्थी सिद्धों के कुछ समान नामों के आधार पर उत्पन्न कर दी है। परन्तु जहाँ तक मत्स्येन्द्रनाथ के पुत्रों (नेमिनाथ व पारसनाथ) द्वारा जैन धर्म चलाने की बात है वह इसलिए स्वीकार्य नहीं की जा सकती है क्योंकि दोनों के उद्भव में हजारों वर्षों का अन्तराल है।

पाठकों के माध्यम से सर्वसाधारण में धार्मिक जागरूकता लाने एवं शोधपरक नई-नई सामग्री प्रस्तुत करने में **शोधादर्श** एक उल्लेखनीय और सराहनीय सामाजिक भूमिका अदा कर रही है और इसके लिए आप समेत सम्पूर्ण सम्पादक मण्डल को साधुवाद ।

–डा० ए० एल० श्रीवास्तव, भिलाई

मेरे मत से जस्टिस जी सहमत हैं ऐसा अनुमान मैं कर सकता हूँ । वचनीय, रोचक और बोधप्रद इस अंक के लिये आपश्री को धन्यवाद और आगे आशा है कि इससे भी अधिक ज्ञानपूर्ण माहिती-पूर्ण लेख विद्वानों से प्राप्त कर हमे देंगे ।

–श्री शांतिलाल के० शहा, सांगली

अंक की सम्पादकीय गम्भीरता से विषय को समझने को बाध्य करती है । Jainism article महावीर जी व जैन धर्म के सम्बन्ध को बड़ी गहराई से हमारे सामने रखता है । इसके साथ जैन वाङ्मय में अनुयोग लेख जैन मान्यताओं की दृष्टि से 'ज्ञान' की वास्तविकता जन साधारण के लिये उपयोगी बनाता है । विचार बिन्दु में श्रीमती शहा ने बड़े साहस के साथ सत्यता को सामने रखा है । चिन्तन कण में दिये गये विभिन्न विषयों पर गम्भीरता से विचार करने की आवश्यकता है ।

जिज्ञासा-समाधान अध्याय कई नए आयाम खोलता है । 'सत्य की खोज में' जहां मन रम जाए वह ही ग्राह्य योग्य होना चाहिए । 'आइए प्रण करें'—आधुनिक युग की सच्चाई दर्शाती प्रेरणास्पद कविता है । 'सोचो, कैसे निर्मल मन होगा'—सत्य परक रचना है । दोनों बहुत अच्छी बन पड़ी है ।

–श्री मदन मोहन वर्मा, ग्वालियर

शोधादर्श नियमित मिल रहा है । बहुत उपयोगी है । बधाई!

–प्रो० रमेश चन्द्र शर्मा, वाराणसी

आपके द्वारा इतने महत्वपूर्ण व ऐतिहासिक खोजपूर्ण सामग्री सहित पत्र देखकर चकित रह गया । जब तक पूरा अंक पढ़ नहीं लिया चैन नहीं पड़ी । अंक बहुत महत्वपूर्ण एवं पठन योग्य है ।

श्री निर्मल सेनानी, सिरोंज

प० पू० सुधीर सागर महाराज के संघस्थ आ० श्री संजय भैया ने **शोधादर्श** पत्रिका की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है।

–श्री पद्म कुमार जैन, अजमेर

नूतन किन्तु प्रेरक कल्पनायें अनुभव चिन्तन के साथ प्रकट की गई हैं। मेरू, देवलोक और नरक की बोधप्रद कल्पनायें विद्वत्तापूर्ण हैं।

–श्री तिलोक मुनि जी, राजकोट

शोधादर्श ३४ प्राप्त हुआ। पढ़ने मनन करने पर इतनी अधिक जिज्ञासा उठी है कि बाकी के ३३ अंक हमसे पढ़ने को क्यों छूट गए। कितनी अच्छी विषय सामग्री आप प्रकाशित करते हैं। श्री सुखमाल चन्द जी का नरक भूमियों-स्वर्ग भूमियों वाला लेख बहुत रुचिकर लगा।

–श्री किरण कुमार जैन, सारणी (जि० बैतूल)

शोधादर्श के अंक बहुत अच्छे रहते हैं। लेख सारगर्भित और शोधपूर्ण रहते हैं।

–प्रा० डा० सौ० हेमलता जोहरापुरकर, काटोल (जि० नागपुर)

शोधादर्श में निर्भीकता और सही चिन्तन पर साधुवाद। **शोधादर्श** का प्रत्येक आलेख पूरा पढ़े बिना छोड़ना आत्म ग्लानि देता है। श्री जी आपकी लेखनी को सटीक रूप में लिखने की शक्ति दें, अन्यथा आजकल ज्यादातर पत्रिकाएं चाटुकारिता से भरी रहती हैं। भट्टारक परम्परा पर विचार सटीक हैं। मूडबिद्री के मठाधीश ताड़पत्रों पर अंकित प्राचीनतम ग्रन्थों के दर्शन कराने के रुपये लेते हैं, और श्री मांग रखते हैं। दक्षिण में गुरूकुलों की भी व्यवस्था ठीक नहीं हैं। श्रीमती वासंती शहा ने अपने विचार विन्दु में जिक्र किया है।

–श्री सुन्दर सिंह जैन, दिल्ली

आपकी पत्रिका **शोधादर्श** पढ़ी। लगभग सभी परिचित विद्वान हैं। रचनायें मौलिक एवं चिन्तनशील हैं। आप बधाई के पात्र हैं।

–श्री प्रकाश पालावत, अहमदाबाद

ज्योति जैन की अजित यह, रमा रूप अभिराम.
शीतलता शशि की यहां, शोधादर्श सुधाम

स्तंभ रुचिर इसके मजबूत बड़े
झंझावातों में जो रहें अड़े
सत्कार यहां पाठक - लेखक का
अभिनन्दन संवेदन जन - जन का
शिव चिन्तन करें विद्वान विचार
सुधी और भव्य जनों का उपकार
मिलता समाधान जिज्ञासा का
सम्पादन सम्यक् अभिलाषा का
समाचार समीक्षा में चूक नहीं
लखते लखते मिटती भूख नहीं
परिचय में सबको शामिल करता
चर्चा सोच यहां कामिल करता
आलिम फाजिल की महफिल सजती
शमा इल्म की सदैव ही जलती
लखनऊ बड़ा शहर नवाबों का
वहां यह महल सवाल जवाबों का
है ध्वनि महावीर की वाणी की
पीर जो लेय हर हर प्राणी की
धन्य धन्य शुभ सौध शोधादर्श
रहो नित नूतन सौ वर्ष सहर्ष

—जस्टिस श्री एम० एल० जैन, नई दिल्ली

——

पंडिता चन्दाबाई जी के पत्र की अनुकृति

(देखिए पृ० १४९)

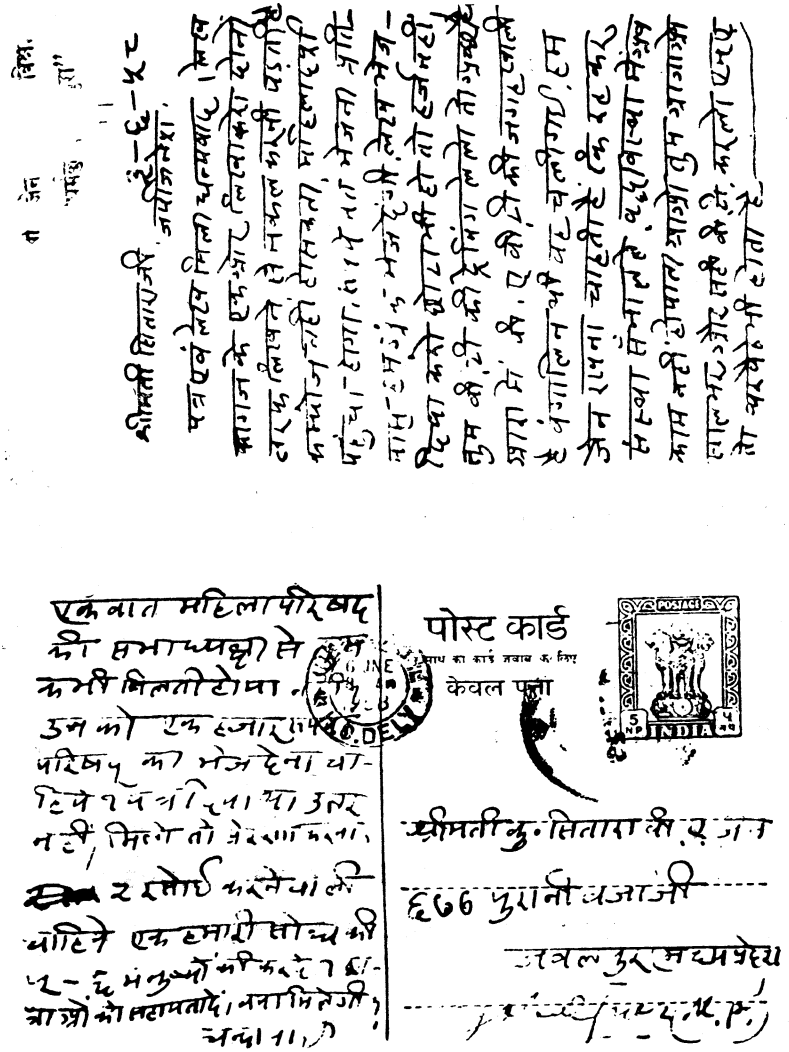

इस अंक के लेखक

श्री अजित प्रसाद जैन : पारस सदन, आर्य नगर, लखनऊ-२२६००४

डा० अमर पाल सिंह : ए १/८, सेक्टर-बी, बसंत विहार, अलीगंज, लखनऊ-२२६०२४

श्री अंशु जैन 'अमर' : ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-४

श्री कैलाश भूषण जिन्दल : अजिताश्रम, गणेशगंज, लखनऊ-१८

श्री गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी : हमीरपुर हाउस, ९, विजय नगर, नाका हिन्डोला, लखनऊ-४

श्री गुलाब चन्द्र जैन : राजकमल स्टोर्स, सावरकर पथ, विदिशा-४६४००१

डा० ज्योति प्रसाद जैन (स्व०) : विश्व-विश्रुत विद्वान

श्री जौहरीमल जैन : बंगला नं० १, रिवर बैंक कालोनी, लखनऊ-१८

श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन : १०४, नई बस्ती, फिरोजाबाद-२८३२०३

श्री नलिन कान्त जैन : ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-४

श्री रमा कान्त जैन : ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-४

श्रीमती सितारा देवी जैन : २८८/६५, आर्य नगर, लखनऊ-४

श्री शांतिलाल के० शहा : कुसुम बंगला, राजवाड़ा, गणेश दुर्ग, सांगली-४१६४१६

कु० हेमा सक्सेना : ती० म० स्मृति केन्द्र शोध पुस्तकालय, मुन्नेलाल कागजी धर्मशाला, चारबाग, लखनऊ-४

श्री ज्ञान चन्द जैन : शिखर भवन, टाट पट्टी, यहियागंज, लखनऊ-२२६००३

डा० शशि कान्त : ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-२२६००४

—

આ[illegible]
કે[illegible]
ગ્રા[illegible]
કો[illegible]